दशकंधर

(एक जीवन-गाथा)

लेखक
श्री शान्तिस्वरूप गौड़

विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा.

प्रकाशक
विनोद पुस्तक मन्दिर
हास्पिटल रोड
आगरा

प्रथम संस्करण
मूल्य ३)
१९४९

मुद्रक—
कृपाशङ्कर शर्मा एम० ए०,
निराला प्रेस आगरा

परिचय

रावण का असली नाम दशकंधर था। 'रावण' उपाधि तो उसे शिवजी से अनायास ही प्राप्त हो गई थी। 'दशकंधर' नामक इस पुस्तक में श्री शान्तिस्वरूप गौड़ ने इसी रावण की विस्तृत जीवनी दी है। रावण की वंश परम्परा, उसका बल-विक्रम, समर-कौशल, विजय-वृत्तान्त, स्वभाव-सिद्धान्त इत्यादि अनेक बातों का बड़ी ही सुन्दरता से वर्णन किया है। रावण के सम्बन्ध में प्रायः सभी ज्ञातव्य बातों का इस पुस्तक में समावेश है। पुस्तक पढ़ने से जहाँ लेखक की सुन्दर, सरल, स्वाभाविक और आकर्षक शैली के दर्शन होते हैं—वहाँ रावण के सम्बन्ध की गुप्त से गुप्त बातें भी विदित हो जाती हैं। गौड़जी की विचार-शृंखला तथा पुस्तक के घटना-क्रम का आधार पौराणिक आख्यान और वाल्मीकि रामायणादि प्राचीन काव्य-ग्रन्थ हैं। रावण कौन था, उसकी वंश-परम्परा कितनी उच्च थी—इत्यादि बातों का सम्भव-ज्ञान इस पुस्तक से अनायास ही हो जाता है। हम समझते हैं, हिन्दी-जगत् में 'दशकंधर' अपने ढंग की पहली पुस्तक है। और गौड़जी ने रावण-सम्बन्धी सभी बातें एकत्र करके सचमुच प्रशंसनीय कार्य किया है। राम-चरित पढ़ने वालों के लिये यह 'दशकंधर-कथा' भी मनोरंजन और ज्ञान-वर्द्धन की सामग्री हुये बिना न रह सकेगी। ऐसी आवश्यक पुस्तक इतने सुन्दर ढंग से लिखने के कारण हम बंधुवर गौड़ जी को बधाई देते हैं। आशा है, उनकी लिखी अन्य पुस्तकों की भाँति इसका भी समुचित आदर होगा।

आगरा,
गुरु-पूर्णिमा,
२००६

हरिशंकर शर्मा

दो शब्द

प्रस्तुत पुस्तक 'दशकंधर' मेरी उन शंकाओं का समाधान है, जो दशरथनन्दन राम-भक्त कवि तुलसीदास द्वारा रचित् रामायण को पढ़कर मन में अनायास ही जन्म लेती हैं। आदि कवि बाल्मीकि के 'दशग्रीव' के चित्र को मैंने अपने शब्दों में ज्यों का त्यों रखने का प्रयत्न किया है। वर्तमान की नवीन कूँची से रंग भरने के कारण मेरे इस चित्र में कुछ ऐसे रंग जरूर उभर आये हैं, जो बाल्मीकि द्वारा चित्रित चित्र में बड़ी सूक्ष्म-दृष्टि से देखने पर ही दिखलाई पड़ सकेंगे। मेरा 'दश-कंधर' अपने विषय में अगर आपके भ्रम को निवारण कर सकने में समर्थ हुआ तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूँग।

३७४७, गोकुलपुरा, कंसगेट,
आगरा
३० मई १९४९

—शान्तिस्वरूप गौड़

सूची

समर्पित

जीवन के सुख-दुःख की साथिन

क

म

ला

तुमको

: पहला अध्याय :

: वंश-परिचय :

ब्राह्मणों के जिस उच्च कुल में महाराज राक्षसराज रावण का जन्म हुआ—उस वंश के आदि-पिता के रूप में, क्षीर सागर के बीच शेषनाग की शय्या पर लेटे नारायण की नाभि में से फूट-पड़ने वाले कमल से उत्पन्न पितामह ब्रह्मा का नाम लिया जाता है। मगर इस वंश की आदि माता कौन थीं—अब यह कहना कठिन है। चमत्कार उत्पन्न करने की दृष्टि से, साहित्य में प्रत्येक पग पर अद्‌भुत-रस की सृष्टि कर पूर्व-पुरुषों ने कुछ अनोखी सूझ से काम लिया है—तभी, मन-हरण कल्पना की ओट में वास्तविकता छिप-सी गई है। इसीलिये आदि-पिता ब्रह्मा की पत्नी अथवा महर्षि पुलस्त्य की माता का नाम आज हम बिल्कुल भूल-से गये है।

महर्षि पुलस्त्य अपने कठिन तप के प्रभाव से साक्षात् अपने पिता के समान थे। वह धर्म-परायण, शीलवान, कठिन तपस्वी और प्रजापति (ब्रह्मा) के पुत्र होने के नाते सब ही के बहुत प्यारे थे। गहरे आत्म-चिन्तन के बीच अपने बाल्य-काल को व्यतीत कर जब उन्होंने यौवन में पदार्पण किया, उनकी आत्मा पवित्रता की पराकाष्ठा पर पहुँच चुकी थी। सतत् साधना जीवन का अङ्ग बन गई थी। जीवन में पवित्रता की उपादेयता के लिये एक विशिष्ठ स्थान बन चुका था। अब इन्हें आराधन के समय किसी भी प्रकार का विघ्न रुचिकर प्रतीत नहीं होता था। ऐसे समय में, विघ्न

उपस्थित होने पर युवावस्था का क्रोध फिर अपनी सीमा पर पहुँच जाता था और उस दूसरे का कुछ अनिष्ट होते फिर देर नहीं लगती थी। दुर्वासा ऋषि की सी भयकरता तो उनके क्रोध में नहीं थी, परन्तु विघ्न-स्वरूप उपस्थित हो जाने वाले उस प्राणी को कुछ तो कष्ट जरूर ही होता था, यह निश्चय है। मगर स्वभाव से वह शान्ति-प्रिय थे। जीवन उनका बहुत ही सीधा-सादा था। ससार की ओर उनकी रुचि बिल्कुल भी न थी। अब वह अक्सर जन-रव से बहुत दूर, गहन वन में उपयुक्त स्थान देखकर, अपना योग साधते थे।

फिर उन्हीं दिनों की बात है—एक बार, महर्षि पुलस्त्य महापर्वत मेरु की तलैटी मे अवस्थित तृणबिन्दु राजर्षि के आश्रम पर जा, इन्द्रियों का संयम कर, वेदपाठ मे परायण हो, कठिन तपस्या मे लीन थे—ऋषियों, पन्नगो और राजर्षियों की अनेक कन्याएँ उनके सन्मुख विघ्न-स्वरूप उपस्थित होने लगीं। जब तपस्या मे रत इस ऋषि को देखकर भी, उस वन-प्रदेश की रमणीयता, उसके सौन्दर्य पर विमुग्ध हुई उन कन्याओं ने अपनी बाल-सुलभ प्रकृति के कारण, वहाँ क्रीड़ा करना न छोड़ा तो वह युवक तपस्वी भी इस विघ्न को अधिक सहन न कर सका। तब तेज के पुंज उस प्रजा-पतिनन्दन ने क्रोध में भर कर कहा—'अब जो भी कन्या मेरे सम्मुख आयेगी, वह तत्काल गर्भवती हो जायेगी।'

और उसी क्षण ऋषि का वह आश्रम बिल्कुल निस्पन्द हो गया। ब्रह्मशाप से डर कर सभी कन्याएँ उस स्थान से बहुत दूर हट गईं। हवा की मत्त लहरें लाख प्रयत्न करने पर भी अब कोकिल-कण्ठियों की उस ध्वनि को वहाँ न पहुँचा पाती थीं। उनके पायलों की रुनझुन किसी

गाड़ी की ओटक में दुबक कर रह जाती थी। रूप की चकाचौंध वृक्षों की सघनता में ही विलीन हो जाती थी। अब महर्षि पुलस्त्य खुश थे—स्वाध्याय में रत हुए वह ज्ञान के तेजोमय प्रकाश से प्रकाशित हो रहे थे। तभी, यौवन के भार को सँभाले, अटकती सी, राजर्षि तृणबिन्दु की कन्या सखियों को खोजती अनजाने उधर आ निकली। आज वह सोच-सोच हार रही थी—सभी उसके साथ की वे किधर हैं, कहाँ हैं? मगर जैसे ही उसने वेद की श्रुति को सुन तपोनिधि ऋषि की ओर देखा—उसका शरीर पीला पड़ गया। गर्भ के लक्षण प्रकट होने लगे। वह घबराकर घर की ओर भागी। उसी समय किसी कार्यवश द्वार से बाहर निकलते तृणबिन्दु ने जब सामने पड़ गई कन्या की ऐसी दशा देखी तो वह चकित रह गये। वह कुछ कहना ही चाहते थे कि कन्या ने दीन हो, हाथ जोड़कर पिता से वह सब कुछ कहा, जिसके कारण उसमें यह आश्चर्यजनक परिवर्तन गहरी नींव जमा बैठा था। तब बुद्धिमान तृणबिन्दु परिस्थिति की वास्तविकता को समझ, कन्या को अपने साथ ले, उसी समय पवित्र अन्तःकरण वाले महर्षि पुलस्त्य के आश्रम में जा पहुँचे। ऋषि के सम्मुख पहुँच, हाथ जोड़कर वह कहने लगे—'हे महर्षे! अनुपम गुणों वाली मेरी यह कन्या आपके सम्मुख स्वयं उपस्थित हुई है—आप इसे भिक्षारूप से ग्रहण कीजिए। हे मुनिश्रेष्ठ! तपस्या करते समय जब आपकी सब इन्द्रियाँ शान्त हो जाया करेंगी, उस समय यह आपकी शुश्रूषा करेगी।'

और ऋषिवर पुलस्त्य ने 'तथास्तु' कह उस कन्या को भार्या रूप से ग्रहण किया। इस प्रकार राजा तृणबिन्दु उन ब्राह्मणश्रेष्ठ को कन्या-दान कर अपने आश्रम को लौट आया और कन्या अपने गुणों से पति को सन्तुष्ट

कर वहाँ निवास करने लगी। फिर, कुछ समय के पश्चात् इसी कन्या के गर्भ से दशकंधर के पिता विश्रवा ने जन्म ग्रहण किया।

अपने पिता पुलत्स्य के समान ही विश्रवा का बाल्यकाल से ही तप की ओर विशेष ध्यान था। वेदों का परायण करते समय वह अतीव सुख का अनुभव करते थे। उस समय उनका मन अन्तरिक्ष को भेद कर साक्षात् ब्रह्म में लीन हो जाता था। उन्होंने शीघ्र ही सम-भाव को अपने आचरण में स्थिर कर समदर्शी मुनि पुङ्गव की उपाधि ग्रहण की। वह सत्यवान, शीलवान, पवित्र आचरण वाले, सभी भोगों से उदासीन एवं धर्म में परायण रहने वाले व्यक्ति थे। भगवान् की भक्ति उनके जीवन का लक्ष्य ान, मन मे पग कर रह गई थी। और यही कारण है, वह संसार में यशस्वी और धर्मात्मा प्रसिद्ध हुए। फिर, मुनीश्वर भरद्वाज ने उनके इन्हीं गुणों पर रीझकर अपनी कन्या देववर्णिनी का विवाह विधिपूर्वक उनके साथ कर दिया।

कुछ काल पर्यन्त देववर्णिनी के गर्भ से वीर्यवान् वैश्रवण (कुबेर) का जन्म हुआ। दशकंधर का बड़ा भाई वैश्रवण ब्राह्मणों के सभी गुणों से पूर्ण था। बालक वैश्रवण की कल्याण-कारिणी बुद्धि को देख कर बाबा पुलत्स्य का मन फूला नहीं समाता था। अपने पिता विश्रवा के सभी गुण उसमें मौजूद थे। उसने अपनी अल्पायु मे ही उग्र नियमों का पालन कर घोर तप किया। बहुत दिनों तक जल पीकर, फिर, कुछ काल तक केवल वायु का भक्षण कर और फिर, निराहार रह कर ही उसने इस कठिन योग को साधा। और अन्त में अपनी मनोवांछित वस्तु, इन्द्र, वरुण और यम के अनन्तर चौथे लोक-पाल धनाध्यक्ष के पद को प्राप्त कर वह परमधर्म का

आचरण करने लगा। उसी समय उसने पितामह ब्रह्मा से पुष्पक नाम के विमान को भी प्राप्त किया—फिर, वह पिता की आज्ञा मान त्रिकूट नामक पर्वत के शिखर पर बसी हुई विशाल नगरी लंकापुरी में आकर रहने लगा।

इन्द्र की अमरावती के समान सुन्दर, रमणीय और विशाल इस लङ्कापुरी का निर्माण शिल्पियों में श्रेष्ठ विश्वकर्मा ने स्वयं अपने हाथों किया था। गहरी खाइयों से सुरक्षित कर विश्वकर्मा ने इसके निर्माण में अपनी कला का ऐसा अभूतपूर्व कौशल प्रदर्शित किया था कि देखते ही आँखें ठगी सी रह जाती थीं। मगर बहुत दिनों से यह सुन्दर नगरी सुनसान पड़ी थी। पितामह ब्रह्मा के भाई प्रजापालक विष्णु ने वहाँ के राक्षस वंशीय राजा को मार कर इस नगरी को राजा से रहित कर दिया था और उस राजा के वंशज विष्णु से डर कर किसी दूसरे स्थान को चले गये थे। इस प्रकार सहज ही में इस विशाल नगरी के राज्य को हस्तगत् कर विश्रवानन्दन धनाध्यक्ष सुखपूर्वक वहाँ रहने लगा।

अपने पुत्र वैश्रवण को इस पद पर देखकर पिता विश्रवा और माता देववर्णिनी दोनों ही प्रसन्न थे। विश्रवा अभी भी अपना सारा समय भगवान के चिन्तन में ही व्यतीत करते थे। अब आकर उनका यश संसार के कण-कण में व्याप्त हो चुका था। साथ ही ऐसे महाभाग्य पुत्र के पिता होने का गौरव उन्हें प्राप्त था। इसी बात से आकर्षित हो एक दिन राक्षस-राज सुमाली ने अपनी कन्या कैकसी से कहा—"हे पुत्री! अब तुम विवाह के योग्य हो चुकीं। तुम लक्ष्मी के समान समस्त गुणों से विभूषित हो, इसीलिये, कोई पुरुष यह सोचकर कि कहीं तुम उसके प्रस्ताव को ठुकरा न दो, तुमसे विवाह-सम्बन्धी बातें नहीं करता। हे पुत्री, धनेश्वर-जैसा पुत्र

प्राप्त करने की इच्छा को मन में धारण कर, तुम मुनिवर विश्रवा के पास जा उन्हे पतिरूप से वरण करलो। इस सत्कर्म के लिए मै तुम्हे आज्ञा देता हूँ।"

पिता की आज्ञा शिरोधार्य कर पूर्णचन्द्र के समान मुखवाली वह कन्या तुरन्त ही मुनि श्रेष्ठ विश्रवा के आश्रम मे जा पहुँची—फिर, वह भामिनी मुनि के सामने खड़ी हो, उनके चरणो की ओर देखती हुई, अपने सीधे पैर के अगूँठे के अग्रभाग से पृथ्वी को लगातार कुरेदने लगी। बहुत देर के बाद, समाधि से निरत हो, जब ऋषि ने अपने नेत्र खोले तो सामने कैकसी को खड़ी देखकर पूछा—"हे भद्रे! तू किसकी कन्या है और यहाँ किस प्रयोजन मे आई है? हे शोभने! ये सब बातें मुझे सच सच बता।"

मुनिवर विश्रवा के इस सामयिक प्रश्न को सुन कैकसी संकोच से कुछ झुक सी गई। लज्जा-मिश्रित उसका मुख लाली के गहरे आवरण में ढक गया। कुछ क्षणो के पश्चात्, हाथ जोड़ बड़े ही विनीत भाव से उसने कहा—"हे महर्षे! मेरा नाम कैकसी है। मैं पिता की आज्ञा मान आपके पास आई हूँ। आप मनोविज्ञान के पडित है—मेरे मन की इच्छा को आप स्वयं ही भली प्रकार समझ सकते हैं।'

इतना कह कैकसी उसी भाव से स्थिर खड़ी रह गई। तप की आभा से दमकते मुनि ने फिर उसे अपनी बाँई ओर स्थान दे पास बिठाया।

: दूसरा अध्याय :

: जन्म और बचपन :

मुनि विश्रवा की दूसरी पत्नि रूपवती कैकसी के गर्भ से दशकंधर का जन्म उस समय हुआ, जब भूकम्प के कारण पृथ्वी काप-कांप जाती थी। आकाश स्तब्ध था और समूचा वन-प्रदेश उद्विग्न हो उठा था। भूकम्प के कठिन और लगातार लगने वाले धक्कों से ऋषि का नन्हा-सा आश्रम हिल-हिल कर रह जाता था। मगर फिर, सब-कुछ शान्त हो जाने पर सद्यः प्रसूता कैकसी अपने नवजात शिशु सहित कुशल-पूर्वक थी। आश्रम से कुछ ही गज की दूरी पर पृथ्वी फट कर दो-टूक हो गई थी; मगर ऋषि की तिनको से छाई वह झोपड़ी पूर्णरूप से सुरक्षित थी। महाभाग्य वाले उस शिशु का सौभाग्य! कैकसी ख़ुश थी।

दशकंधर के जन्म के कुछ ही दिनो बाद कुंभकर्ण का जन्म हुआ—फिर, कन्या शूर्पणखा का; तदन्तर विभीषण उत्पन्न हुआ। अपने बाल्यकाल में दशकंधर बहुत ही चपल, उत्साही और स्वभाव से ही नटखट था। जब वह कुछ बड़ा हुआ, घर से निकल कर बाहर दूर तक जाने काबिल, उसकी शैतानी बढ़ने लगी। अब वह पास-पड़ौस की झोपड़ियों में चुपके से घुस जाता, उनमें रहने वाले साधु-सन्तो की चीज़ों को उलट-पुलट कर देता और भक्षण करने योग्य कोई वस्तु, पसन्द आ जाने पर, खा-भी लेता। हिरणो, खरगोशों आदि वन-पशुओ के पीछे दौड़ना भी उसे अच्छा लगता था। पर्वत-प्रदेश के किसी झरने की मदमाती चाल भी उसे पसन्द

थी। उसकी चाल के चक्कर में पड़कर सैकड़ों पत्थर के टुकड़े, पेड़—पौधे अपना वास्तविक रूप ही खो देते थे—इस भेद को समझ लेने का वह सफल प्रयास करता था। माँ द्वारा सुनाई गईं वीर-रस-पूर्ण कहानियों में वह अपना सब-कुछ पा जाता था, मगर पिता द्वारा करवाया जाने वाला वह वेदाभ्यास उसे कुछ कठिन जान पड़ता था।

इसीलिये साहस-पूर्ण कार्य करने में उसे एक विशेष प्रकार के आनन्द का अनुभव होता था। दिन-प्रति-दिन बढ़ने वाली उसकी अवस्था के साथ-साथ उसकी महत्त्वाकाँक्षाएँ भी शनैःशनैः बढ़ रही थीं। रोज रात्रि को, अपने घास-फूस वाले बिस्तरे पर पड़ कर, यह विश्रवा-नन्दन महलों के स्वप्न देखता था। वह देखा करता—उसने अपने पराक्रम से सभी राजा-महाराजाओं को परास्त कर दिया है। अब वह सबका स्वामी है। राज-महलों के सभी सुख उसे प्राप्त हैं। उसका पराक्रम अद्वितीय है। वह अपने विरोधियों के लिए कालरूप है। प्रभुता उसके चरण छूती है। जीवन निष्कंटक...... ...। और जब वह प्रातःकाल उठता तो रात का वह स्वप्न उसे रह-रह कर याद आता। तब वह अपने पुष्ट वक्ष-स्थल पर हाथ मार कर कहता—यही होगा। फिर बहुत देर तक उसके कानों में उसके अपने ही शब्द गूँजते रहते—और वह अस्त्र-शस्त्रों के अभ्यास के लिये, भाइयों सहित जंगल में दूर निकल जाता। कुंभकर्ण की रुचि उसकी रुचि के साथ मेल खाती थी; परन्तु, विभीषण डर के कारण उसका साथ देता था।

और उन्हीं दिनों, एक दिन माता कैकसी ने दशकंधर को अपने पास बुलाकर कहा—'हे पुत्र! तुम पिता के पास में बैठे हुए अपने बड़े भाई कुबेर की ओर देखो। तेज-सम्पन्न वह तुम्हारा भाई कैसा शोभायमान

प्रतीत हो रहा है। वह लङ्कापुरी का राजा है। सवारी के लिये तीव्रगामी पुष्पक नाम का विमान उसके पास है, जो प्रसन्न होकर, पितामह ने उसको दिया था। मेरे अच्छे बेटे! तुम भी अपने भाई के समान ऐश्वर्यशाली बनो। वैसा ही उद्योग तुम भी करो। मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है।

माता के ऐसे वचन सुन अमित विक्रमी दशकन्धर ने कहा 'माता! मैं तुम्हारे चरणों की सौगन्द खाकर प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं एक दिन जरूर अपने भाई जैसा तेज-सम्पन्न और ऐश्वर्यशाली [illegible] तुम विश्वास करो।'

और वास्तव में उसके ये शब्द अमिट और अमर हो गये। अपनी माता से इतना कह, भाइयों को साथ लेकर वह उसी समय घर से बाहर निकल गया। अपने उद्देश्य की प्राप्ति के निमित्त रोज रात्रि को दिखाई देने वाले स्वप्नों को वास्तविक रूप देने के लिये! वह जीवन की बाजी लगा कर अपने उद्देश्य को पूर्ण करेगा—उसने सोच लिया था।

वह जङ्गल की राह चला जा रहा था, जो सीधी और साफ न थी। कटीली झाड़ियाँ, सघन वृक्ष, उन वृक्षों से लिपटी हुई लताएं, ऊँचे-ऊँचे पर्वत, गहरी घाटियाँ, पहाड़ी नदियाँ, शेर और चीते, पग-पग पर सभी उसका मार्ग अवरुद्ध कर रहे थे, दोनों भाइयों को साथ लेकर मगर वह चला जारहा था। उसने सोच लिया था—वह विघ्न बनकर आ जाने वाली किसी भी वस्तु को कभी क्षमा नहीं करेगा। वह उसे जरूर हटा देगा, मिटा देगा। और वह चला जा रहा था—उस स्थान की खोज में, जहाँ कुछ दिनों रहकर वह इस लायक बन जाये, अपने सपनों को पूरा कर सके। वह उस रूढ़ि को समाप्त कर, अपना सब कुछ पा जाए। वह सोच रहा

था वह वीर है, बहादुर है—साहसी और पुरुषार्थी भी! वह मनुष्य है! वह सब कुछ कर सकता है—सब कुछ करेगा भी! परन्तु चला जा रहा था।

और गोकर्णाश्रम पर पहुँच कर उसने वह अपना चलना रोक दिया। वहाँ की अनुकूल वायु ने उसके कानों में उससे कुछ कहा और वह ठहर गया। तब सामने पड़ी हुई पत्थर की वह शिला उससे कहने लगी—'दशकंधर, मेरे पास आओ। मेरे पास आओ तो, मैं तुमसे कुछ कहना चाहती हूँ।' और वह उसके पास चला गया—तो, शिला बोली—'मुझे ग्रहण करो, दशकंधर! मैं तुम्हारे सभी स्वप्न पूरे कर दूँगी। तुम मेरा विश्वास करो।' और दशकंधर उस शिला पर बैठ गया!

कुम्भकर्ण बोला—'और अब?'

'अब!' दशकधर हँस पड़ा। उसने कहा—'तुम उस शिला पर बैठो—और विभीषण, तुम उस पर।' उन दोनों शिलाओं की ओर संकेत करते हुए उसने फिर कहा—'अब तुम तप करो, योग साधो। आत्मा को इतना बलवान् बनाओ—कहीं—कभी वह डर न जाये, काँपे नहीं। फिर, सर्व-गुण-सम्पन्न बनो। हम, सभी को पराजित कर, संसार पर राज्य करने के लिये उत्पन्न हुए हैं। हम में बल है, शक्ति है—हम मनुष्य हैं—बुद्धि, विद्या और बल के अधिनायक! हम सब कुछ कर सकते हैं; सब कुछ।' वह ठहरा—और फिर कहने लगा—'हम उन राजाओं को बनाकर, उन्हें आशीर्वाद देने के लिये, उनसे भिक्षा ग्रहण कर—उसके बदले में उन्हें अपना सब कुछ दे-देने के लिये ही नहीं बनाये गये। हम उन पर राज्य करने के लिये बने हैं—राजाओं पर राज्य करने के लिये!' वह कुछ सोच कर फिर कहने लगा—'ससार में रह कर सांसारिक बनो—व्यवहार-कुशल,

नीति-कुशल, धर्म-कुशल ! फिर, जो कुछ हमने खो दिया है, उसे हम फिर पा लेंगे। यह शस्य-श्यामला भूमि हमारी है—हमने इसे जीता था, हमने इसे खो दिया है, हम इसे फिर पा लेंगे। संघर्ष जीवन है, शान्ति—मृत्यु ! हमे जीवन चाहिये—मृत्यु नहीं। हम जीवन भर लड़ते रहेंगे—जीवन भर ! हमें जीवन चाहिये।'

इतना कह दशकंधर अट्टहास कर उठा—फिर, वह मौन हो गया। मगर गोकर्णाश्रम की पर्वत मालाएँ अभी भी हँस रही थीं। ठीक, उस-जैसी हँसी ! आकाश निनादित हो रहा था—उसी की वाणी से ! वृक्षों को छूकर, फूलों को चूम वायु उसी का संदेश कह जाती थी। उसके उन शब्दों को सुना—तारों ने, चन्द्रमा ने भी और रजनी हँस पड़ी।

मगर दशकंधर मौन था। कुंभकर्ण, विभीषण भी ! कुंभकर्ण भाई का साथी बनकर, मगर विभीषण डर के कारण।

फिर दशकंधर ने गोकर्णाश्रम की इसी पवित्र भूमि में बहुत दिनों तक रह, अभ्यास, आत्मचिन्तन, योग, तप के द्वारा, स्वयं को इतना अधिक शक्तिशाली बना लिया, जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। अब वह स्वयं मे ही पूर्ण था। शक्ति उसकी होकर रह गई थी। पूर्ण युवा दशकधर के मुख से एक तेज-सा फूटा पड़ता था। उसकी नस-नस में स्पन्दन हो रहा था। उसने पितामह ब्रह्मा को प्रसन्न कर, बहुत कुछ पाया था। एक बार उसने अपनी बलिष्ठ भुजाओं का ओर देखा—फिर, शक्ति के पुंज उन आयुधों की ओर, जो उसके सामने पड़े हुए थे—और हर्ष से गद्गद हो गया। तब शिला बोली—'हे महाभुज ! तुम्हारा मनोरथ पूर्ण हुआ। अब मैं जा रही हूँ।'

इतना कह शिला टुकड़े-टुकड़े हो, पिघल कर भूमि में समा गई।

: तीसरा अध्याय :

: लंकाधिपति और विवाह :

गोकर्णाश्रम की पवित्र भूमि को नमस्कार कर अमितप्रभ दशकंधर, महाबली कुंभकर्ण, सुव्रत विभीषण—तीनों भाई श्लेष्मातक वन में आकर सुख-पूर्वक रहने लगे। दशकंधर इस वन मे पहुँचते ही भावी योजना के विषय में अपने विचार स्थिर करने मे लग गया। कोई अनुष्ठान असफल हो जाने के कारण कुंभकर्ण को निद्रा का रोग लग गया था इसलिए, वह पड़ कर सोने लगा। विभीषण गहरे चिन्तन में निमग्न रहने लगा। तभी, कैकसी का पिता सुमाली अपने धेवतों के विषय में सब कुछ सुनकर, उनके पास अनुचरों सहित, उन्हें आशीर्वाद देने के लिये, वहाँ आया। दशकंधर अपने नाना का स्वागत कर, बात मे बात जोड़ कर कहने लगा—'मेरी इच्छा है, समूचे राजाओं को परास्त कर, मैं उन पर शासन करूँ। ऐश्वर्यशाली बनूँ। निष्काम सेवा, अपने पुरखाओं की तरह दूसरों को आशीर्वाद देने के लिए तपस्या, उन दूसरों द्वारा दिये जाने वाले अन्न से पेट की पूजा, मुक्ति की बात—यह सब कुछ मेरी समझ में कुछ भी नहीं आता। शक्ति हमारी खर्च हो, राजा वे दूसरे बनें—मैं ब्राह्मणों की इस नीति पर विश्वास नहीं करता। जिसकी भुजाओं मे बल है, राजा वही है। ब्राह्मणों के आशीर्वाद के सहारे जीवित रहने वाले क्षत्रिय राजा अपनी प्रजा में सभी को सुख और शान्ति नहीं दे सकते। कठिन बन्धनों मे जकड़ी हुई यह वर्ण-व्यवस्था मूर्खतापूर्ण है। मैं स्वभाव से ही युद्ध-प्रेमी हूँ—

इसीलिये, मैं आर्यों द्वारा ब्राह्मणों के लिये निर्धारित इस नीति पर विश्वास नहीं करता। मैं सबसे युद्ध करूँगा—सबको परास्त कर उन पर शासन! मेरे मार्ग को अवरुद्ध करने वाली कोई भी शक्ति बिना मिटे नहीं रह सकती। यह मेरा दृढ़ निश्चय है।'

दशकंधर के विचारों से पूर्ण सहमति प्रगट करते हुए, तब सुमाली ने कहा—'हे वत्स! तुम्हारे विचार समयानुकूल हैं। मैं तुम्हारी इच्छा का स्वागत् करता हूं। मेरे मन से अब विष्णु का भय जाता रहा। यह लंकापुरी, जहां अब तुम्हारे बड़े भाई धनाध्यक्ष कुबेर राज्य करते हैं, हमारी ही है। विष्णु से युद्ध में हार कर हमने इसे छोड़ दिया था। हे महाभुज! साम, दाम अथवा बल से यदि लंका को तुम अपने अधिकार में कर लोगे—तो तुम्हारा हमारे ऊपर बड़ा अनुग्रह होगा। हे तात! तब तुम इस लंका नगरी के राजा बनना। हम सब आज ही से तुम्हें अपना स्वामी स्वीकार करते हैं।'

तब दशकंधर सामने खड़े हुए अपने नाना से कहने लगा—'धनाध्यक्ष, कुबेर मेरे बड़े भाई हैं। आपको ऐसी बात मुझसे नहीं कहना चाहिये।'

सुमाली का मन्त्री प्रहस्त तब नम्रता पूर्वक बोला—'हे महाभुज दशकंधर! आप जैसे वीर को यह बात शोभा नहीं देती। शूरों में भाई-चारा नहीं चलता। विचार करके देखा जाये तो हम सभी एक ही पिता की सन्तान हैं। हे धर्मज्ञ वीर! पहले यह सारी पृथ्वी, वन और पर्वतों सहित हमारी थी, हम ही इसके स्वामी थे परन्तु विष्णु ने हमें युद्ध में परास्त कर, इसे हमसे छीन हमारे भाइयों को दे दी। अब अगर आप ऐसा करते हैं तो, यह अनुचित किस प्रकार होगा।'

प्रहस्त की यह बात सुन दशकंधर का मन उत्साह से भर गया। उसकी भुजाएँ फड़कने लगीं। क्षणभर विचार करने के बाद उसने कहा—'बुद्धिमान् प्रहस्त! लंका को विजय करने के लिए मैं आज ही तुम्हारे साथ चलूँगा। अपनी योजना को सफल बनाने के लिए मुझे मार्ग मिल गया। मैं खुश हूँ। बहुत खुश।'

और मुहूर्त-भर के उपरान्त वे सब लंका की ओर आ रहे थे। सुमाली की प्रसन्नता का पारावार न था। वह एक बार फिर, सकुटुम्ब, लंका, प्यारी लंका में रह सकेगा, वह सोच-सोच हार रहा था। इस समय उसको लंका की एक एक गली, राजमहल, वन-उपवन सभी कुछ याद आरहा था। मगर प्रहस्त इसलिये खुश था कि उसकी बात मान ली गई थी। वह बुद्धिमान है, क्षण भर के लिये यह विचार भी उसके मस्तिष्क में आया और वह उत्साह से भर गया। फिर दशकंधर के लिये तो जीवन का प्रारम्भ था। उसके जीवन की शुरूआत इतने सुन्दर ढंग पर होगी—उसे तो स्वप्न में भी खयाल न था। एक क्षण के लिये उसे अपनी माता का भी खयाल आया और वह आत्म विभोर हो उठा। उसने सोचा, उसका बेटा, जब लंकाधिपति बन उसके चरणों में शीश झुकायेगा, वह कितनी खुश होगी—कितनी खुश!

तभी, उसी रथ में पास में बैठे प्रहस्त ने कुछ जोर से चिल्लाकर कहा—'वह है, सामने महाराज! धूल के बादलों के उस पार! हमारी प्यारी लंका।' दशकंधर जैसे सोते से जगा। वास्तव में त्रिकूट पर्वत पर बसी हुई वह बड़े भाग्योंवाली लंकापुरी सामने की ओर स्पष्ट दीख पड़ रही थी। राजमहल के सोने के बने वे गुम्बद तीसरे पहर के सूर्य के प्रकाश

में दम-दम कर दमक रहे थे। तभी दशकंधर ने सारथी को रथ रोक देने की आज्ञा दी। उसके रथ के रुक जाने पर सभी रथ रोक दिये गये।

लंका के बहुत पास वाले इसी स्थान से बुद्धिमान् प्रहस्त को सब बातें समझा, दूत बनाकर, कुबेर के पास भेजा गया। तब दशकंधर युद्ध के विषय में मन्त्रणा करने के लिये अपने नाना सुमाली के पास बैठा। मगर जब कुछ ही देर बाद, प्रहस्त ने लौट कर दशकंधर का लंकाधिपति कह कर जय-जय कार किया तो उसके आश्चर्य की सीमा न रही। प्रहस्त ने प्रार्थना की—'लंकाधिपति दशानन की जय हो! कुबेर अपने पुत्र, स्त्री, धन और वाहन को साथ लेकर लंका नगरी को छोड़ कर चले गये। अब लंका का राजसिंहासन सूना पड़ा है। आप हमारे साथ वहाँ चलकर अपने धर्म का पालन कीजिये।'

प्रहस्त के ये वचन सुन सुमाली ने दशकंधर को हृदय से लगा लिया। तदनन्तर वे सब ख़ुशियाँ मनाते लङ्का की ओर चले। लङ्का में पहुँचते ही दशकंधर ने देखा—समूची लङ्का उसका स्वागत् करने के लिए उमड़ पड़ी थी। बड़े-बड़े राजमार्गों मे विभक्त वह लङ्का बहुत सुन्दर, प्रेयसि के समान आनन्ददायिनी और धन-धान्य से पूर्ण थी।

और दूसरे दिन दशकंधर का अभिषेक कर, उसे राक्षसेन्द्र की उपाधि से विभूषित किया गया।

इस प्रकार लंकेश बनने के कुछ दिनों बाद दशकंधर स्वयं में ही लीन रहने लगा। बहिन शूर्पणखा का विवाह कालिका के पुत्र विद्युज्जिह्व के साथ कर देने के बाद अब वह—कुछ निश्चिन्त हो चुका था। आज-कल आखेट उसे बहुत प्रिय था। शिकार खेलने की इच्छा से वह लङ्का

से बहुत दूर वनों में निकल जाता और फिर, कई-कई दिनों के बाद वह नगर को लौटता। उन्ही दिनों, एक दिन जब वह एक हिरण का पीछा कर रहा था, उसने देखा एक मनुष्य बहुत ही सुन्दर कन्या को साथ में लेकर, उसके पास से निकल कर जा रहा था। वह उस रूप की रेखा को देख, हिरण का पीछा करना भूल गया। अभी तक जीवन में ऐसी सुन्दर स्त्री उसने कभी न देखी थी। वह उसके पास पहुंच पूछने लगा—'आप कौन है? बालमृग के समान नेत्रों वाली उस कन्या को साथ मे ले, मनुष्यों से शून्य इस वन में अकेले क्यों विचरण कर रहे है?'

दशकंधर के इस प्रकार पूछने पर वह कहने लगा—'मेरा नाम मय है और यह मन्दोदरी नाम की मेरी कन्या है। मेरी स्त्री हेमा को अपने मा-बाप के घर गये तेरह वर्ष व्यतीत हो चुके है। एक विशेष कारण वश वह वहाँ इतने दिनों से रह रही है, मगर मेरा मन उसके बिना नहीं लगता। बड़ी मुश्किल से मैंने इतने दिन काटे है, लेकिन, अब वह शीघ्र ही लौटेगी। हे राजन्! मेरी यह कन्या अब विवाह के योग्य हुई। इसके लिये योग्य वर की खोज में, इसे अपने साथ लेकर, मैं घूम रहा हूँ। मेरे दो पुत्र भी हैं। उनमें से एक का नाम मायावी है और दूसरे का दुंदुभि। आपके पूछने पर मैंने आपको अपने विषय में सब कुछ बता दिया। अब हे वत्स! तुम कौन हो? इस बात को मैं किस प्रकार जानूँ।'

उस बूढ़े मय की बात सुन दशकंधर बड़े ही विनीत भाव से बोला—'मै ब्रह्मा के पौत्र पुलस्त्यनन्दन विश्रवा मुनि का पुत्र हूँ। मेरा नाम दशकंधर है। इस समय मैं लंका का राजा हूँ। आशा है, मेरा इतना परिचय आपको यथेष्ट होगा।'

दशकंधर के इस शुभ-परिचय को सुन दिति बहुत प्रसन्न हुआ। क्षण भर उसने अपने मन में सोचा—दशकंधर से अधिक उपयुक्त वर और कौन मेरी कन्या के लिये हो सकता है। फिर, अपनी कन्या का हाथ दशकंधर के हाथ में दे वह कहने लगा—'हे राजन्! मेरी यह कन्या हम सबको बहुत अधिक प्यारी है। तुम इस मन्दोदरी नाम वाली कन्या को अपनी पत्नि के रूप में ग्रहण करो।' यह कहते-कहते मय के नेत्रों में जल भर आया। वह अधिक न बोल सका।

दशकंधर ने शीश झुका अभिवादन कर मन्दोदरी को भार्या रूप से ग्रहण किया। फिर, उसी स्थान पर अग्नि को प्रज्वलित कर विधि पूर्वक विवाह करने के उपरान्त वह मन्दोदरी के साथ लंका में लौट आया। इसी अवसर पर, दहेज के रूप में मय ने उसे वह अमोघ शक्ति भी दी, जिसका प्रयोग उसने आगे चल कर लक्ष्मण के ऊपर किया था। फिर उसके वैरोचन बलि की धेवती वज्रज्वाला के साथ कुंभकर्ण का विवाह किया और महात्मा शैलूष की कन्या सरमा के साथ विभीषण का।

इस प्रकार वे तीनों भाई अपनी-अपनी स्त्रियों के साथ सुख-पूर्वक लंका में रहने लगे। कुंभकर्ण अधिकतर सोता रहता था, मगर विभीषण अपना सारा समय यज्ञ-दान और तपस्या करके व्यतीत करता था। और दशकंधर का जीवन अब अबाध-गति से चल रहा था। उसमें अब किसी प्रकार की रोक न थी। वास्तव में अब वह दिग्विजय की तैयारी कर रहा था। वह सोचा करता था, वह कौनसा शुभ-दिन होगा—जब सारा संसार उसके चरणों पर नत-मस्तक हो, एक स्वर से कहेगा—महाराजाधिराज दशानन की जय!

: चौथा अध्याय :

: कुबेर के साथ युद्ध :

दशानन की दृष्टि मे वर्ण-व्यवस्था का कोई मूल्य न था। ब्राह्मण भजन-पूजन, पठन-पाठन और शिक्षा-दीक्षा के लिये ही भगवान् ने उत्पन्न किये हैं और क्षत्रिय राजभोग करने के लिये। वैश्य वाणिज्य और कृषि के लिये एवं शूद्र इन सब की सेवा करने के लिये ही—मनुष्यों को इस प्रकार बाँट, कड़े नियमों मे जकड़ देना—यह उस मनुष्य नाम के बुद्धिजीवी प्राणी के साथ एक अन्याय प्रतीत होता था। उसकी दृष्टि में कोई भी पुरुष-सिंह, जिसकी भुजाओं मे बल है, संगठन की जिसमें शक्ति है—फिर, चाहे वह ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र कोई भी क्यों न हो, वह राज्य का अधिकारी था। इस प्रकार, नियमों का उल्लंघन कर चलने वाला वह प्राणी पापी, दुरात्मा, अथवा इसी तरह का और कुछ न था। वह मनुष्य था और मनुष्य होने के नाते उसे अधिकार था कि वह अपनी रुचि के अनुसार इस तरह का कोई भी कर्म करे।

अपनी इन्ही क्रान्तिकारी भावनाओ के सहारे उसने जीवन में प्रवेश किया था और अब तो समय के अनुसार वह इतनी शक्ति संग्रह कर चुका था कि अपने इन विचारों को समूचे संसार के विरुद्ध अकेला खड़ा होकर भी पूर्ति-रूप दे सकता था। फिर, सौभाग्यवश, इस देश के अनेक आदिम वासी, जिन्हे दशकंधर की जाति के लोग राक्षस-दैत्य इन्हीं नामो से पुकारते थे, उसके सभी साथी बन चुके थे। अब तो वह स्वयं भी एक राजा

था और साथ ही शक्ति का पुंज—फिर, महापंडित भी! अब समय को नष्ट करना मूर्खता थी—यही सोचकर, उसने पुत्र मेघनाथ के जन्म की खुशियों में लगे रहना भी उचित न समझा और अपनी पूरी शक्ति के साथ वह अपने विचारों को कार्यरूप में परिणित करने लगा।

समय की राजनीति के अनुसार उसने सबसे पहले ऋषि-महर्षियों को समाप्त कर देना उचित समझा—क्योंकि उस समय की राज-शक्तियों के ये ही मार्ग-दर्शक थे—साथ ही अपनी तपस्या और विद्या के द्वारा उन्हें शक्ति प्रदान करने वाले भी! फिर वह अपने विरोधियों के अन्य साधनों को भी नष्ट करने लगा। वायु के तीव्र वेग के समान उसने सभी उद्यानों को उजाड़ डाला। जल के साधनों को मिटा डाला। उसका वह उग्र रूप बहुत भयंकर था, जिसके सामने उन शक्ति-सम्पन्न तपस्वियों की एक न चली और वे अपने पंचभूत के बने शरीर को उसके सम्मुख तड़पता छोड़ परलोक सिधारे। वह सोचता था—अगर वह इन्हें समाप्त न कर देगा तो वे जल्दी ही उसे मिटा डालेंगे—फिर, उसका वह कर्म अधूरा और इच्छा अपूर्ण रह दोनों उसी के साथ मृत्यु के गहरे गर्त में समा जायेंगे। और यह उसे रुचिकर न था। फिर, उसका वह रूप और भयंकर हो उठा।

मगर जब उसके बड़े भाई कुबेर ने चन्द्रमा के समान निर्मल कैलाश के शिखर पर अपनी नवीन बसाई हुई पुरी मे बैठे हुए छोटे भाई दशकंधर के इस उग्र रूप का समाचार सुना तो उसे बड़ी ग्लानि हुई। उसने सोचा, दुश्मनों के साथ मिलकर वह अपने ही एकाधिपत्य पर आघात कर रहा है, वह मूर्ख है—और अपने छोटे भाई की यह मूर्खता उससे सहन न हो सकी। मगर वह जानता था—दशकंधर की शक्ति अपरिमित है, वह उस

दंड नहीं दे सकता। धन देकर भी उसे सन्तुष्ट नहीं किया जा सकता। भेद की नीति को व्यवहार में लाना निरी मूर्खता होगी। केवल साम का ही सहारा लिया जा सकता है--इसीलिये उसने अपने भाईपन का बहाना लेकर इस आशय के सन्देश के साथ एक दूत भाई दशकंधर के पास भेजा। कुबेर का यह दूत जब लंका में पहुँचा तो विभीषण ने उसका आदर-सत्कार कर कुबेर और जाति वालों का कुशल समाचार पूछा। फिर, उसने उस दूत को अपने बड़े भाई दशकंधर के सम्मुख ला खड़ा किया। लंकाधिपति दशकंधर उस समय राज सभा में अपने मनोहर कान्ति वाले स्वर्ण के बने सिंहासन पर बैठा हुआ था। कुबेर का वह दूत तेज से दमकते हुए राक्षसेन्द्र दशकंधर को देख, विस्मित हो, जय-जयकार कर मौन हो गया। कुछ क्षणों के पश्चात, आज्ञा पा, वह बड़े ही विनीत-भाव से कहने लगा—'हे राजन! आपके भ्राता ने कहा है कि आपने अब तक जो कुछ किया, वह बहुत हुआ। अब भविष्य में आपको ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहिये। आपने नन्दन कानन को नष्ट-भ्रष्ट कर डाला है, बहुत से ऋषियों को मार डाला है—इसका आपसे बदला लेने के लिये यहाँ सब लोग संगठित हो रहे हैं। हे राक्षस राज! बालक यदि अपराध करे, तो भी, बान्धव उसकी रक्षा करते हैं--इसलिये, यद्यपि तुमने मुझे अपमानित कर लंका से निकाल दिया है, तथापि तुम्हारी रक्षा करना मेरा कर्तव्य है। मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा। अब, कठिन योग को साध कर मैंने रुद्र को प्रसन्न कर लिया है। वह मेरे मित्र हो गये हैं। उनके पास से जब मैं अपनी पुरी में वापस लौटा तभी मैंने तुम्हारे इस पाप-कर्म की कहानी को सुना। अब तुम ऐसे अधार्मिक कृत्यों को बन्द करो।'

कुबेर के दूत के ये वचन सुन दशानन के बड़े बड़े नेत्र क्रोध के कारण जल उठे। अपने दाँतों को कट-कटा, हाथों को मसलकर वह कहने लगा—'हे दूत! तूने जो बात कही, उसे मैं समझ गया। जिसने तुझे मेरे पास भेजा है, मेरा वह भ्राता और तू अब कुछ ही देर के लिये इस संसार में मेहमान हो। शिव के साथ मित्रता कर लेने की बात कह कर वह मुझे डराना चाहता है। कुबेर को अपना बड़ा भाई समझ कर मैं उससे कुछ भी नहीं कहना चाहता था: मगर अब मैं जरूर उसे संसार से विदा कर दूँगा। अब मैं चारों लोकपालों से युद्ध करूँगा।'

इतना कह लङ्केश ने इनको उसी समय मार डाला। फिर, वह स्वस्तिवाचन करा, रथ पर चढ़, अपनी सेना को ले, कुबेर के साथ युद्ध करने के लिए उस स्थान को चल दिया।

संग्राम के लिये उत्सुक श्रीमान् दशकन्धर अपने छह मन्त्रियों—महोदर, प्रहस्त, मारीच, शुक, सारण और धूम्राक्ष के साथ बड़ी तीव्र-गति से कैलाश पर्वत की ओर चला जा रहा था। अनेक क्षत्रिय राजाओं के राज्यों में पड़ने वाले वन-उपवन, नदी-पहाड़ों को लाँघता हुआ जब वह कुबेर के राज्य के निकट पहुँचा तो हर्ष से गद्गद् हो उत्साह से भर गया। मगर अबकी बार कुबेर ने भी युद्ध की लालसा आये हुये अपने भाई का स्वागत वीरोचित रीति के अनुसार ही करना उचित समझा और वह तत्क्षण युद्ध करने के लिये प्रस्तुत हो गया।

इसलिये जब कुबेर की सेना दशकन्धर की सेना के साथ युद्ध करने के लिये आगे बढ़ी तो लङ्केश की सेना का क्षोभ समुद्र के समान बढ़ने लगा। मगर कुछ ही देर में अपनी सेना को व्यथित होता हुआ देख दशानन के

क्रोध की सीमा न रही। वह अपने मन्त्रियों को साथ में ले आगे बढ़ा। कुबेर के सेनापतियों ने जब उसे अपनी फ़ौज के अग्रभाग में घुसते हुए देखा तो वे उस पर शक्ति, तोमर, तलवार, मूसल और गदाओं से भीषण प्रहार करने लगे। परन्तु जिस प्रकार सहस्रों धाराएँ पड़ने पर भी महीधर को कोई कष्ट नहीं होता, उसी प्रकार सेनापतियों के शस्त्रों की मार से उस पर कुछ प्रभाव न हुआ। वह आगे बढ़ रहा था। वायु जिस प्रकार अपने प्रबल वेग से मेघों को उड़ा देता है, उसी प्रकार दशकंधर के वे मन्त्री कुबेर के सैनिकों को छिन्न-भिन्न कर यमलोक पहुँचा रहे थे। उस समय कुबेर की सेना मे चारों ओर हा-हा कार मचा था। मगर उसी समय कुबेर के सहायक संयोधकण्टक के सेना सहित वहाँ पहुँचने पर कुबेर की भागती हुई सेना फिर लौट पड़ी। संयोधकण्टक ने युद्ध-क्षेत्र में पहुँचते ही मारीच पर अपने चक्र से प्रहार किया, वह पृथ्वी पर गिर पड़ा; मगर उसी समय सँभल कर वह उठा और संयोधकण्टक पर अपनी गदा से गहरा प्रहार कर वह उसके साथ फिर युद्ध करने लगा। मगर थोड़ी देर मे संयोधकण्टक थक कर चूर हो, युद्ध-क्षेत्र से भाग खड़ा हुआ। अपने राजा को भागता हुआ देख, उसकी बची-खुची सेना भी भाग खड़ी हुई।

तब कुबेर का सर्वोच्च सेनापति महाबाहु मणिभद्र नई सेना लेकर युद्ध-क्षेत्र मे आगे आया। उसके साथ के वे सभी सैनिक वीर, पराक्रमी और तुमुल-युद्ध के विशेषज्ञ थे। वे सभी 'युद्ध दान कर' 'अस्त्र का प्रहरा कर' कहते हुये, दशकंधर की सेना के साथ घोर युद्ध करने लगे। वे शीघ्रता मे झपट-झपट कर गदा, मूसल, प्रास, तोमर, शक्ति और मुगदरों से उनका नाश कर रहे थे। तब प्रहस्त, महोदर और मारीच ने वहाँ पहुँच कर अपने सैनिकों की

रक्षा की। इसी समय धूम्राक्ष ने क्रोध में भर कर मणिभद्र के वक्षःस्थल पर मूसल का प्रहार किया, परन्तु उसने उस वार को रोक, अपनी गदा को घुमाकर धूम्राक्ष के सिर पर दे मारा। धूम्राक्ष का सिर फट कर दो टूक हो गया। वह खून में नहा, विह्वल हो पृथ्वी पर गिर पड़ा।

धूम्राक्ष की ऐसी दशा देख दशानन स्वयं मणिभद्र पर झपटा। तब मणिभद्र ने क्रोध में भरकर अपनी ओर आते हुए दशानन पर शक्ति का प्रहार किया। मगर शक्ति के उस प्रहार को सहन कर, दशानन ने मणिभद्र के सिर पर अपनी तलवार से वार किया। और वह घायल होकर युद्धक्षेत्र से हट गया। उसी समय दशकंधर ने देखा उससे कुछ दूरी पर कुबेर अपनी गदा के प्रहार से उसके मन्त्रियों की बुरी दशा कर रहा है और वे उसका आघात सह न सकने के कारण सभी युद्ध से पराङ्मुख हुए जा रहे हैं। यह देख कर वह उसी ओर बढ़ा, तभी, कुबेर ने अपनी ओर आते हुए दशकंधर पर आग्नेय अस्त्र छोड़ा, मगर उसने उसी क्षण वारुणास्त्र मार कुबेर के इस अस्त्र को निष्फल कर दिया। इतने ही में कि कुबेर उस पर कोई दूसरा प्रहार करे, उसने बाणों की वर्षा से, कुबेर को ढक-सा दिया। फिर, कुबेर के समीप पहुँचते ही उसने अपनी बड़ी भारी गदा को घुमाकर उसके शीश पर दे मारी। उस गदा के प्रहार से कुबेर लोहुलुहान हो जड़-कटे अशोक के वृक्ष के समान पृथ्वी पर गिर पड़ा। तुरन्त ही कुबेर के सैनिक संज्ञा-शून्य कुबेर को भूमि में से उठा वन की ओर ले भागे।

इस प्रकार अपने बड़े भाई धनाध्यक्ष कुबेर को युद्ध में परास्त कर लंकाधिपति दशकंधर ने उसके पुष्पक विमान को भी अपने अधिकार में कर लिया। कुबेर के साथ युद्ध का यह विजय-सूचक चिह्न उसके मन को

बहुत भाया। पुष्पक विमान देखने में बहुत सुन्दर प्रतीत होता था। स्वर्ण के बने उसमें स्तम्भ लगे थे—तोरणों पर वैदूर्य मणि जड़ी थीं। मोतियों की जालियों से गढ़ा हुआ वह बहुत ही शोभा-सम्पन्न दीख पड़ता था। उसमे स्वर्ण की सीढ़ियाँ बनी थीं और तपे हुये स्वर्ण की वेदी। उस अक्षय विमान मे मनोहर चित्र-चित्रित किये गये थे। वह सभी ऋतुओं में सुख देने वाला और सभी आवश्यक वस्तुओं से पूर्ण था।

जब विजय-श्री से विभूषित दशकंधर, मन्त्रियो सहित उसमें बैठा तो युद्ध का सारा श्रम पलक-मारते न जाने किधर समा गया। विजयोल्लास में भरा हुआ वह कैलाश पर्वत से उतर, निमिषमात्र में लङ्का आ पहुँचा। जीत की इस ख़ुशी में लंका मे खुशियाँ मनाई गईं। श्री सम्पन्न दशकंधर ने इस ख़ुशी मे निर्मल किरीट और बहुमूल्य हार पहिन राज सभा की। राज-सभा मे बैठा दशकंधर, उस समय वह अग्नि के समान दीपित हो रहा था। तब प्रसन्नता के इस अवसर पर उसने कहा—'आज से मेरे राज्य मे प्रत्येक व्यक्ति अपने विषय में पूर्ण स्वतन्त्र होगा। वह निर्णय कर, स्वयं को सुखी बनाने के लिये, कोई भी कर्म कर सकता है।' इतना कह वह चुप हो गया।

उसके चुप होते ही चारो ओर से उसकी जय-जयकार होने लगी उसी समय वह सभा से उठ मन्दोदरी के महलो की ओर चला गया।

: पाँचवाँ अध्याय :

: विश्व में चारों ओर :

धनाध्यक्ष कुबेर पर विजय प्राप्त करने के बाद दशकंधर स्वयं को बहुत अधिक शक्तिशाली अनुभव करने लगा। उसने अब संसार को विजय करने का दृढ़ निश्चय कर लिया। अपने इस विचार को मूर्ति-रूप देने के लिये यह आवश्यक था कि वह संसार की भौगोलिक स्थिति को भली प्रकार समझ ले; साथ ही प्रत्येक देश के राजा की शक्ति का अनुमान कर लेना भी उसे जरूरी था। अपने इसी विचार से प्रेरित हो वह संसार के भ्रमण के लिये निकल पड़ा।

लंका से निकल जब वह महासेन कार्तिकेय की जन्म-भूमि विशाल शरवन में पहुँचा तो रमणीय वन वाले उस पर्वत के ऊपर उसके विमान की गति रुक गई। यह देख, आश्चर्य में भर कर वह अपने मन्त्रियों से कहने लगा—'यह कार्य पर्वत पर रहने वाले किसी व्यक्ति का है, मैं उसे अभी मृत्यु को सौंपे देता हूं।'

इस बात के पूर्ण होते ही उसने पर्वत पर चारों ओर देखा!—तभी मारीच ने उत्तर की दिशा में अपनी एक उँगली से संकेत करते हुये कहा—'वह, वह कृष्ण—पिंगल वर्ण वाला वह व्यक्ति! शायद वह इधर ही आ रहा है।'

और कुछ क्षणों मे वह व्यक्ति विमान के ठीक नीचे आकर खड़ा हो गया। दशकंधर ने देखा, उस व्यक्ति का सिर मुड़ा हुआ है। भुजाएँ

बहुत छोटी-छोटी हैं। वह बौना विकट और भयंकर है। तभी, निर्भयचित्त से वह दशकंधर से कहने लगा—'हे दशानन! मेरा नाम नन्दी है। शिवके अनुचर होने के नाते जो मे तुमसे कहता हूं, उसे सुनो। तुम्हारा कल्याण इसी मे है कि तुम यहाँ से उल्टे लौट जाओ। महादेव इस पर्वत पर सर्वदा क्रीड़ा करते रहते हैं, यह मार्ग सभी के लिये बन्द है, तुम इधर से नहीं जा सकते।'

शिव के वाहन नन्दी के ऐसे वचन सुन दशकंधर क्रोध में भर गया। उसके कानो के कुंडल हिलने लगे। 'महादेव कौन है', इतना कह वह पुष्पक विमान पर से उतर पर्वत पर खड़ा हो फिर कहने लगा—'अरे बैल! तेरे प्रभु शिव किस शक्ति के भरोसे, राजाओं के समान यहां सर्वदा क्रीड़ा करते रहते हैं—जरा, मै भी तो देखूँ। जिस पर्वत क कारण विमान की गति रुक गई है, मै अपनी शक्ति से उस पर्वत को ही समाप्त किये देता हूं।'

दशकंधर के इन कटु-वचनों को सुन नन्दी क्रोध में भर कुछ कहना ही चाहता था; परन्तु किसी बात का स्मरण आते ही वह लौट पड़ा। अभी वह अपने प्रभु के समीप पहुँचा ही था कि पर्वत को काँपते देख उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसने देखा, शंकर के सभी गण काँप रहे हैं। माता पार्वती ने, डर कर, शिव का सहारा ले लिया है। वह स्वयं भी डगमगा रहा था और उसके प्रभु शंकर भी! फिर तभी यकायक पर्वत का काँपना रुक गया—सहसा उसने सुना, किसी के रोष-पूर्ण रोने का भयंकर शब्द! बिजली की कड़क के समान वह ध्वनि फिर समूचे संसार में व्याप्त हो गई। मगर उसके प्रभु शिव मन्द-मन्द मुसकरा रहे थे।

उधर दशकंधर के मन्त्रियों ने जब उसे रोते हुये देखा तो वे विस्मित ही उससे कहने लगे—'हे दशानन ! उमापति द्वारा छोड़ी गई उस शक्ति ने आपके शरीर में प्रवेश कर आपको विकल कर दिया है। आप नम्रता पूर्वक महादेवजी की स्तुति कर उनकी शरण लीजिये। वह प्रसन्न होकर आप पर दया करेंगे।'

तब दशानन ने मन्त्रियों के इस प्रकार कहने पर नम्र बन सामवेद में कहे हुये अनेक प्रकार के स्तोत्रों से महादेव की स्तुति की और शीघ्र ही प्रसन्न हो जाने वाले भूतनाथ पर्वत की तलैटी मे पड़े दशकंधर के पास आ कहने लगे—'हे दशानन ! तूने जो वीरता भरा दारुण सिंहनाद किया है, इससे तू संसार में रावण नाम से प्रसिद्ध होगा। तेरी वीरता से मैं प्रसन्न हूँ। तू इस खड्ग को धारण कर, यह तेरे ही योग्य है। अब हे पुलस्त्यनन्दन ! मैं तुझे आज्ञा देता हूं, तू जिस मार्ग से जाना चाहता हो, विश्वस्त होकर चला जा।'

तब दशानन महादेव को प्रणाम कर पुष्पक विमान पर चढ़ गया। इस प्रकार वह देश-देशान्तरों में विचरण करता हुआ; वहाँ के क्षत्रिय राजाओं को पीड़ा देने लगा। उनमे से कुछ युद्धदुर्मद तेजस्वी शूर क्षत्रिय, उससे युद्ध कर अपने बन्धु बाँधवों सहित नष्ट हो गये और दूसरे कुछों ने उससे डर कर उसकी आधीनता स्वीकार करली।

फिर, उन्हीं दिनो एक बार जब वह हिमालय के पास वाले एक वन में घूम रहा था, उसने एक अनुपम रूप वाली कन्या को ऋषि प्रोक्त अनुष्ठान मे परायण देख बड़ा कौतूहल प्रदर्शित किया। वह काम में व्याकुल हो, महाव्रत धारिणी उस रूपवती कन्या के पास जा, कहने लगा—

'हे भद्रे !'तुम किसकी कन्या हो और इस व्रत को किसके लिये कर रही हो ? यह कठोर तपस्या तुम्हारे इस रूप के प्रतिकूल है, तुम्हारे यौवनकाल के विरुद्ध ! हे भीरु ! तुम्हारा रूप पुरुषों को काम की उन्मत्तता से विह्वल कर देने वाला है—इसीलिये, तुम्हारा तपस्या में परायण होना उचित नहीं। मैंने तुमसे यह एक सिद्धान्त की बात कही। हे वरानने ! तुम्हारा स्वामी कौन है ? तुम जिसके साथ संभोग करती हो, संसार में वह पुरुष भाग्यशाली है। फिर, अब तुम किस इच्छा से इस कठोर परिश्रम को कर रही हो ?'

रावण के इस प्रकार पूछने पर वह कन्या कहने लगी—'हे राजन् ! अमितप्रभ वृहस्पतिनन्दन ब्रह्मर्षि कुशध्वज मेरे पिता थे—उन्हें दैत्यराज शम्भु ने मुझे प्राप्त करने की इच्छा से सोते समय मार डाला। मेरे पिता की इच्छा थी कि वह विष्णु को अपना जामाता बनाएँ। अपने मृत पिता की इच्छा को पूर्ण करने के लिये ही मैंने इस योग को साधा है। वह विष्णु ही मेरे पति हैं मेरी प्रतिज्ञा है। मेरी प्रतिज्ञा है, वितिरिक्त अब मैं संसार में किसी दूसरे पुरुष को अपना पति नहीं बनाऊँगी। अब उन्हीं को प्राप्त करने के लिये मैं ऐसे कठोर नियमों का पालन कर रही हूँ। मेरा नाम वेदवती है। लेकिन अब तुम यहाँ से जाओ।'

मगर रावण कामवाण से पीड़ित हो उससे कहने लगा—'हे मृगशावाक्षी ! वृद्धा स्त्रियों को ही यह सब कुछ शोभा दे सकता है। तुम तो सर्वगुण सम्पन्न और रूप-लावण्य की खान हो—तुम्हारा यौवन यूँही बीता जा रहा है। हे भद्रे ! मैं लंका का स्वामी हूँ और दशकंधर नाम से प्रसिद्ध ! तुम लंकाधिपति की भार्या बन सुख पूर्वक संसार के भोगों को भोगो।'

इतना कह रावण आगे बढ़ उसे पकड़ना चाहता ही था कि वेदवती अपने सामने जलती हुई अग्नि में कूद भस्म होने लगी। वेदवती नाम की उस कन्या को इस प्रकार जलता हुआ देख रावण अपने विमान पर चढ़ आकाश में विचरण करने लगा।

फिर, कुछ दिनों के बाद, उशीर बीज देश के राजा मरुत्त को हरा कर वह लंका में लौट आया।

: छटवाँ अध्याय :

: युद्ध-रत दशकंधर :

संसार भर की यात्रा कर लेने के पश्चात् उस समय के विश्व के विषय में उसकी जानकारी बहुत अधिक बढ़ गई । अपनी इस यात्रा में उसने संसार की भौगोलिक स्थिति का अध्ययन तो किया ही; परन्तु उससे भी अधिक उसने विश्व की राजनीतिक अवस्था का वास्तविक ज्ञान संचय किया । उसने यह स्पष्ट देखा कि सभी क्षत्रिय राजा धर्म की आड़ लेकर, उसके खिलाफ आन्दोलन कर, संगठित हो रहे हैं और वे शीघ्र ही अपने अधीन उन सभी ब्राह्मणों की सहायता से उसे मिटा देने का अपना संकल्प पूरा करेंगे । फिर, ये दोनों वर्ग उसके इसलिये खिलाफ हैं, क्योंकि, उसने उनके मनमानी से बने संसार की जड़ों तक को हिला डाला है । वीरता और विद्वत्ता ने मिल-बैठ अपने एकाधिपत्य को सुरक्षित कर, जिस समाज का निर्माण किया है, उसने उसकी अवहेलना —क्योंकि, वह समाज मनुष्य की भावनाओं की कद्र नहीं करता । और वह स्वयं प्रत्येक मनुष्य की रुचि का ध्यान रख, उसे इच्छानुसार अपने लिये कर्म निर्धारित करने की स्वतन्त्रता देता है । केवल क्षत्रिय ही राजा हो, यह न्याय नहीं, अन्याय है और वह इसे मिटा कर ही दम लेगा । आगे आने वाली संतति के लिये वह मार्ग प्रशस्त कर देगा । वह इन चोली दामन के-से साथ वालों के बहकावे में न आये और अपने तईं वह स्वतन्त्र हो । इसीलिये उसने ब्राह्मण होते हुये भी अपने लिये क्षत्रियों के कर्म को चुना है—वह वीर है, स्वभाव से ही युद्ध-

प्रेमी ! वह इन सबको दिखला देगा—भगवान् क्षत्रियों में ही राजाओं को उत्पन्न नहीं करता—ब्राह्मणों, वैश्यों और शूद्रों में भी वे जन्म लेते हैं।

अपने इस विचार को अमिट और अमर बना देने के लिये वह सभी कुछ करेगा। जीवन का बलिदान तो वह हँसते हँसते कर सकता है। मगर उसे अपनी वीरता पर विश्वास है—वह जानता है, वह अपनी शक्ति के सहारे उन सभी को मिटा सकने की क्षमता रखता है और वह स्वयं मिटने से पहले उन सब को मिटा देगा। तभी उसने सब देशों की एक सूची तैयार कर उसमें अपनी सांकेतिक भाषा में सभी कुछ अंकित किया। उसके सभी मन्त्री बुद्धि में चतुर, युद्ध-विशारद और उसके सच्चे साथी थे। उन्होंने निश्चित समय से बहुत पहले ही आवश्यकता के अनुसार अपनी सेना की संख्या बढ़ा, उसे अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित कर, जब दशकंधर को इसकी सूचना दी तो उसकी आशा विश्वास में परिणित हो उससे बोली—'बढ़े चलो दशकंधर ! विजय निश्चित है !'

और उसी रात्रि को, मन्दोदरी को अपनी बाहुओं में कस, हर्ष से गद्गद् हो वह बोला—'सुन्दरे जीवन की कल्पना से ही मैं सिहर उठा हूँ। अब तुम, लङ्का की रानी, संसार की महारानी बनोगी।'

'सच' मन्दोदरी के नेत्र चमक उठे।

'हाँ हाँ प्रिये ! संसार पर विजय प्राप्त करने के लिये मैं कल ही कूँच कर रहा हूँ। तुम विश्वास करो। तुमसे फिर मिलने की अभिलाषा लेकर मैं विजय पथ पर आगे जा रहा हूँ। तुम्हारे सौभाग्य का यह सूर्य अटल और अमर है। तुम निश्चिन्त रहो।' उसने मन्दोदरी के मुख को चूम लिया और मन्दोदरी का वह चन्दन-चर्चित यौवन खिल-खिलाकर हँस पड़ा।

और दूसरे दिन अपने महल की छत पर खड़े होकर मन्दोदरी ने देखा—उगते हुये सूर्य के साथ, वह विराट् सैन्य-दल को साथ में ले, विश्व-विजय के लिये लंका के उस पार जारहा था। उससे बहुत दूर! मगर समूची लंका उसके जय-जयकार से अभी-भी गूँज रही थी। फिर, हर्ष और विषाद दोनों ही उससे एक साथ बोले—'लंके की रानी! तुम निश्चिन्त रहो! तुम्हारे सौभाग्य का यह सूर्य अटल और अमर है।' और मन्दोदरी ने आकाश के उस सूर्य के सम्मुख अपना आँचल फैला दिया।

और एक सप्ताह के पश्चात् दूत ने आकर उससे कहा—'महारानीजी! महाराज अब अयोध्या की ओर जा रहे हैं। मार्ग के सभी राजाओं ने उनकी आधीनता को स्वीकर किया है। दुष्यन्त, सुरथ, गाधि, गय और राजा पुरूरवा महाराज की जय-जयकार मना रहे हैं।'

दूत के ऐसे बचन सुन मन्दोदरी के हर्ष का पारावर न रहा। अपने गले से एक मोतियों की माला उतार, दूत को दे उसे उसने बिदा किया। और उस दिन, रात्रि को सारा महल प्रकाश से जगमगा उठा।

फिर, दूसरे दिन जब मन्दोदरी अपने महल में बैठी पुत्र मेघनाथ को गोदी में बिठा उसकी बलैयां ले रही थी—उसी समय उससे कोसों दूर, अयोध्या में, घमासान युद्ध हो रहा था। रावण की सेना के सम्मुख अपनी सेना को भुनगों के समान नष्ट होती देख अयोध्या के राजा अनरण्य के क्रोध की सीमा न रही। वह इन्द्र धनुष के समान रंगों वाले अपने धनुष पर बाण चढ़ा दशकंधर की ओर झपटा। और तब उसने अनगिनती बाण रावण पर छोड़े; मगर उसने उन सभी बाणों को मार्ग ही में काट, उसके समीप पहुँच, रथ में बैठे राजा अनरण्य के ऐसी ज़ोर से थप्पड़ मारा कि

वह रथ पर से गिर पड़ा। भूमि मे पड़े हुये अनरण्य के सम्मुख पहुँच दशकंधर ने कहा—'तूने मुझसे युद्ध कर क्या फल पाया ? मेरे सम्मुख आज संसार मे कौन है, जो टिक सकता है।' इतना कह रावण ने उसे वहीं समाप्त कर दिया।

इस प्रकार अयोध्या के राजा अनरण्य को यमलोक पहुँचा वह रसातल की ओर बढ़ा। अब आकर वह लगभग सभी क्षत्रिय राजाओ को परास्त कर चुका था। उनमे से कुछ उसके साथ युद्ध कर मारे गये थे और बाकी सब उसके आधीन हो चुके थे। मगर अब वह धर्म के उन ठेकेदारों पर भी चोट करना चाहता था, जो वास्तव मे इक तरफ़ा इस क़ानून के अग्र-दूत थे। जो अपनी शक्ति के बल पर सभी को अपने सामने नत-मस्तक होने के लिये बाध्य करते थे। जीवन जिनका सुख से व्यतीत होता था और जो सभी प्रकार के अपने शौकों को पूरा करने पर भी सभी के पूजनीय बने बैठे थे। भोगो मे रत रहकर भी जो पवित्र थे। संसार जिनकी पत्थर की बनी मूर्ति के सम्मुख भी झुक जाने मे अपना कल्याण समझता था। वे देवता! जिन्होने अपने अस्तित्व के सम्मुख साक्षात् परम-ब्रह्म परमात्मा के अस्तित्व को मिटा डाला था। जो, वास्तव में, भगवान के नाम लेने वाले के सम्मुख आकर कहते थे—पहले हमे याद करो, हमारी पूजा करो। हममें से—ये इन्द्र हैं—देवताओं के राजा! और ये वरुण, जो जल के अधिनायक हैं। यह नाराज़ हो जाने पर तुम सब ही को प्यास से तड़पा-तड़पा कर मार सकते है। और मै यम हूँ। तुमको तुम्हारे कार्यों के अनु-सार फल देने वाला।

वह सोच रहा था, इन सबको बिना मिटाये संसार का कल्याण होना असम्भव है। और वह इन्हें मिटा कर ही छोड़ेगा। तथा, उसने देखा—

नारदजी अपनी वीणा पर गुनगुनाते उसी की ओर चले आ रहे हैं । उसने अपने विमान की गति को रोक दिया । नारद जी के समीप आ पहुँचने पर उसने विमान से उतर उन्हें प्रणाम किया । फिर, कुशल समाचार पूछ लेने पर वह नारद जी से कहने लगा—'हे मुनिश्रेष्ठ मैंने सभी क्षत्रिय राजाओं को जीत लिया है और अब रसातल की ओर जा रहा हूं । फिर, इन सभी लोकपालों से युद्ध कर संसार से इनका अस्तित्व ही मिटा डालूँगा ।'

यह सुन नारद जी बोले—'मगर यह मार्ग तो यम के प्रेत राजपुर की ओर जाता है—तो, क्या पहिले तुम लोकपाल यम से युद्ध करोगे ? हे दुर्धर्ष अरिनाशन ' तुम्हें देखकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ । तुम महान् हो ।'

इतना सुन दशकंधर खिलखिला कर हँस पड़ा—फिर, शरद ऋतु के मेघ के समान कान्ति वाले नारद जी से बोला—'हे महाब्रह्मन् ! तो, पहिले मैं यम का ही वध करूँगा । इसलिये पहले मैं इस ओर ही जाऊँगा । प्राणियों को क्लेश देने वाले यम को मैं शीघ्र ही मृत्यु से से मिला दूँगा ।'

इतना कह उसने नारद जी को प्रणाम किया और अपने विमान पर चढ़ वह उसी दिशा में आगे बढ़ा ।

मार्ग-च्युत होने पर भी उसे मार्ग मिल गया है—सोच-सोच उसका उत्साह बढ़ रहा था । युद्ध के अपने सभी साधनों पर एक बार दृष्टिपात कर, यम के साथ युद्ध के विषय में आवश्यक आज्ञाएँ अपने बुद्धिमान् मन्त्रियों को उसने मार्ग ही में दे डालीं । अब वह शीघ्रातिशीघ्र यमपुरी पहुँच जाना चाहता था—उसने विमान की गति को और भी तीव्र कर दिया ।

———

: सातवाँ अध्याय :

: यमपुरी में युद्ध :

कुछ काल तक वायु की तीव्र गति के समान चलकर वह शीघ्र ही अपने अभिलषित स्थान के समीप पहुँच गया। सामने ही यमपुरी स्पष्ट दीख पड़ रही थी। उसने विमान की गति को बिलकुल ही रोक दिया। एक चौरस मैदान को देख वह वहीं उतर पड़ा। वह वहाँ ठहर कर अपनी सेना का इन्तज़ार करने लगा। तभी उसने सुना, कोई बहुत ही सुरीले स्वर में गा रहा था। फिर, दुख-पूर्ण चीत्कार की ध्वनि भी उसके कानों में पड़ी। उसने अनुभव किया—जैसे कोई सताया जाकर रह-रह कर चीखें मार रहा है। सामने उसने देखा—कुछ लाल रंग के घर दिखाई दे रहे थे। वह उसी ओर आगे बढ़ा। वहाँ पहुँच कर उसने देखा—भयंकर रूप वाले यमदूतों के पीटने पर लोग दुखभरी चीखें मार रहे हैं। बहुत से प्राणियों को जमीन में आधा गाड़ दिया गया है—उनको डरावनी शक्ल वाले कुत्ते नोच-नोच कर खा रहे है। एक दूसरे स्थान में लोग भूख और प्यास से ही तड़प रहे हैं। मगर वह सुरीला स्वर अभी भी उसके कानों में पड़ रहा था। लेकिन उसकी आत्मा कोलाहल से भर उठी। वह उन यमदूतों का यह अन्याय और अधिक सहन न कर सका। और उस बलवान् दशानन ने पराक्रम कर उन सभी को मुक्त कर दिया।

तो प्रेतरक्षक अति क्रुद्ध हो राक्षसेन्द्र-पर झपटे। वे सब मिलकर प्रास, परिघ, शूल, मूसल आदि का प्रहार एक साथ ही उस पर कर रहे

थे। मगर वह अपने युद्ध-चातुर्य के द्वारा उन सबके पारों को विफल कर अकेला ही उन सबसे जूझ रहा था। और तभी उसने देखा, एक साथ ही दोनों ओर के सैनिक वहाँ पहुँच युद्ध में संलग्न हो गये हैं। चारों ओर भयंकर मारकाट शुरू हो गई है। और उसने यह देख वाणों की अविरल वर्षा से समूचे युद्ध स्थल को एक बारगी ही ढक-सा दिया। फिर वह अपने रथ में बैठ युद्ध करने लगा। तब महाबली यम-सेना-दल शूल बरसाता हुआ रावण की ओर झपटा। मगर दशकंधर के प्रवीण सैनिकों ने उन्हें बीच ही में रोक उनके ऊपर अस्त्र-शस्त्रों की बौछार शुरू कर दी। यम के वे सैनिक भी युद्ध करने मे अद्वितीय थे—उन्होंने सामने पड़-गये उन विरोधियों को बड़ी शीघ्रता से मार कर पृथ्वी मे सुला दिया—फिर, वे उनकी तड़पती लाशों को रौंदते रावण की ओर बढ़े। वे हजारों की संख्या में आगे बढ़कर उस पर प्रहार करने लगे। वह अनवरत पड़ने वाली वर्षा के समान उस पर शूलों की वर्षा कर रहे थे। यम के सैनिकों की इस मार से उसका कवच टूट गया और वह अपने ही शरीर से निकले हुये रक्त से नहा-सा गया। तब उसने क्रोध मे भर कर पाशुपत नाम वाले दिव्य अस्त्र को धनुष पर चढ़ाया और यम के उन सैनिकों से, 'खड़े रहो' खड़े रहो' कह कर अपने धनुष को खींचने लगा। फिर, कान तक धनुष को खींच उसने उस वाण को छोड़ा। धनुष से अलग होते ही वह बाण दावानल के समान अपना रूप प्रगट कर सभी को भस्म करने लगा। यम के सभी सैनिक क्षण भर मे सूखे हुये वृक्षों के समान जलकर गिर पड़े। और वह भीषण सिंहनाद कर पृथ्वी को कंपाने लगा।

रावण के इस भीषण सिंहनाद की आवाज को जब विवस्वान के पुत्र यम ने सुना तो उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। अपने महारथियों

पर उसे गहरा विश्वास था—वह जानता था, उनकी शक्ति अतुल है, उनका पराक्रम अनोखा है। मगर रावण के मुख से निकली वह भयंकर आवाज़ स्पष्ट बतला रही थी कि वह उन योद्धाओं पर विजय पा रहा है। और अब उसे युद्ध-क्षेत्र में जाकर युद्ध करना ही होगा—उसने सोचा। फिर, वह मनोहर कान्ति वाले घोड़ों के द्वारा खींचे जाने वाले भयंकर रूप-रंग के अपने रथ में बैठ उस ओर बढ़ा। कुछ ही देर के पश्चात् जब वह रथ युद्ध-स्थल में पहुँचा तो रावण के सैनिक उसे देख, डर कर भागने लगे, अद्भुत पराक्रम और शक्ति वाले उसके वे मन्त्री भी भाग खड़े हुये; मगर दशकंधर, संसार को भयभीत कर देने वाले उस रथ को देख कर भी न तो क्षुब्ध ही हुआ और न भागा ही। वह यम को अपने सम्मुख देख उत्साह से भर गया। फिर, उसी समय उसने देखा—यम के द्वारा फेंकी गई शक्ति तेज़ी से उसकी ओर बढ़ी चली आ रही है और उसने उस शक्ति को, शीघ्रता से बाण छोड़, उसी स्थान पर काट डाला। यह देख कर यम ने और भी द्रुत-वेग से सैकड़ो शक्ति और तोमर उसकी ओर फेंक उसके मर्म-स्थानों को बिद्ध करना चाहा; परन्तु उसने सभी को अपने बाणों से मार्ग ही में काट डाला। फिर, वह बाणों की वर्षा कर,युद्ध-स्थल मे बहुत तेज़ी के साथ घूमने लगा।

और सात दिनों तक यह युद्ध रात-दिन लगातार इसी प्रकार चलता रहा; मगर उन दोनों मे से कोई भी युद्ध स्थल से विमुख न हुआ। तब दशकंधर ने यम के सूत को तीन बाण मार, यम के मर्म स्थानो पर चोट करने के लिये हजारो बाणो की वर्षा की। उस समय यम ने क्रोध में भर धूम्र-वायु-अग्नि मिश्रित बाण उस पर छोड़े; मगर दशकंधर ने उसके उन

बाणों को भी निष्फल कर दिया। यह देखकर यम को बहुत ही आश्चर्य हुआ और वह शीघ्रता से युद्ध स्थल में हट कहीं दूर चला गया।

यम को युद्ध से विमुख और इस प्रकार उसे परास्त कर दशकंधर अपने घावों की पीड़ा को क्षण भर में ही भूल गया। उस समय सारी यमपुरी उसका अभिनन्दन कर रही थी। भागे हुये उसके सैनिक और मन्त्री आ-आकर उसके चारों ओर इकट्ठा हो रहे थे और उसकी जय-जयकार कर आकाश को गुँजा रहे थे।

———

: आठवाँ अध्याय :

: वरुण कुमारों से युद्ध :

अपने विरोधियों को अमानुषिक यातनाएँ दे देकर-मार डालने वाले वीभत्स यम को परास्त कर दशकंधर को बहुत सुख मिला। उस समय वह यम ही था, जिसके दंड से डर कर अनेक अपनी इच्छा के प्रतिकूल समाज के उन कठोर नियमों के सामने अपना शीश झुकाते थे। और उनकी अवहेलना करने वाले भयङ्कर दंड पाते थे। जिस समाज में स्त्रियों को पति के शव के साथ चिता की अग्नि में जीवित जल जाना पड़ता था। शूद्रों को भगवान के भजन का भी अधिकार प्राप्त न था। सुन्दर स्त्रियों का जीवन वीरों की इच्छा पर निर्भर था, जिन्हें कहीं भी अकेला पा कोई भी वीर बलात् अपने रथ में बिठा ले भागता था। मनुष्य की आत्मा का जिसमें कोई मूल्य न था—प्रत्येक मनुष्य को उन कठोर नियमों में बँधकर ही सुख से अथवा दुख से जीवन-यापन करना पड़ता था। और जो नियम केवल वृद्धों ने मिल—बैठ बना लिये थे--बिना दूसरों की सुविधा का विचार किये हुये!

फिर, उन नियमों का कठोरता से पालन कराने वालों का मुखिया था —यम! जिसका रूप भयंकर और हृदय दया से शून्य था। जिसने 'कालदण्ड' अथवा उस समय के दण्ड के रूप में मनुष्य की मृत्यु को ही उसके लिये सर्वोपरि दंड समझ रखा था। हृदय हीनता की भी जिसकी हद थी। जिसे मनुष्य को तड़पा-तड़पा कर मारने में एक अनोखे आनन्द का

अनुभव होता था । फिर, जिसे उन कुछ ने 'धर्मराज' की उपाधि से विभूषित कर इस प्रकार के अनुमानुषिक कार्य करने की खुली छुट्टी दे रक्खी थी । और आवश्यकता के समय जिसे वे सब प्रकार की सहायता भी प्रदान करते थे—वे कुछ, जो मानव-धर्म के दुश्मन और भगवान को अपने तक ही सीमित रखना चाहते थे।

और यम वा वह मृत्युरूपी कालदंड, जिसका प्रयोग अब तक केवल निरीह और बेबस बेचारे उस प्राणी तक ही सीमित था, जिसको बाँध—लाकर उसके सामने खड़ा कर दिया जाता था, अब तक मगर जिसके द्वारा हज़ारों—लाखों को अपनी उस दुःख पूर्ण मृत्यु का आलिंगन करना पड़ा था । लेकिन इस कठिन दण्ड को दशंकंधर को न दिया जा सका— क्योंकि वह दुर्धर्ष, वीर, निडर और साहसी था । उसने तो अपनी शक्ति के सहारे, इस दंड के अधिनायक यम के घर मे घुस उसे वहीं पर परास्त किया। फिर इस दमनचक्र मे रावण को कैसे पीसा जा सकता था । इसके विपरीत उसने तो उन हज़ारों का उद्धार किया, जिन्हें यम के दूत नाना प्रकार की यन्त्रणाएँ दे-देकर मर जाने के लिए विवश कर रहे थे—और वह खुश था।

मगर वह दुःखी भी—और दुःख उसे इस बात का था कि वह हृदयहीन यम उससे बचकर निकल गया— उन कुछ की सहायता से जो आवश्यकता पड़ने पर उसकी हमेशा मदद करते हैं। वह उसे मृत्यु के मुख में न झोंक सका और उसे दुःख था। दुनियाँ को प्रताड़ित कर, उसे ख़ून के आँसू रुलाने वाला वह दुश्मन, जीवित रह गया । उसके हृदय में एक हूक-सी उठी और वह बोला—'धीरज धर, अधीर मन ! फिर सही ।' वह चुप हो गया ।

और अब तो वह अपने निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार रसातल को जा रहा था। उसने प्रतिज्ञा की है, वह इन चारों लोकपालों से युद्ध कर उन्हें परास्त करेगा! कुबेर को वह हरा चुका और यम को भी! और अब वह वरुण पर विजय प्राप्त करने के लिये रसातल को जा रहा था। यह सोच उसने विमान की गति को और भी तीव्र कर दिया। फिर कुछ ही देर पश्चात् भोगवती पुरी को देख वह वहीं उतर पड़ा। मगर भोगवती पुरी के राजा वासुकि ने उससे बिना युद्ध किये ही अधीनता को स्वीकार कर उसके साथ सन्धि करली। तब, वह मणिमयी पुरी की ओर बढ़ा। मणिमयी पुरी नामक नगरी निवातकवच नाम के दैत्यों की राजधानी थी। ये दैत्य बहुत ही वीर और पराक्रमी थे। उस नगरी के समीप पहुँच कर जब रावण ने उन दैत्यों को युद्ध के लिये ललकारा तो वे सब क्रुद्ध हो शूल, त्रिशूल, कुलिश, पट्टिश और तलवार लेकर उसके साथ युद्ध करने लगे। और इस प्रकार जब रावण और उन दैत्यों को परस्पर युद्ध करते हुये एक वर्ष व्यतीत हो गया मगर उन दोनो मे से किसी ने भी हार स्वीकार न की तो पितामह ब्रह्मा ने बीच में पड़कर आपस में सन्धि करा दी।

यह सन्धि हो जाने के पश्चात् उन दैत्यो ने रावण का बहुत अधिक मान किया और उसे अपने यहाँ महमान बनाकर एक वर्ष तक रोके रखा। इस बीच, वहाँ रह कर उसने बहुत सी मायाएँ सीखीं, जो बाद में चलकर उसे बहुत अधिक मूल्यवान साबित हुईं। फिर, एक वर्ष के पश्चात्, जब वह मणिमयी पुरी से विदा होने लगा तो दैत्यों ने अनेक बहुमूल्य वस्तुएँ उसे भेंट में दे, उसका और अधिक मान किया।

इस प्रकार वह मणिमयी पुरी से बिदा हो कुछ समय के पश्चात् कालकेयों से सेवित अश्मनगर में पहुँचा। वहाँ पहुँचते ही उसने बली कालकेयों को युद्ध करने के लिये बुला भेजा। कालकेयों ने इसे अपना अपमान समझा और वे उसके पास पहुँच युद्ध करने लगे—मगर रावण ने बड़ी शीघ्रता से उन सभो को मार डाला। उन्हीं में शूर्पणखा का स्वामी बलवान् बलोत्कट विद्युज्जिह्व भी उसकी तलवार से मारा गया।

तब वह वरुण के निवास-स्थान को खोजता हुआ रसातल में घूमने लगा। लगातार कई दिनों तक इसी प्रकार घूमते-घूमते एक दिन उसने कैलाश के शिखर के समान दमकते हुये और पाण्डुर वर्ण के मेघ के समान दिव्य, वरुण के उस भवन को देखा। वरुणपुर के मध्य में स्थित वरुण का वह भवन रावण को इतनी दूर से बहुत ही सुन्दर और सुडौल दीख पड़ रहा था और उसी ओर बढ़ता हुआ जैसे-जैसे वह उसके समीप पहुँचता जाता था—उसी तरह उसकी शोभा और भी बढ़ती चली जा रही थी। इस प्रकार उस भवन को देखता हुआ जब वह वरुण पुर नगर के बहुत समीप पहुँच गया तो उसने देखा वह नगर जल की अनेक धाराओं से सुरक्षित किया हुआ है। नगर के द्वार पर बहुत से योद्धा प्रतिक्षण सतर्क रह कर, पहरा दे रहे हैं। नगर की चार दीवारी बहुत ही सुन्दर और मज़बूत है। नगर को घेरने वाली उस दीवार पर भी बहुत से योद्धा उसे दीख पड़े।

तब उसने कुछ सोचा और द्वार के उन रक्षकों से जाकर कहने लगा—'हे द्वार के रक्षको! तुम राजा वरुण से जाकर कहो कि वह मेरे साथ युद्ध करे अथवा कह दे कि मैं राजा रावण से हार गया।'

इतना कह कर वह अपनी सेना के पास लौट आया, जो कि नगर से कुछ दूरी पर युद्ध की अभिलाषा से वहाँ पड़ी हुई थी। फिर, वह अपने मन्त्रियों को युद्ध के विषय में कुछ आदेश दे देने के बाद राजा वरुण और उसकी सेना का इन्तजार करने लगा।

इधर जब वरुण कुमारों ने अपने पिता की अनुपस्थिति में युद्ध की अभिलाषा से आये हुये रावण की बात सुनी तो उन्होंने अपने मन्त्रियों से मन्त्रणा कर उसके साथ युद्ध करना ही निश्चित् किया। तब वरुण के पुत्र पौत्र तथा गौर और पुष्कर नामक दो सेनापति कुपित हो नगर से बाहर निकले। वे अपने-अपने रथों पर चढ़कर असंख्य सेना से घिरे हुये जब रावण की सेना के समीप पहुँचे तो बुद्धमान् रावण ने तुरन्त ही युद्ध करना शुरू कर दिया। दशकंधर के महावीर्यवान् मन्त्रियों ने वरुण कुमारों की सेना को कुछ ही देर में छिन्न-भिन्न कर डाला। उनमें से बहुत-से सैनिक मारे गये, कुछ अपने प्राणों के मोह से युद्ध स्थान से विमुख हो गये। तब वरुण कुमारों के क्रोध की सीमा न रही। वे भूमि को त्याग अपने शीघ्रगामी रथों में बैठकर, आकाश में स्थित पुष्पक विमान में बैठे हुये दशकंधर से तुमुल युद्ध करने लगे। उन्होंने अग्निबाणों की वर्षा कर रावण को युद्ध से विमुख कर दिया। यह देखकर महोदर क्रोध से भर गया। उस समय उसने मृत्यु के भय को बिल्कुल भुला दिया। तब उसने वरुण कुमारों के उन पवनवेगी घोड़ों पर अपनी गदा से प्रहार किया। उसकी गदा की चोट सह न सकने के कारण मूर्छित हो वे घोड़े भूमि पर गिर पड़े। रथ टूट-फूट गये। यह देख महोदर सिंहनाद करने लगा।

तभी, वरुणकुमार दूसरे रथों पर चढ़कर फिर आकाश में पहुँचे। अब की बार उन्होंने शीघ्र ही महोदर को युद्ध से विमुख कर दिया—तब वे वज्र के समान कठोर बाणों की वर्षा कर रावण को भी पीछे हटाने लगे—तो रावण कालाग्नि के समान क्रोध में भर उनके मर्म-स्थानों में महाघोर बाण मारने लगा। बाणों की वर्षा के बाद उसने फिर विचित्र प्रकार के मूसलों, भालों और पट्टिशों की झड़ी लगा दी। और इस प्रकार वरुण कुमारों को विह्वल कर, फिर उसने हर्ष मे भर महामेघ के समान गम्भीर गर्जना की। कुछ ही देर के बाद उसने उनके घोड़ों को भी मार डाला और उनके रथों को तोड़, अनेक प्रकार के आयुधों की मार से उन्हें मूर्छित कर पृथ्वी पर गिरा दिया। इस प्रकार मूर्छित हो वरुणकुमार जैसे ही पृथ्वी पर गिरे, उनके अनुचर उन्हें तुरन्त ही उठा रणक्षेत्र से दूर ले गये। तब पराक्रमी राक्षसेन्द्र रावण वरुण के सैनिकों से कहने लगा—'अब तुम वरुण से जाकर कहो कि वह मुझसे लड़ने आये।' तो वरुण के प्रहास नाम वाले मन्त्री ने रावण से कहा—'हे महाराज! जिनको आप युद्ध-स्थल में बुलाते हैं, वह वरुण तो गाना सुनने के लिये कहीं बाहर गये हुये हैं। अब आपका परिश्रम करना व्यर्थ है। हे वीर! जो वरुण कुमार यहाँ पर थे, उनको तो आप हरा ही चुके।'

इस बात को सुन दशकंधर ने वरुण के इन्तजार में वहाँ पर पड़े रहना अपनी मूर्खता समझी; क्योंकि उसे लंका को छोड़े हुये अब काफी समय व्यतीत हो चुका था। और वह हर्षनाद करता हुआ उसी दिन वहाँ से लंका की ओर चल दिया।

: नवाँ अध्याय :

: लंका में केवल एक दिन :

उस समय की प्रचलित रीति के अनुसार वीरों द्वारा नारियों का अपहरण एक सामान्य सी बात थी। बल्कि, यह वीरों का एक गुण समझा जाता था। अपहृत उस महिला के सगे-सम्बन्धी अगर इतने शक्तिशाली हैं कि वे अपनी स्त्री, कन्या अथवा बहिन का अपहरण करने वाले उस व्यक्ति-विशेष से इसका बदला चुका सकें तो ठीक है, अन्यथा, समाज उसके विपरीत कुछ भी नहीं करता था। फिर, शायद यह भी ठीक ही हो कि यह प्रथा सामान्य लोगों में प्रचलित न थी। वीरों के इस युग मे इस मनोवृत्ति का विकास केवल उन लोगों तक ही सीमित था—और यह भी अधिकतर इसलिये कि इस प्रकार वे एक-दूसरे को नीचा दिखाने मे समर्थ होते थे। तभी तो इस तरह के अनगिनत उदाहरणों से हमारा इतिहास भरा पड़ा है।

फिर, यह दुर्गुण प्रचुर मात्रा मे दशकंधर जैसे वीर शिरोमणी में भी दीख पड़ता है। वरुणकुमारों को युद्ध में परास्त कर जब वह वरुणपुरी से लंका की ओर चला तो मार्ग मे पड़ने वाले अनेक राजाओं की कन्याओं, बहिनों और स्त्रियों का अपहरण उसने जी-खोलकर किया। उसने जिस कन्या अथवा स्त्री को सुन्दर देखा, उसी के बाँधवों को मार उसको उठाकर पुष्पक विमान में बिठा लिया। और इस तरह उसने विविध जातियों की बहुत-सी स्त्रियाँ अपने अधिकार में कर बहुत सुख पाया। वे सभी स्त्रियाँ

सुन्दर, मनमोहक और पूर्णचन्द्र के समान विकसित पुष्ट-स्तनों वाली अपूर्व लावण्यमयी थीं। उनके काले और लम्बे केश, भँवरी के समान पतली कमर, हाथी की सूँड़ के समान सुडौल जंघाएँ, बड़ी बड़ी काली आँखें और तपे हुये स्वर्ण के समान सुन्दर शरीर, सभी-कुछ मनको मोह लेने वाला था। मगर उस समय पुष्पक विमान मे बैठी वे सभी दुख, शोक और भय से रोती हुई बहुत ही कष्ट पा रहीं थीं। आँखों से निकलते आँसुओं ने उनके मुखो को मलीन और नेत्रों को लाल-लाल कर दिया था। इस प्रकार रोती हुई वे सोच-सोच हार रहीं थीं। वे अपने माता-पिता, भ्राता और भर्ता का स्मरण कर विचार रहीं थीं—हा! हमारे माता-पिता कैसे शोक-सागर में डूब रहे होंगे। पूर्वजन्म में हमने ऐसा कौनसा पाप किया था, जिसका यह फल हमें भोगना पड़ रहा है। जैसे उदय होता हुआ सूर्य सभी-नक्षत्रों को स्वयं मे विलीन कर लेता है, उसी तरह बलवान् रावण ने हमे ग्रस लिया है। और कोई उनमें से कह रही थीं—हा! अब मेरे पुत्र का क्या होगा? और दूसरी—मै अपने पति के बिना अब कैसे रहूँगी? मगर, रावण उनकी इन बातों को सुनता हुआ लङ्का में शीघ्रातिशीघ्र पहुँचने की बात सोच रहा था। और उसका वह विमान अपनी पूरी गति से जा रहा था।

फिर, कुछ ही देर के बाद, पुष्पक विमान जब लङ्कापुरी में उतरा तो जनता ने अपने राजा का हार्दिक स्वागत किया। विश्व-विजय कर सकुशल लङ्का मे लौट कर आने वाले दशकंधर के मग मे उसने अपनी आँखें बिछा दीं। सभी छोटे-बड़े, स्त्री पुरुष हर्ष मे गद्‌गद् हो उसका जयजयकार कर रहे थे। और मन्दोदरी की खुशी तो उसकी आँखों में स्पष्ट छलक रही

थी। अब वह लङ्का की रानी ही नहीं, संसार--भर की महारानी थी। मगर इस खुशी के बीच जब वह विमान से उतरा तो उसकी बहिन शूर्पणखा हठात् उसके सम्मुख आकर भूमि में गिर ज़ोर जोर से रोने लगी। तब बहिन को भूमि मे से उठा—ढाढस देकर उससे कहने लगा, 'हे भद्रे ! क्या बात है ? जो तुम मुझसे कहना चाहती हो, शीघ्र कहो।

तब, उसी प्रकार रोती-जाती शूर्पणखा उससे कहने लगी--'हे राजन ! आप बलवान् हैं--तभी तो, आपने बलपूर्वक मुझे विधवा बना दिया। कालकेयों का नाश करते समय आपने मेरे प्राणों से भी प्यारे महाबली पति का भी बध कर डाला। हे भाई ! आप भाई होकर भी मेरे शत्रु हो गये। हे राजन् ! युद्ध के समय आपको मेरे पति की रक्षा करनी चाहिये थी। आपने अपने हाथों ही अपनी बहिन को विधवा बना डाला।' इतना कह वह फिर फूट-फूट कर रोने लगी।

बहिन के ऐसे वचन सुन, उसे सान्त्वना देता हुआ वह फिर कहने लगा —'हे वत्से ! लेकिन अब यह रोना तो व्यर्थ है। आज से मैं तुझे स्वतंत्र करता हूँ, तू सर्वत्र विचरण कर। मैं तुझसे प्रतिज्ञा कर कहता हूँ कि अब से मैं तुझे दान, मान और प्रसाद से हमेशा संतुष्ट करता रहूंगा। मैं तुझसे सत्य कहता हूं कि युद्ध के समय मुझे तेरे पति का बिल्कुल भी ख़्याल न था। उस समय युद्ध में विजय की अभिलाषा से मैं तो प्रमत्त और विक्षिप्त-सा होकर युद्ध कर रहा था। इसी कारण हे बहिन ! तेरा स्वामी युद्ध में मारा गया। अब यह जानकर मुझे बहुत दुःख है।, कुछ सोचकर वह फिर कहने लगा—'आज से तू अपने मौसेरे भाई खर के पास रहा करना। तेरा वह महाबली भ्राता अब से चौदह हज़ार सैनिकों का स्वामी होगा। महाबली दूषण को मैं उसका सेनापति नियुक्त करता हूँ। दण्ड-

कारण्य का राजा बना कर मै आज ही खर को वहाँ जाने की आज्ञा देता हूँ। इस प्रकार वह सर्वदा राजा बना रह कर भी तेरा आज्ञाकारी होकर ही वहाँ रहा करेगा।,

इतना कह उसने उसी समय खर को चौदह सहस्र वीर्यवान् सैनिकों को साथ में लेकर दण्डकारण्य वासियों की रक्षा के निमित्त वहाँ चले जाने की आज्ञा दी। और महाबली खर उन सैनिको और शूर्पणखा को साथ में लेकर तत्क्षण दण्डकवन का राज्य-भार सँभालने के लिये निर्भयता पूर्वक उस ओर चल दिया।

इस प्रकार खर को मान प्रदान कर और बहिन को ढाढस देकर रावण अपने मन में बहुत प्रसन्न हुआ। तब, कुछ स्वस्थ होकर वह अपने मन्त्रियों और अनेक अनुयायियो के साथ रथ में बैठकर लङ्का के राजमार्गों मे होता हुआ निकुम्भिला नामक अपने उपवन की ओर चल दिया। जिन राजमार्गों से होकर उसका यह जुलूस आगे बढ़ रहा था—उनके दोनों ओर जनता की अपार भीड़ खड़ी हुई उस दिन का यह दृश्य देख रही थी। उन सबको के दोनों ओर के भवनो की छतों पर बैठा हुआ लङ्का का नारी समाज विविध प्रकार के पुष्पो की उस पर वर्षा कर रहा था। कहीं-कहीं सुरीले कंठो की वह ध्वनि भी सुनाई दे जाती थी। आकाश को निनादित करता हुआ जय घोष लङ्का मे चारों ओर गूँज रहा था। सहस्र-सहस्र कण्ठों से निकली हुई वह ध्वनि विजयी दशकंधर को मदहोश बना रही थीं। आज स्वर्ण के बने हुये रथ में बैठे दशकंधर को क्षणभर के लिये अपना वह बचपन याद आया—फिर, माता के वे शब्द—मेरे अच्छे बेटे! तुम भी अपने भाई के समान ऐश्वर्यशाली बनो। मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है। और

वह मन ही मन माता के चरणों में नत-मस्तक हो धीरे से गुनगुनाया माता ! तुम मुझसे दूर हो—मगर तुम्हारे वे पवित्र शब्द आज भी मेरे साथ है। मैंने अपने रक्त से उन्हें सींचा है और भविष्य में भी इसी प्रकार, जीवन के अन्तिम क्षण तक, उनकी पवित्रता की रक्षा करता रहूँगा। फिर, वह आत्माविभोर हो स्वयं में ही खो-सा गया।

निकुम्भिला नामक उपवन में पहुंच सारथी ने जब रथ को रोक दिया तो जैसे वह सोते से जगा और रथ से उतर कर जैसे ही उसने पृथ्वी पर पैर रक्खा, उसने देखा—दिव्य देवालयों से सुशोभित सैकड़ों यूपों वाला यज्ञ हो रहा है। फिर, उसने कृष्ण-मृगचर्मधारी दण्डकमण्ड वाले अपने पुत्र मेघनाथ को देखा। उसने आगे बढ़कर पुत्र को हृदय से लगा लिया, फिर बोला—'हे वत्स ! तुम किस अनुष्ठान को कर रहे हो ?'

तब महातपस्वी मुनिश्रेष्ठ शुक्राचार्य कहने लगे—'हे राजन् ! आपके पुत्र मेघनाथ ने सुप्रसिद्ध और अतिविस्तृत सात यज्ञ किये हैं। उनमें अग्नि-ष्टोम, अश्वमेध, वहुसुवर्णक राजसूय, गोमेध और और महादुर्लभ माहेश्वर यज्ञ के करने पर इसने यहाँ पर साक्षात् पशुपति से अनेक वर पाये है। हे राक्षसेन्द्र ! आकाशगामी, अविनाशी कामगामी दिव्य रथ और तामसी नाम की माया भी इसे मिली हैं। इस माया का प्रयोग करने पर कोई भी इसकी गति को न जान सकेगा। हे राजन् ! दो अक्षय भाले, दुर्जय धनुष और अनेक बल सम्पन्न अस्त्र इसने पाये हैं। हे राजन् ! आपके पुत्र ने यज्ञ के समाप्त होने पर ये सब प्राप्त किया है। अब तो यहाँ पर खड़े हुये हम दोनों आपकी प्रतीक्षा कर रहे थे।'

मुनि के ऐसे वचन सुन मन मे कुछ खिन्न-सा होकर वह मेघनाथ से बोला—'हे पुत्र ! अब तुमने जो कुछ किया सो किया; मगर अब भविष्य

में भूलकर भी इन्द्र और वरुण की पूजा कभी मत करना। ये मेरे शत्रु हैं।'

पुत्र मेघनाथ से यह कहकर उसने मुनिश्रेष्ठ शुक्राचार्य को प्रणाम कर यथोचित् रीति से उन्हें विदा किया तब पुत्र और भाई विभीषण को साथ मे लेकर वह रथ मे बैठ अपने महल की ओर चल दिया।

तो, उसी रथ मे पास में बैठे हुये विभीषण से दशकंधर ने पूछा—'राज्य मे चारों ओर सब कुशल से तो हैं—विभीषण! मेरे राज्य मे मेरी प्रजा को कोई कष्ट तो नहीं।'

तब विभीषण कहने लगा—'हे राजन्! समूची प्रजा कुशल से है। मगर हमारे नाना के बड़े भाई माल्यवान्, जो हमारी माता के सगे ताऊ हैं, वही इस समय बहुत दुःखी हैं। हे भाई! हमारी मौसी अनला से उत्पन्न कुम्भीनसी नाम की उनकी एक धेवती थी, जो हमारी धर्म की बहिन है, उसे मधु, कुछ दिन हुये, बलपूर्वक यहाँ से हर कर ले गया है। उस समय मेघनाथ तो यज्ञ कर रहा था और हे महाराज! भाई कुंभकर्ण पड़े-सो रहे थे। हमारी वह बहिन अन्त पुर म थी—वह पहरे पर के सभी सैनिकों को मार कर, अन्त.पुर मे घुस, उस अविवाहिता कन्या को उठाकर ले भागा।' इतना कह कर विभीषण चुप हो गया और उसके मुख की ओर देखने लगा, जो बढ़ते हुये क्रोध के कारण क्षण-क्षण मे लाल और लाल होता चला जा रहा था। विभीषण को चुप हुआ देख, वह कहने लगा—'क्या मधु मुझे नहीं जानता? मै उसे युद्ध मे जरूर मारूँगा। मेरे रथ को तैयार करो—मन्दोदरी से विदा होकर मै आज ही उसके स्थान को जाऊँगा। मेघनाथ, भाई कुम्भकर्ण, मेरे मन्त्री और असंख्य सैनिक मेरे साथ जायेंगे। और विभीषण! तुम लंका के राज्य-भार को संभालने के लिये

यहीं पर रहना। मेरे सेनापतियों को आज्ञा दो, वे मेरे साथ चलने के लिये तैयार रहें। मैं अभी आता हूँ।'

इतना कहकर वह रथ में से उतर मन्दोदरी के महल की ओर चला। हर्ष से गद्गद् हो, उसके मार्ग में अपनी आँखें बिछाये, मन्दोदरी न जाने कब से, अपने कक्ष के द्वार पर ही खड़ी थी। अपने प्रियतम को अपनी ओर आता हुआ देख, वह द्वार से निकलकर दो कदम आगे बढ़ उसके चरणों पर गिर पड़ी और उसके नेत्रों से निकलते हुये वे प्रेमाश्रु अपने प्रियतम के पद पखार, उन्हें शीतल करने लगे। फिर, क्षण भर के उपरान्त ही इतने दिनों से बिछुड़े साजन ने उसे हृदय से लगा लिया।

कमरे के अन्दर पहुँचकर दशकंधर ने मन्दोदरी के कोमल गात को अपनी लम्बी और बलिष्ठ भुजाओं में आबद्ध करते हुये कहा—'प्रिये! इस समय तुम्हें अपने पास पाकर मैं सब कुछ भूल रहा हूँ—लेकिन, मेरी अच्छी मन्दोदरी! मुझे कर्तव्य—पथ पर अभी और आगे बढ़ना है। मुझे सहर्ष बिदा दो! मैं आज ही मधु को युद्ध में जीतूँगा—फिर, इन्द्रलोक में पहुँच, मैं इन्द्र से युद्ध कर, उस पर विजय प्राप्त करूँगा। मैं शीघ्र ही लौटूँगा, तुम विश्वास करो' और वह मन्दोदरी का बन्धन ढीला कर उठ खड़ा हुआ।

फिर, सामने खड़े हुये दशकंधर के सम्मुख मन्दोदरी नीचा मुख किये खड़ी थी। उसकी आँखों से निकलते वे आँसू कमरे के फर्श पर बिछे हुये कालीन को भिगो रहे थे। तभी, वह बोला—'मन्दोदरी! तुम रो रही हो!' और मन्दोदरी की आँखों के वे आँसू उसकी आँखों में ही समा गये। तब, उसने आँखें उठाकर, अपने प्रियतम के कान्ति से युक्त मुख को देखा—फिर, द्वार से बाहर निकलते हुये दशकंधर की पीठ को! वह ख़ुश थी।

———

: दसवाँ अध्याय :

: इन्द्र और रावण का युद्ध :

अबकी बार रावण का लक्ष्य था—देवलोक अथवा इन्द्रपुरी ! स्वयं को सबका राजा कहने वाला, फिर, जिसकी शक्ति के सम्मुख वास्तव मे सभी अपना शीश झुकाते थे—वह इन्द्र ! जिसने बुरे से बुरे कर्म करने में कभी भी हिचकिचाहट महसूस न की; मगर शक्तिवान होने के नाते दुनियाँ जिसके खिलाफ़ कभी उँगली न उठा सकी । जिसने गौतम-जैसे महातपस्वी की आँखों में धूल झोंककर, उनकी पति-परायणा स्त्री के साथ बलात्कार किया; मगर न तो वह तपस्वी ही और न फिर दुनियाँवाले ही उसे कुछ दंड दे सके—इसके विपरीत वह अभी भी उनके द्वारा पूजा जाता है—क्योंकि, उसमें बल है ! उसमें शक्ति है और दुनियाँ शक्ति की पूजा करती है। जिसकी लाठी मे दम है, दुनियाँ उसकी है और उसने तो इस भेद को अपने बचपन में ही समझ लिया था—तभी तो आज सभी क्षत्रिय राजा उसकी जय-जयकार करते हैं। उसके सम्मुख नत-मस्तक होते हैं। फिर, अब वह कुबेर, यम और वरुणकुमारों की भाँति इन्द्र को भी युद्ध में परास्त करेगा । तभी, उसने साथ में चलते हुये विराट् सैन्य-दल की ओर दृष्टि डाली । फिर, पुत्र मेघनाथ की ओर जो सैनिकों को साथ में लेकर उसके आगे आगे चल रहा था उसने पीछे की ओर भी देखा—उसका महाबली भाई कुंभकर्ण भी आज उसके साथ है, और उसे विश्वास होगया—उसकी विजय निश्चित है।

मगर पहले वह मधु को युद्ध में जीतेगा—यह उसकी प्रतिज्ञा है। इसीलिये आकाश को धूल से आच्छादित करती हुई यह चार हजार अक्षौहिणी सेना पहिले मधुपुर की ओर जा रही है। वह सोच रहा था, मधु ने वैसे तो प्रचलित वीरों की रीति-नीति के अनुसार यह कार्य किया है; परन्तु, उसने इस प्रकार उसकी शक्ति को खुले तौर पर ललकारा भी है—और वह तो वास्तव में उसके उस चैलेंज को स्वीकार कर, उससे युद्ध करने के लिये जा रहा है। वह जीवन में जीवित रहते हुये किसी का लोहा नहीं मान सकता, यह उसका प्रण है। वह अपनी प्रतिज्ञा की रक्षा के निमित्त अपने हृदय की अन्तिम बूँद तक लगा देगा। उसका यह निश्चय अटल और अमर है। एक वीर पुरुष की भाँति उसने जीवन में प्रवेश किया है और वीरो की उस परम्परा की रक्षा करते हुये वह मरना भी चाहता है। युद्ध-भूमि में लडते हुये उसकी मृत्यु हो ऐसे ही शोभायुक्त अपने जीवन के अन्त की वह कल्पना किया करता है। फिर, यही होगा भी और यही होना ठीक भी है।

मगर अभी तो वह जवान है—रोज नया रक्त उसकी नसो मे प्रवाहित होता है। अभी तो वह इस जीवन मे बहुत कुछ करेगा। आज तो वह मधु को युद्ध मे परास्त करेगा—फिर, इन्द्र को—और फिर और किसी को भी! तभी उसने देखा—मधुपुर अब समीप ही है। फिर, उसने सेना को और तेज चलने की आज्ञा दी—और भी तेज!

अब उसका रथ, प्रति-पल चलतो को पीछे छोड़ता हुआ, सबसे आगे पहुँच जाने के लिये, बहुत तेज जा रहा था। और जब वह सबको पीछे छोड़ आगे पहुँचा तो मधुपुर में स्थित मधु का वह भवन उससे केवल कुछ

ही गज़ों की दूरी पर था। उसने रथ को रोक देने की आज्ञा दी—उसके रथ के रुकते ही वह विराट्-सैन्य-दल, उसकी दूसरी आज्ञा के इन्तज़ार में पलक-मारते स्थिर खड़ा हो गया। मगर वह रथ में से उतर, उस भवन की ओर बढ़ा। कुछ ही देर में उसने महल के प्रहरियों को मार गिराया; लेकिन जब वह उसके भीतर घुसा तो मधु के स्थान पर उसने अपनी बहिन कुंभीनसी को अपने सामने खड़ा देखा। कुंभीनसी उस समय बहुत ही डरी हुई थी—वह उसे ऐसी अवस्था मे देख ठिठककर खड़ा होगया। फिर, वह बोला—'तू डर मत, बहिन! जो तेरा प्रिय काम हो, वह मुझसे कह—मैं उसे ज़रूर पूरा करूँगा।' तब, हाथ जोड़ बहुत ही विनीत होकर वह कहने लगी—'हे महाभुज राजन्! यदि तुम वास्तव मे मेरे ऊपर प्रसन्न हो—तो, मेरे स्वामी का वध न करो। अब वही मेरे पति हैं, मै उनके बिना जीवित नही रह सकती। हे भाई! अपनी बहिन के दीन शब्दों की ओर ध्यान दो और अपनी वाणी को सत्य करो।' इतना कहकर वह मन मे बहुत अधिक डरी हुई उसकी ओर देखने लगी।

तब बहिन से प्रसन्न होकर रावण ने उससे कहा—'तेरा स्वामी कहाँ है, उसे मेरे पास ला। मै उसे साथ में लेकर इन्द्र के साथ युद्ध करने के लिये जाउँगा। तेरे कारण अब मै मधु का वध नहीं करूँगा।'

रावण के ऐसे वचन सुन कुंभीनसी का धुप-धुप करता मन ख़ुशी से नाच उठा। वह दौड़कर, दूर के एक दूसरे कमरे मे पहुँच अपने पति से कहने लगी—'मेरे महाबली भ्राता दशग्रीव इन्द्र पर विजय प्राप्त करने की इच्छा से इन्द्रलोक को जाते हुये यहाँ आये हैं। अपने इस पुनीत कार्य में वह तुम्हारी सहायता की कामना करते हैं। अत: हे प्रियतम! तुम अपने

बन्धु-बाँधवों सहित उनके साथ में जाकर उनकी मदद करो। उन्होंने स्नेह के वशीभूत होकर तुम्हारे साथ बहनोई जैसा व्यवहार करना स्वीकार कर लिया है।'

अपनी स्त्री कुंभीनसी से यह सब कुछ सुनकर मधु को बहुत खुशी हुई। वह तुरन्त ही रावण के पास पहुँचकर विधिपूर्वक उससे मिला। फिर, धर्मानुसार उसका सत्कार कर उस रात्रि को उसे अपने यहाँ ठहराया।

दूसरे दिन मधुपुर से बिदा होकर जब वह इन्द्रलोक की ओर चला तो उसका बहनोई मधु भी उसके साथ था। फिर, सारे दिन चलते-चलते जब सूरज अन्तरिक्ष के पास जाकर पृथ्वी में समा गया, उस समय तक वह सैन्य-दल कुबेर की निवासभूमि कैलाश पर पहुँच चुका था। और रात्रि को उसने वहीं पर विश्राम करना उचित समझ सेना नायकों को आज्ञा दी— आज रात्रि को हमारा पड़ाव अपनी पूर्व-विजित इसी भूमि पर होगा।' और कृष्ण-पक्ष की अष्टमी की उस रात को वह वहीं ठहर गया।

जब वह समूची सेना और उसके साथ के वे सभी खा-पीकर, थक जाने के कारण, शीघ्र ही सो गये तो वह एक स्वच्छ और सुन्दर शिला पर बैठ अवनी तल से उगते चन्द्रमा को—फिर उसके धुँधले से प्रकाश में पर्वत के गुणों को देखने लगा। फिर कुछ ही देर के बाद, जब अष्टमी के चन्द्र ने अपनी आभा उस पर्वत पर चारों ओर बिखेर दी—तो जैसे कैलाश पर अवस्थित प्रत्येक वस्तु को एक जीवन-सा मिल गया। चारु चन्द्र की चंचल किरणों के बीच उसने देखा, उसकी सेना का प्रत्येक सिपाही अपनी स्वतन्त्रता का भली प्रकार उपयोग कर रहा था। सभी अपने-अपने स्थान पर निश्चल पड़े सो रहे थे। उसने कुछ हट कर विकसित कल्हारों से सुशो-

भित सरोवरो का जल चन्द्रमा की इस विरल चाँदनी में चम-चम कर चमक रहा था। दमकते हुये कन्नेर, कदम, कचनार, खिली हुई कुमुदनियें, चम्पक, अशोक, मन्दार, आम, पाढ़ल, लोध, पीपल, केवड़ा, अर्जुन, तगर, नारियल, चिरोंजी, कटहल के वृक्ष उस पर्वतीय बन-प्रदेश मे स्तब्ध खड़े थे। उनके चुपचाप पड़े पत्तो पर से खामोशी से उतरती चाँदनी उनकी जड़ों में समा रही थी, मगर उन्हें पता भी न था। लताओं से चू-पड़ने वाले फूलों की गन्ध चारो ओर फैल रही थी। इठलाती हुई वासन्ती बयार यहाँ से इस—उस ओर चुपचाप गुजर जाती थी। और चाँदनी में बिखरे इस पर्वत की शोभा को वह अपलक नेत्रों से देख रहा था। तभी उसने देखा—चाँदनी साकार हो, इस पर्वत पर उतर पड़ी हैं। और सोते पड़े सिपाहियो के बीच में होकर अपना मार्ग बनाती वह उसके पार्श्व से निकल जाने का उपक्रम कर रही है। वह शिला पर से उठा और आगे बढ़ कर उसने उसका हाथ पकड़ लिया। उसकी नागिन-सी अलको मे मन्दार के पुष्प गुँथे थे। उसका मुख पूर्णचन्द्र के समान विकसित और स्वर्गीय आभा से विभूषित था। उसके स्तन स्वर्ण के कुंभ के समान सुडौल और जघाएँ हाथी की सूँड़ के समान थीं। उसके हाथ नवीन पत्तों के समान कोमल और उसका शरीर चन्दन की दिव्य सुगन्धि से सुवासित हो रहा था। वह जल वाले तीन मेघ के समान नीले दुपट्टे को ओढ़ रही वह कामाधीन हो, मुस्कराकर उससे कहने लगा—'हे सुन्दरि! तुम कौन हो? तुम किसकी रमणवासना को तृप्त करने के लिये स्वयं ही कहाँ जा रही हो? वह कौन भाग्यशाली है, जो तुम्हारे मुख-सुधा का पान कर तुम्हारे जघनदेश पर आरोहण करेगा? किससे वक्षःस्थल को तुम्हारे

स्थूल और शुभ स्तन-आज स्पर्श करने के लिये व्याकुल हैं? हे विपुल-श्रोणी! मै रावण हू। मैने अपने भुजबल से सभी को परास्त किया है। अब ऐसा दशानन विनय पूर्वक तुमसे भिक्षा माँगता है, तुम उसकी प्रार्थना को स्वीकार कर आज इस सुन्दर शिलातल पर विश्राम करो।'

उसकी इन बातो को सुनकर वह काँप उठी और हाथ जोड़ कर कहने लगी—'आप मेरे श्वसुर हैं। मेरा नाम रम्भा है। मैं आपके बड़े भाई कुबेर के प्रिय पुत्र नलकूबर की सांकेतिक पत्नि हूॅ। इसलिये हे राजन्! आपको मुझसे इस प्रकार की बाते करना शोभा नहीं देता। आज मैं कुबेर नन्दन के संकेत पर ही उनके पास जा रही हूॅ। वह मेरा मार्ग देख रहे होंगे। आज आप मुझे क्षमा कीजिये।'

रम्भा की इस बात को सुनकर रावण फिर कहने लगा—'तुमने कहा—'मैं आपकी पुत्रवधू हूं। तुम्हारा यह कथन तो एक पति पर आधारित रहने वाली स्त्री पर घटित होता है। मगर तुम तो उन स्त्रियों में से हो, जिनके बहुत से स्वामी होते हैं और जो सदा बदलते रहते है। इसलिये, तुम मेरी पुत्रवधू नहीं हो सकतीं।'

इतना कह दशकंधर काम में भर गया। फिर वह रम्भा को शिला पर स्थापित कर उसके साथ रमण करने लगा। संभोग के अन्त में रम्भा हस्तिराज की हिलोड़ी हुई नदी के समान व्याकुल हो रही थी। उसके आभूषण अस्त-व्यस्त हो गये थे। केश-कलाप और अलके मसल गई थीं। सौन्दर्य-विहीन हुई वह उस लता के समान लग रही थी, वायु की झकझोरन से जिसके सभी पुष्प झड़ गये हो। वह थरथराती-सी उठी और एक ओर को चल दी और दशकंधर उस रात्रि को बिल्कुल भी न सो सका।

फिर, दूसरे दिन महातेजस्वी दशकंधर सेना और वाहनों के साथ कैलाश पर्वत को लाँघकर इन्द्रलोक में जा पहुँचा । जब इन्द्र को उसके आगमन की सूचना मिली तो वह पास में बैठे हुये आदित्य, वसु, रूद्र, साध्य और मरुद्‌गण से कहने लगा—'तुम सब रावण के साथ युद्ध करने के लिये शीघ्र ही तैयार हो जाओ । इस दुरात्मा के साथ युद्ध करना ही होगा ।' अपने राजा इन्द्र के ऐसे वचन सुनकर वे सब युद्ध की तैयारी के निमित्त वहाँ से उठकर तुरन्त ही अपने-अपने स्थानों को चले गये । परन्तु रावण के साथ युद्ध करने से डरा हुआ इन्द्र वहाँ से उठकर सीधा विष्णु के पास पहुँचा और कहने लगा—'हे विष्णो ! अतिबली रावण मेरे साथ युद्ध करने के लिये यहाँ मेरे लोक में आ पहुंचा है । मुझे डर लग रहा है, युद्ध में मैं किस प्रकार उस पर विजय प्राप्त कर सकूँगा । इसलिये हे देव ! आप कोई उपाय बतलाइये—अथवा, आप स्वयं ही इसके साथ युद्ध कीजिये । आपने सर्वदा मेरी रक्षा की है—अब भी मैं आप ही की शरण में हूं—मेरी रक्षा कीजिये ।' इतना कह कर वह बड़ी कातर दृष्टि से विष्णु की ओर देखने लगा । इन्द्र की ऐसी दीन दशा का अनुभव कर विष्णु कहने लगे—'हे महेन्द्र ! तुम्हें इतना अधिक डरना उचित नहीं । मैं जानता हूं, वह बहुत अधिक बलवान् है; मगर तुम्हारा कर्तव्य है, तुम उसके साथ युद्ध करो । मैं स्वयं इस समय उससे लड़ना नहीं चाहता, मगर तुम्हें उसके साथ युद्ध अवश्य करना चाहिये । समय आने पर मैं भी उसके साथ युद्ध करूँगा—यह निश्चय है ।'

विष्णु के ऐसे वचन सुनकर इन्द्र को कुछ सान्त्वना मिली—फिर, वह उनको प्रणाम कर, रावण के साथ युद्ध करने के लिये वहाँ से उठकर चल दिया ।

और दूसरे दिन, रात्रि के क्षय होने पर, जब रावण की सेना युद्ध का आवाहन कर रही थी—इन्द्र अपनी सेना और रूद्र, आदित्य, वसु, मरुत, अश्विनीकुमार आदि के साथ युद्ध भूमि मे जा पहुँचा। फिर, दोनों ओर की सेनाओं के परस्पर मिलते ही घमासान युद्ध होने लगा। उस समय दोनों ओर के सैनिक विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों को एक दूसरे पर प्रयोग में ला रहे थे। उनकी भयङ्कर चीत्कार से सारा वायु-मण्डल हा-हाकार कर रहा था। उसी समय रावण के नाना सुमाली ने मारीच, प्रहस्त, महापार्श्व, महोदर, निकुंभ, शुक, सारण, धूमकेतु, घटोदर, जम्बुमाली, दूषण, खर, त्रिशरा, देवांतक और नरांतक आदि को साथ में लेकर इन्द्र की सेना में प्रवेश किया और वायु जिस प्रकार मेघों को छिन्न-भिन्न कर डालता है, उसी तरह क्षण भर में उसने दुश्मनों की सेना को तितर-बितर कर दिया। सिंह के खदेड़े जाने पर जिस प्रकार मृगों का झुंड व्याकुल होकर चारों ओर भागता-फिरता है, उसी प्रकार इन्द्र के वे सैनिक भी अपने प्राणों की रक्षा के लिये, सभी दिशाओं में भागे। तभी, वसुओं में आठवें वसु प्रसिद्ध शूर सावित्र ने रणभूमि में प्रवेश किया। वह अनेक प्रकार के आयुधों को धारण करने वाले सैनिकों की सहायता से रावण की सेना मे बराबर घुसता ही चला गया। उसी समय त्वष्टा और पूषा नाम वाले दो आदित्यों ने भी अपनी सेना को साथ में लेकर, निर्भयता पूर्वक आगे बढ़ना शुरू किया।

अपनी सेना को इस प्रकार पिटता हुआ देख, महाबली सुमाली का क्रोध सीमा को पार कर गया। वह गिनती के कुछ ही सैनिकों को अपने साथ में लेकर विरोधियों की सेना में आ पड़ा। तब, उसने दारुण शूल और भयंकर प्रासों की मार से दुश्मनो के छक्के छुड़ा दिये। यह देख सावित्र ने

रथ वाहिनी को साथ में ले आगे बढ़कर, सुमाली से युद्ध कर उसे पीछे हटाना शुरू कर दिया। परन्तु वह उसे अधिक पीछे न हटा सका—फिर, उन दोनों में रोम हर्षण युद्ध होने लगा। सावित्र ने अपने बाणों से उसके रथ के घोड़ों को मार, उसके रथ को भी तोड़-फोड़ डाला—तब वह उसके ऊपर बाणों की वर्षा कर भयंकर युद्ध करने लगा। अन्त में उसने अपनी गदा को अपने हाथों मे उठा सुमाली के मस्तक पर दे मारी और गदा के उस भीषण प्रहार को बूढा सुमाली बचा न सकने के कारण इस संसार से चल बसा। उसके शीश के न जाने कितने टुकड़े हो गये, कौन कह सकता था। इस प्रकार समर में सुमाली को मरा हुआ देख रावण की सेना ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाकर इधर-उधर भागने लगी। मगर भागती-जाती उस सेना का सावित्र अभी भी पीछा कर रहा था।

सुमाली समाप्त हो गया, सैनिक पीडित होकर भागने लगे—यह देख रावणनन्दन वीर मेघनाथ ने कुपित हो, अपने भागने-जाते उन सैनिकों को लौटा-लाकर फिर व्यवस्था की—फिर अग्नि धधक कर जिस प्रकार वन की ओर दौड़ती है, उसी प्रकार महारथी मेघनाथ अपने इच्छाचारी बहुमूल्य रथ पर चढ़कर शत्रु सेना पर झपटने लगा। उसने अतिशीघ्र अपने अनेक प्रकार के आयुधों की मार से इन्द्र के उन महारथियों को युद्ध से विमुख कर दिया। वे युद्ध की इच्छा से उसके सम्मुख खड़े न रह कर इधर-उधर भागने लगे—तब इन्द्र ने चीख कर उनसे कहा—'वीरो! डरो नहीं, भागो मत! लौट आओ। यह मेरा अपराजित पुत्र अब युद्ध करने के लिये जाता है।' तदनन्तर इन्द्र का वह बली पुत्र जयन्त अपने अद्भुत रथ में बैठ संग्राम करने के लिये आगे आया। और मेघनाथ पर प्रहार करने

लगा। उस समय दोनों ओर के सैनिकों में एक बार फिर, भीषण संग्राम होने लगा। तभी, रावणनन्दन मेघनाथ ने मातलिनन्दन गोमुख सारथी के स्वर्ण विभूषित बाण मारे। यह देख इन्द्र के पुत्र जयन्त ने भी क्रोध के वशीभूत हो उसके सारथी और स्वयं मेघनाथ को बाणों से बीधना आरम्भ कर दिया। तब, कठिन क्रोध के कारण मेघनाथ की आँखें फैल गईं और वह शत्रु पुत्र पर अनगिनती बाण छोड़ने लगा। उसी समय उसने शत्रु सेना पर अनेक प्रकार के आयुधों की वर्षा की। वह उन सैनिकों के ऊपर तोप, मूसल, प्रास, गदा आदि अनेक तीक्ष्ण धार वाले शस्त्रों को फैंक-फैंक कर मारने लगा। फिर, उसने अपनी माया का सहारा लेकर चारों ओर अंधकार का साम्राज्य स्थापित कर दिया। गहरे अंधकार में ढक जाने के कारण बहुत अधिक दुखी होकर जयन्त भी संज्ञा-शून्य सा हो गया। दोनों ओर के सैनिकों को इस बात का ज्ञान न रहने के कारण कि कौन शत्रु है और कौन मित्र—वे परस्पर एक दूसरे को शत्रु जान मारने लगे। मगर रावणनन्दन अपनी माया के आवरण मे ढके हुये उन शत्रुओं को बीन-बीन कर मारने लगा। उसी समय वीर्यवान् पुलोमा अपने धेवते जयन्त को लेकर समर भूमि में से भाग गया। इन्द्र के सेनापति युद्ध-भूमि मे से जयन्त को ग़ायब हुआ जान दुखी होकर उसकी खोज में इधर-उधर भागने लगे तो, क्रोध में भरा हुआ रावणनन्दन गर्जना कर उन सेनापतियों पर झपटा। यह देख इन्द्र अपने क्रोध को और अधिक सहन न कर सका। वह तुरन्त ही अपने दिव्य और महाभयंकर रथ में बैठ युद्ध-भूमि की ओर चल दिया। इस प्रकार युद्ध के लिये इन्द्र को प्रस्थान करते देख गंधर्व अनेक प्रकार क बाजे बजाने लगे और अप्सरायें नृत्य करने लगीं। उस समय

इन्द्र के उस महावेगवान् रथ के आगे वायु के समान चंचल और गंभीर घोष करने वाले मेघ गड़गड़ाने लगे। अनेक प्रकार के आयुधों को धारण करने वाले रुद्र, वसु, अश्विनीकुमार आदि योद्धाओं को साथ में लेकर इन्द्र उस ओर बढ़ा, जहाँ वह भयंकर युद्ध लड़ा जा रहा था।

तब इन्द्र को युद्ध-भूमि की ओर आता हुआ देख प्रतापवान् शूरवीर दशकंधर भी विश्वकर्मा के बनाये हुये अपने उस दिव्य रथ पर सवार हुआ। उसके उस रथ के चारों ओर बहुत ही भंयकर सर्प लिपटे हुये थे, जिनकी वीभत्स फुंकारों से आसपास का वायुमण्डल अग्नि के समान जल रहा था। और वह अपने पुत्र को युद्ध में-से हटा कर अपनी ओर आते हुये महेन्द्र की ओर चला। तब, दोनों ओर के सैनिक क्रोध में भर फिर एक-दूसरे पर प्रहार करने लगे। महाभुज कुंभकर्ण उस समय मतवाला-सा होकर युद्ध कर रहा था। वह शक्ति, तोमर, मुगदर आदि अनेक प्रकार के आयुधो से विरोधियों पर प्रहार कर उन्हे मृत्यु के मुख में झोंक पृथ्वी पर सुला रहा था। फिर, वह कुछ ही क्षणों के उपरान्त रुद्र के समीप पहुँच उसके साथ युद्ध करने लगा। मगर, रुद्र ने भयंकर शस्त्रों की मार से उसे घायल कर मरुद्‌गणों की सहायता से कुंभकर्ण को जल्दी ही युद्धभूमि मे से भगा दिया। मगर उतनी ही देर में इतनी भयंकर मार-काट मची कि रावण की सेना के अनेकों सैनिक मर-कट कर पृथ्वी मे गिर पड़े। अनेक अपने वाहनों पर ही सुन्न हो गये। उस समय रणस्थल मे मर कर गिरे हुये वे सैनिक चित्र-लिखित से प्रतीत होते थे। उनके शरीर से निकले रक्त की धारा वेगवान् नदी के समान प्रवाहित हो रही थी। उन लाशों पर बैठ कर उन्हें खाते-जाते काक और गिद्ध महोत्सव मना रहे थे।

इस प्रकार अपनी समूची सेना का पतन हुआ देखकर प्रतापवान् दश-कंधर क्रोध मे भर इन्द्र की विशाल सेना मे मार-काट करता हुआ घुस गया। तब महेन्द्र भी अपने विशाल धनुष की सहायता से रावण के मस्तक पर सूर्य और अग्नि के समान तेज वाले बाणों की वर्षा करने लगा। यह देख रावण ने असंख्य बाणों की वर्षा कर सारे युद्ध-स्थल को ढक-सा दिया। इस प्रकार अंधकार का प्रादुर्भाव कर वह युद्धोन्मत्त हो फिर और भी भयंकर युद्ध करने लगा। वह अपने सूत से बोला—'शत्रु सेना जहाँ तक भी है, मेरे रथ को वहाँ तक ले चल। आज मैं अनेक प्रकार क आयुधों से युद्ध कर इन्द्र, वरुण, यम सब ही को मार डालूँगा। तू मन में कुछ भी ख़याल न कर, केवल मेरी आज्ञा का पालन कर।'

तब, रावण की आज्ञा को सुन, सारथि ने महावेगवान् उन घोड़ों को शत्रुओं के बीच म होकर हाँकना शुरू कर दिया। जब इन्द्र ने यह देखा तो उसे समयानुकूल अपना कर्म निर्धारित करते देर न लगी—तब वह पास में खड़े अपने योद्धाओं से कहने लगा—'हे वीरो! मेरी बात सुनो। रावण समुद्र की लहरों के समान हमारी सेना के बीच में होकर बढ़ा चला आ रहा है। इस लिये मेरी इच्छा है कि हम इसे जीवित ही पकड़ ले। जिस प्रकार मैं बलि को बंधन में डालने के अनन्तर उसका राज्य भोग रहा हूँ, उसी प्रकार इसको भी क़ैद करना मुझे अच्छा लगता है।'

इतना कह इन्द्र अपने स्थान से हट दूसरी ओर चला गया। वह रावण के सैनिकों को त्रस्त करता हुआ दारुण युद्ध करने लगा और रावण भी इन्द्र की सेना पर बाण बरसाता हुआ उसकी सेना मे बहुत दूर तक घुस गया। तब इन्द्र ने रावण को घेरना प्रारम्भ कर दिया। फिर, कुछ ही क्षणों के

उपरान्त, जब उसने दशकंधर को पकड़ लिया तो रावण की सेना 'हाय हम मारे गये' कह कर डकराने लगी। युद्ध-भूमि से कुछ दूर हटकर, विश्राम करते हुये मेघनाथ ने जब यह सुना तो वह कोप कर तुरन्त ही उठा और अन्धा-सा होकर इन्द्र की सेना में घुसने लगा। वह अपनी माया का आश्रय लेकर, क्रोधपूर्वक, इन्द्र पर झपटा और इन्द्र के अन्य योद्धाओ की मार को सहन करता हुआ, वह केवल इन्द्र पर ही बाणों की वर्षा करने लगा। बाणों की इस मार से इन्द्र के सारथि मातलि का बुरा हाल था—यह देख इन्द्र ने रथ को त्याग दिया, फिर एरावत पर चढ़ वह मेघनाथ को खोजने लगा। मगर मेघनाथ अपनी माया के बल पर उसकी आँखों से अदृश्य रहकर बराबर बाणों की वर्षा कर रहा था। फिर, कुछ ही देर के बाद जब उसने यह देखा कि इन्द्र थककर चूर हो गया है, तब वह उसे अपनी माया से बाँध कर अपनी सेना में ले आया।

तब, आदित्य और वसुओं से घिरकर खड़े हुये अपने पिता के पास पहुँच, अदृश्य रहकर, वह रावण से कहने लगा—'हे तात! मैंने इन्द्र को बन्दी बनाकर आज उसके गर्व को चूर्ण कर दिया है। अब आप क्लेश को त्यागकर स्वस्थ हो जाइये और रणकर्म को छोड़कर घर को चलिये। अब आप सारे संसार के स्वामी हैं। हमने इन्द्र पर विजय प्राप्त की है—अब वह हमारी क़ैद में है।'

मेघनाथ के ऐसे बचन सुनकर आदित्य, वसुओं आदि सभी के होश उड़ गये। उन्होंने अवसन्न हो युद्ध करना बन्द कर दिया। इस प्रकार इन्द्र के सेनापतियों की क़ैद से रिहा होकर, रावण अपने पुत्र के पास पहुँच उससे कहने लगा—'हे पुत्र अतिबली व्यक्ति के समान पराक्रम दिखाकर तुमने

आज अपने बल से इन्द्र को हरा दिया है—इसलिये तुम हमारे वंश के लिये गौरव-स्वरूप हो। तुम सेना को साथ मे ले, इन्द्र को रथ में डाल कर, लंका को जाओ। मैं भी अपने मन्त्रियों के साथ, प्रसन्न होता हुआ, तुम्हारे पीछे-पीछे आता हूँ।'

अपने पिता की आज्ञा शिरोधार्य कर, तब वीर्यवान् रावणनन्दन मेघनाथ, देवराज इन्द्र को बांधकर, अपनी सेना के साथ, उसी समय लंका की ओर चल दिया। मगर रावण ने अपने मन्त्रियों सहित इन्द्रलोक से दूसरे दिन लंका के लिये प्रस्थान किया।

फिर, कुछ दिनों के बाद, जब प्रजापति, आदित्य, वसुओ आदि के विनती करने पर, इन्द्रजीत मेघनाथ ने देवराज इन्द्र को अपनी क़ैद से मुक्त किया—तो वह ख़ुश था। तभी, प्रजापति से यह सुन कि उसका पुत्र जयन्त भी जीवित है और अपने नाना के पास है—उसकी ख़ुशी का पारावार न रहा। तब वह इन्द्रलोक में पहुँच, शान्तिपूर्वक रहकर फिर वहाँ का राज्य करने लगा।

: ग्यारहवाँ अध्याय :

: रावण और सहस्रार्जुन का युद्ध :

अपने पराक्रमी पुत्र मेघनाथ की सहायता से इन्द्र को जीत लेने के पश्चात्, सभी विजित राजाओं पर कड़ी नजर रखकर, वह कुछ दिनों तक लंका में सुख-पूर्वक रहा। फिर, वह शीघ्र ही इन राजाओं के राज्यों में जा-जाकर अपने विचारों के प्रचार-कार्य मे पूर्णरूप से लग गया। वह अपना उदाहरण दे देकर जनता को अपनी बात समझाने लगा—मगर उसे अपने इस कार्य मे उस समय कितनी सफलता मिली, यह तो वह स्वयं ही जानता होगा—एक ही उद्देश्य की पूर्ति के निमित्त अथवा अपना जो है, वह बुरा होने पर भी अच्छा है और जो दूसरा है—वह केवल बुरा है, इस दृष्टिकोण को लेकर लिखा गया हमारा इतिहास—वह हमें रावण की इस विषय की सफलता के सम्बन्ध मे कुछ भी नहीं बतलाता। रावण सर्वत्र विचरण करता था—हमारा इक तरफा वह इतिहास तो हमे केवल इतना ही बतलाता है।

फिर, उन्हीं दिनों जब वह अपने प्रचार-कार्य में रत था—उसने सुना माहिष्मती नामक नगरी का राजा सहस्रार्जुन बल-विक्रम में अद्वितीय है। वह युद्ध मे अपने शत्रु को सहसा ही परास्त कर देता है। उसका युद्ध-कौशल अद्भुत और पराक्रम अनोखा है। यह सुन वह स्वभाव के वशीभूत हो उसके साथ युद्ध करने के लिये तुरन्त ही उसके राज्य की ओर चल दिया। जब वह स्वर्णपुरी के समान दमकती हुई माहिष्मती नगरी मे पहुँचा

तो उसने देखा—वहाँ सभी स्थानों पर सेंटे बिछे हुये कुण्डों में अग्नि सर्वदा प्रज्वलित रहती है। नगरी शोभा-सम्पन्न और धन-धान्य से पूर्ण है। इस प्रकार उस पुरी में चारों ओर घूमता-फिरता जब वह अर्जुन के महल के पास पहुँचा तो द्वार पर खड़े हुये उसके मन्त्रियों से कहने लगा 'तुम्हारे राजा कहाँ पर हैं—मुझे शीघ्र ही बतलाओ क्योंकि मैं उनके साथ युद्ध करने की अभिलाषा से यहाँ पर आया हूँ।' यह सुनकर उनमें से एक मन्त्री बोला—'भूपति अर्जुन यहाँ पर नहीं है। हम नहीं जानते वह इस समय कहाँ पर गये हैं।'

अर्जुन के मन्त्री के इस उत्तर को सुन, दशकंधर पुरी से बाहर जाकर विंध्याचल की ओर चल दिया, जो वहाँ से कुछ ही दूर पर स्पष्ट दीख पड़ रहा था। उसके समीप पहुँच कर उसने देखा, पर्वत की शोभा अवर्णनीय है। वह पृथ्वीतल से ऊपर की ओर ऊँचा उठा हुआ हिमालय के समान है। सहस्रों शिखरों वाले इस पर्वत की अनेक गुफाओं में उसने सिंहों को भी देखा, जो उस समय वहाँ पर बैठे अपनी रात्रि की थकन को मिटा रहे थे। अनेक झरते हुये झरनों के रूप में पर्वत अट्टहास-सा करता प्रतीत होता था। इस प्रकार उस पर्वत की शोभा को निरखता हुआ दशकंधर फिर नर्मदा की ओर बढ़ा। उसके तट पर पहुँच कर उसने देखा—पश्चिमी समुद्र में विलीन हो जाने के लिये नर्मदा इठलाती हुई उस ओर ही बह रही थी। उस समय उसके निर्मल जल में, धूप से सन्तप्त बहुत से भैंसे, सिंह, रीछ आदि वन-पशु क्रीड़ा कर अपनी प्यास बुझा रहे थे। एक दूसरे स्थान पर उसने चक्रवाक, कारण्डव, हंस, जलकुक्कुट तथा सारसों को भी जल-क्रीड़ा करते, मत्त होकर शब्द करते हुये देखा। स्थान-स्थान पर उस पवित्र नदी में

विविध रंग-वाले कमल उगे थे, जो जल के ऊपर उठे हुये हिल-हिलकर देखने वाले को अपनी ओर खींच बुलाते थे। उसके किनारे से दूर तक बिछी हुई स्वच्छ रेती ग्रीष्म की उस ऋतु में पथिक को शीतल और सुखद जान पड़ती थी और वह अपने मन्त्रियों को लेकर शीतल स्पर्शवाली उस रेती पर बैठ, नदी के प्रवाह को देखने लगा।

फिर, कुछ देर के पश्चात्, जब वह नदी के शीतल जल मे स्नान कर अपने स्थान पर आकर बैठा तो हँसी करते हुये अपने मन्त्रियों से कहने लगा—'देखो, यह प्रचंड ताप वाला सूर्य अब कितना शीतल जान पड़ता है। मुझे यहाँ पर पर बैठा हुआ देख, डर के कारण, यह चन्द्रमा के समान शीतल हो गया है। वैसे तो यहाँ पर बहने वाला यह वायु नर्मदा के जल को छूकर शीतल हो गया है; परन्तु मेरे डर के कारण कितना सँमल सँभल कर पग रखता हुआ आगे बढ रहा है। नाके, मत्स्य, पक्षी और तरङ्गों से परिपूर्ण यह श्रेष्ठ नदी मुझसे डरकर एक सुन्दर नायिका के समान, मेरी आज्ञा के इन्तजार में खड़ी-सी प्रतीत होती है। हे वीरो! अब तुम सभी कल्याण कारिणी इस नर्मदा में स्नान कर अपनी थकन को दूर करो। तब मैं शरद ऋतु के चन्द्रमा की चाँदनी के समान शीतल इस रेती मे कपर्दी महादेव को पुष्पों की भेंट चढाऊँगा।' इतना कह कर ध्यानमग्न हो वह कुछ सोचने लगा।

और प्रहस्त, शुक, सारण आदि रावण के मन्त्री नर्मदा में स्नान करने लगे। फिर, कुछ ही देर बाद, उन मन्त्रियों ने पूजा के निमित्त, रावण के पास, श्वेत बादलों के समान रूपवाली नर्मदा की रेती में, अनेक प्रकार के पुष्पों का एक पर्वत सा खड़ा कर दिया। इस प्रकार पुष्पों को आया

देख रावण दूसरी बार स्नान करने के अभिप्राय से नर्मदा में घुसा—फिर, वह विधि-विधान से जप करने के उपरान्त जल से बाहर आया। तट पर आकर उसने गीले वस्त्रों का परित्याग कर दिया—तब, उज्ज्वल वस्त्र धारण कर वह हाथ जोड़ कर चलने लगा। उसके पीछे-पीछे उसके वे सब मन्त्री भी अपने-अपने हाथों को जोड़ कर चल रहे थे। कुछ दूर चलने के उपरान्त उसने बालुका की बनी वेदी के बीच में स्वर्ण के बने शिवलिंग की स्थापना कर सुगन्धित गन्ध और पुष्पों से उसकी पूजा की। फिर, वह चन्द्रचूड़ महादेव की प्रतिमा के सामने नाचने और गाने लगा।

उसी समय जब वह नर्मदा की रेती में पुष्पों से शङ्कर का पूजन कर रहा था—उससे कुछ दूर हटकर माहिष्मती का बलवान् राजा अर्जुन अपनी स्त्रियों को साथ में लेकर नर्मदा में जल-क्रीडा। उस समय अपने दोनों ओर उन स्त्रियों को खड़ा कर, नर्मदा के बीच में खड़ा हुआ वह नदी के प्रवाह को रोक-देने का सफल प्रयास कर रहा था। फिर, कुछ ही क्षणों के उपरान्त, उसने देखा—नर्मदा का जल तट पर चढ़ कर वास्तव में उल्टा बहने लगा है। वह प्रसन्नता से फूल उठा और कुतूहल वश बहुत देर तक इसी प्रकार खड़े रहने का निश्चय कर उसने नर्मदा के तल में अपने पैर जमा लिए। तब तो नर्मदा का जल वर्षा ऋतु का-सा दृश्य उपस्थित करने लगा। फिर, उस जल ने काफी दूर तक फैल रावण की पुष्पों वाली पूजा की सामग्री को भी बहा दिया। यह देखकर दशकन्धर पूजा को अधूरी छोड़ नाचते नाचते रुककर खड़ा हो गया। उसने अपने दाहिने हाथ की उँगली से संकेत कर शुक और सारण को इसका कारण ढूँढ निकालने की आज्ञा दी।

रावण की आज्ञा को शिरोधार्य कर शुक और सारण दोनों भाई तुरन्त ही पुष्पक विमान में बैठकर पश्चिम-दिशा की ओर उड़ चले। लगभग दो कोस की दूरी पर पहुँच जब उन्होंने अर्जुन की क्रीड़ा का वह दृश्य देखा तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उन्होंने लौटकर रावण से कहा—'हे महाभुज! यहाँ से दो कोस की दूरी पर एक विशाल काय पुरुष अनेक स्त्रियों को साथ में लेकर नर्मदा में जल-क्रीड़ा कर रहा है। उसीने कुतुहलवश नदी के प्रवाह को रोक दिया है।'

शुक और सारण के मुख से यह बात सुनकर रावण को विश्वास हो गया कि वह पुरुष निश्चय ही सहस्रार्जुन है—यह सोच कर वह तुरन्त ही, युद्ध की अभिलाषा से उस ओर चल दिया। जल्दी ही वहाँ पहुँचकर उसने तट पर बैठे हुये अर्जुन के मन्त्रियो से कहा—'तुम हैहयराज से शीघ्रता-पूर्वक कहो कि रावण युद्ध करने के लिये आया है।'

रावण की इस बात को सुनकर तब वे मन्त्री कहने लगे—'हे रावण! वह तो इस समय मद्यपान कर मस्त होकर स्त्रियों के साथ क्रीड़ा कर रहे हैं। अगर तुम उनके साथ युद्ध करना चाहते हो तो आज रात्रि-भर रुको। और हे दशग्रीव! अगर तुम्हें युद्ध करने की बहुत जल्दी है तो पहले हमसे युद्ध करो—हमें मारकर तुम हमारे राजा के पास चले जाना।' यह कह कर उन मन्त्रियो ने अपने शस्त्र उठा लिये और युद्ध करने के लिये तैयार हो गये। और तभी रावण के मन्त्रियो ने आगे बढ़कर युद्ध करना आरम्भ कर दिया। वे, दोनों राजाओं के मन्त्री, परस्पर, तोमर, प्रास, त्रिशूल, वज्र और कर्पण आदि अस्त्रों का एक-दूसरे पर भयंकर प्रहार करने लगे। तब, नर्मदा के तट पर, उनके चीत्कार और गर्जन का डरावना शब्द होने लगा।

फिर, कुछ ही देर मं अर्जुन के वे महाबली मन्त्री मर-कटकर नर्मदा के तट की उस भूमि पर गिरने लगे—तभी, वायु ने यह सन्देश जल क्रीड़ा करते हुये अर्जुन से कहा और वह स्त्रियों को सान्त्वना दे शीघ्र ही वहाँ पर आ पहुँचा।

फिर, जिस प्रकार अन्धकार पर सूर्य झपटता है उसी प्रकार श्रेष्ठ बाजूबन्दो को धारण करने वाला, क्रोध से अग्नि के समान दमकता हुआ वह अपनी गदा को ऊपर उठा रावण के मन्त्रियों पर झपटा। इस प्रकार वह गदा का वार कर फिर अपने उसी स्थान पर लौट गया। तब प्रहस्त, मूसल को हाथ मे ले, उसके सामने आ अड़कर खड़ा हो गया—फिर, निमिष-भर मे उसने लोहे से बना हुआ वह भयंकर मूसल अर्जुन पर फेंका। उस समय उस मूसल में से अशोक के गुच्छे के समान लाल-लाल अग्नि निकल, चारों ओर गिरकर, प्रलय का-सा दृश्य उपस्थित करने लगी। मगर उस समय कृतवीर्यनन्दन अर्जुन ने कुछ भी न घबड़ाकर, अपनी गदा से उस अपनी ओर आते हुये मूसल को बड़ी निपुणता से हटा दिया। फिर, वह अपनी बड़ी भारी गदा को घुमाता हुआ प्रहस्त पर झपटा। और जब वह गदा प्रहस्त पर गिरी तो वह उस प्रहार को सह-न सकने के कारण पृथ्वी पर गिर पड़ा। यह देख मारीच, शुक, सारण, महोदर और धूम्राक्ष रण में से भाग गये।

इस प्रकार अपने मन्त्रियो को हारकर भागते हुये देख रावण अत्यन्त क्रोध कर अर्जुन पर झपटा—और क्षणभर में ही उन दोनों में रोम उसका दारुण युद्ध होने लगा। जिस प्रकार क्षुब्ध हुये दो समुद्र, हथिनी-हीन मित्रता युद्ध करने वाले दो हाथी अथवा काल की गति में फँसी हुई दो रे; उसे किया

आपस में टकराकर परस्पर भीषण प्रहार करती हैं, उसी प्रकार वे दोनों अपनी-अपनी गदा से एक दूसरे पर विषम प्रहार करने लगे। उस समय तके पवाग्र शब्द के समान उनके गदापात के शब्द से दिशाएँ प्रतिध्वनित होने लगीं। इस प्रकार वे दोनो बहुत देर तक इसी भाँति युद्ध करते रहे; परन्तु उनमे से कोई भी न थका। तब अर्जुन की वह दिव्य गदा बड़े ज़ोर के साथ उठकर रावण के वक्ष-स्थल पर आकर गिरी और वह उस कठिन चोट को सह न सकने के कारण ज़मीन पर बैठ गया। इस प्रकार उसे विह्वल हुआ देख अर्जुन उसकी ओर झपटा और गरुड़ जिस प्रकार सर्प को पकड़ता है, उसी प्रकार उसने रावण को पकड़ कर बाँध लिया। फिर,ब वह हर्ष से उछल कर गंभीर गर्जना करने लगा। मगर उसी समय प्रहस्त को अपनी ओर आता हुआ देख वह फिर सावधान होकर खड़ा हो गया। प्रहस्त को जब उसी समय होश आया तो वह रावण को बन्धन मे पड़ा हुआ देख, कुपित हो कर, 'खड़ा रह, खड़ा, रह, छोड़-छोड़' कहता हुआ अर्जुन की ओर मूसल और शूल फेंकने लगा। उस समय अरिदमन अर्जुन ने उसके आयुधों को मार्ग ही मे पकड़, उन्हे उसी की ओर फेंक कर मारा। यह देख कर, तब तो, प्रहस्त भी भाग खड़ा हुआ।

इस प्रकार रावण और उसके मन्त्रियों को त्रस्त कर कार्तवीर्य अर्जुन बन्दी-अवस्था मे रावण को साथ लेकर, उन स्त्रियों और बाकी बचे हुए 'दमियों के सँग अपने नगर में घुसा—तब, पुरवासियों ने उसके ऊपर
गये।
और पुष्पों की वर्षा कर उसका स्वागत् किया। वह प्रसन्न होता हुआ
दिया। ह
{ल में चला गया।
और कर्पूर
नर्मदा के त.

और कुछ ही दिनों के बाद, जब दशकधर के बन्दी होने का समाचार उसके बाबा द्विजवर पुलत्स्यजी को मिला तो वह दुःख से व्याकुल हो, स्नेह के बन्धन में बँधे हुये शीघ्र ही माहिष्मती पुरी को चले। जब वह उस नगर में पहुँचे तो कार्तवीर्य अर्जुन ने शिर पर अंजुलि रख विधि-विधान से उन मुनि का स्वागत् किया। फिर मधुपर्क गौ, पाद्य तथा अर्घ उनको भेंट कर हाथ जोड़ कर वह उनसे कहने लगा—'हे द्विजेन्द्र! आपका दर्शन होना बहुत कठिन है—मगर आपने स्वयं ही दर्शन देकर मेरे ऊपर बड़ी भारी कृपा की है। आपके शुभ-आगमन से यह माहिष्मती नगरी पवित्र हो गई है। हे देव! आपके इन पवित्र चरणों में मैं आज प्रणाम कर रहा हूँ, यह मेरे लिये बड़े ही सौभाग्य की बात है। अब मेरा जन्म, तप और व्रत सुफल हो गया। हे ब्रह्मन्! आपके सब कुछ अर्पण है—इसलिये आपका जो भी कार्य हो उसकी आप आज्ञा दीजिये।' यह कहकर वह उनके चरणों की ओर देखने लगा।

तब पुलत्स्य जी उसका कुशल-समाचार पूछकर उससे कहने लगे—'हे कमल नयन नरेन्द्र! तुमने दशग्रीव को जीत लिया—तुम्हारा बल अतुल है। तुमने पराक्रम में श्रेष्ठ मेरे पोते को जीत कर उसे युद्ध मे बाँध लिया; इसलिये तुम्हारा यश उससे भी अधिक है। मगर हे वत्स! मेरे प्रार्थना करने पर अब तुम उसे मुक्त कर दो।'

मुनिश्रेष्ठ पुलत्स्यजी के ये बचन सुन कर अर्जुन ने रावण को तुरन्त ही मुक्त कर दिया। फिर, उसने दिव्य आभूषण और वस्त्रों से उसका सम्मान किया—तदन्तर अग्नि को साक्षी कर उसके साथ हिंसाविहीन मित्रता की और उसको अतिथि समझ उसका सत्कार करने के पश्चात् उसे विदा

किया। इस प्रकार अपने पोते को मुक्त करा देने के पश्चात् मुनिपुङ्गव पुलस्त्य भी अर्जुन को धन्यवाद दे अपने स्थान को चले गये।

फिर, कुछ दिनों के बाद ही, रावण ने बाली के अद्भुत पराक्रम को देखकर, अग्नि को अपना साक्षी बना उसके साथ भी चिरकाल के लिये स्नेह भरी मित्रता की।

: बारहवाँ अध्याय :

: लङ्कापुरी :

बाली से मित्रता कर लेने के पश्चात् विश्व-विजयी रावण अब लङ्का में रहकर सुख-पूर्वक जीवन व्यतीत करने के स्वप्न देखने लगा। वास्तव में अब ऐसा कोई भी नरेश बाकी न बचा था जिसका जीवन उसके साथ न बंधा हो। इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि वे मन से उसके न हो सके थे; मगर अपना शीश वे सभी उसके सामने झुकाते थे। अपनी शक्ति के विराट् प्रदर्शन के द्वारा उसने वर्ण व्यवस्था पर वह करारी चोट की थी कि उसके बनाने वालों के मुँह पर वास्तव में थूक दिया था। जीवन में उसने संघर्ष को प्यार कर सर्व-प्रथम ऐसी क्रान्ति को जन्म दिया था, जो उसकी मृत्यु के बाद, उसे दुराचारी अथवा बुरी मनोवृत्ति का एक पुरुष सिद्ध साबित कर देने पर भी बुझाये से न बुझ सकी। स्वयं को देवता कह कर दूसरों के द्वारा ख़ुद को जबरदस्ती पुजवाने वाले भी उससे हारे और वह सब ही को युद्ध में परास्त कर चक्रवर्ती राजा बना—यह ऐसा सत्य है, जिसको झूँठ कह कर सत्य को धोखा नहीं दिया जा सकता। जलती हुई लालटेन को खरगोश की चमकती हुई आँखें कह कर सत्र नहीं किया जा सकता। यही कारण है जो लाखों-करोड़ों के सिर-तोड़ कोशिश करने पर भी उसके द्वारा लगाई गई वह आग आज भी जल रही है। और अब आकर तो उसका रूप और भी उग्र हो गया है—फिर, अब वह दिन भी दूर नहीं, जब इसमें पड़कर सब कुछ भस्म हो लेगा।

और इसीलिये उसने जीवन में संघर्ष को प्यार किया था। मगर इतने दिनों तक लगातार जूझते रहने पर अब उसमें ऐसी स्वाभाविक इच्छा जाग उठी थी कि अब वह अपनी बाकी जिंदगी शान्ति-पूर्वक अपने मत का प्रचार कर व्यतीत करना चाहता था। इसीलिये अब उसने लङ्का में रह कर सुख से जीवन व्यतीत करने की बात सोची और वह वास्तव में उस सुन्दर नगरी में आकर रहने भी लगा। त्रिकूट पर्वत पर बसी हुई वह लङ्का-पुरी उसे प्राणों से भी अधिक प्यारी थी। अब तक भरसक प्रयत्न कर उसने अपनी शक्ति भर उसे सजाया था। महासमुद्र के बीच में पर्वत के शिखर पर बसी हुई वह लङ्का सलज्ज भाव से खड़ी हुई सुन्दर नायिका के समान बड़ी ही भली दीख पड़ती थी। हरे-हरे वृक्षों से परिपूर्ण गंधमय वन उसे चारों ओर से घेरे पड़े थे। उन वनों में वायु के चलने पर एक ऐसी मादकता व्याप्त हो जाती थी, जिससे जीवन का सुख अठखेलियाँ-सी करता जान पड़ता था। पक्षियों के भार से झुकी हुई उनकी डालें सर्वदा मीठे स्वर में कुछ गाती-सी प्रतीत होती थीं। पुष्पित लताओं के आभूषणों को धारण कर वे वृक्ष मन को मोह लेते थे। उन वृक्षों की ओर आकर्षित होकर उनके पास मे पहुँचे हुये उस प्रेमी के दामन को यत्र-तत्र उगी हुईं वे झाड़ियाँ बरबस स्वयं में उलझा उसे रोककर टोककर उससे कहतीं थी—अजी जरा हमारी भी तो सुनो—और वह उनकी सुनने के लिये फिर ठगा सा खड़ा रह जाता था। तभी, पास वाले वृक्ष की डाल पर बैठे हुये बहुत से पक्षी एक ही साथ कह उठते थे—ओ-हो! यह बात है! और वह झाड़ी लजाकर उसके दामन को छोड़ देती थी।

तब वह परदेशी पथिक झटपट राजमार्ग पर पहुँच जन-रव की ओर बढ चलता था। मार्ग बहुत लम्बा था, इसमें सन्देह नहीं—मगर उस सड़क के दोनों ओर हंस और कारण्डवों से घिरी हुई तथा कमल और उत्पलों से भरी पुरी वे बावड़ियाँ, अनेक रमणीय विहारस्थल, फूल और फलों से आच्छादित वृक्षों से युक्त बगीचे—फिर, विविध प्रकार के जलाशय पथिक के उस श्रम को अपनी मादकता के रसमय आवरण में ढक, उसके हृदय में आनन्द का स्रोत बहा देते थे। उस लम्बे मार्ग की रक्षा का भार उस धनुष धारण कर प्रति पल सतर्क रहने वाले सैनिकों पर था, जो थोड़ी-थोड़ी दूर पर पहरा देते हुये पथिक को दीख पड़ते थे। और अन्त में वह लम्बा राजमार्ग पुरी के चारों ओर वाले सोने के बने परकोटे में जाकर समाप्त हो जाता था। ध्वजा और पताकाओं से शोभित अनेक अट्टालिकाओं से भरी पुरी उस नगरी में इधर-उधर जाने के लिये फिर बहुत से छोटे छोटे मार्ग बने हुये थे। पाण्डुर वर्ण के शोभायमान भवनों से अलंकृत, स्फटिक शिला के समान चमचमाती वे गलियाँ पथिक को जीवन सम्पन्न और सुखद जान पड़ती थीं। सात सात, आठ आठ मंजिलों वाले वे भवन-स्वर्ण-जटित स्तम्भों से अलंकृत, कनकमय गवाक्षों से संयुक्त, स्वर्ण के बने घुंघरुओं से वंदनवारित वायु के चलने पर झंकृत हो उठते थे। इस प्रकार उस समय मुखरित हो उठने वाली लंका उस मीठी लय में पथिक से कुछ कहती-सी जान पड़ती थी—जिसको सुन-समझ लेने के लिये वह उसमें खो-सा जाता था।

और पुरी का वह मध्य-स्थान तो समूची लंका के लिये जीवन का स्रोत था। लंका की रक्षा का भारी भार वहन करने वाली लंका देवी का

वह स्थान, अपनी उपमा वह स्वयं ही था। स्फटिक का बना हुआ वह चौक विविध प्रकार से सजा होने के कारण अनुपम शोभा-सम्पन्न दीख पड़ता था। उसके दर्शनीय भाग को स्वर्ण के बने परकोटे से सुरक्षित कर वैदूर्यमणि की सहायता से मोती, सोना, चाँदी, सूर्यमणि आदि जड़कर उसके भीतरी भाग में बहुरंगी चित्रकारी की गई थी। वास्तव में, रजनी के रजतहास में तो वह स्वयं भी हँसता-सा जान पड़ता था।

और जब समूची लंका की ज्योति उसकी हँसी में आकर समा जाती थी—तब रजत-स्फार वाली उस निर्झरणी का झरना तो पथिक के मन में एक गुदगुदी सी उत्पन्न कर देता था। तब प्रकाश से युक्त उन भवनों में यौवन अठखेलियाँ करता था। मगर श्रृङ्गार के वातावरण में उसमें थिरकन उत्पन्न हो जाती थी उस समय उन भवनों से निकलकर फैलने वाली वीणा की वह कोमल लय, मन्द मन्द विहारिणी वायु की सहायता पा, उन दूसरे भवनों के झरोखों में धीरे से घुस, काम से पीड़ित स्त्रियों को उत्तरीय वस्त्र से शून्य कर उन्हें प्रेमियों की गोद में बिठा तब चन्द्रमा की किरणों में समा जाती थी। फिर, वैभवशाली उस लंका में आनन्द का स्रोत उमड़ता था। तब, पथिक का मन डोल-डोल कहता था—मुझे भी प्यास लगी है—आगे बढ़!

मगर जैसे ही वह आगे बढ़ने का प्रयत्न करता—स्वाध्याय में रत, वेद के विद्यार्थियों की वेदध्वनि को सुन वह चौंक जाता। तभी लंका की रक्षा के लिये अपने प्राण विसर्जन कर देने वाले उन हजारों में से किसी एक की आवाज भी उसे सुनाई दे जाती। और पलक मारते फिर वह दण्ड को हाथ में थामे उसके सम्मुख आ खड़ा होता। वह पूछता—'तुम

कौन हो ? कहाँ जाओगे ?' और उसके इन प्रश्नों का समुचित उत्तर न देने पर फिर उस पथिक के जीवन का अन्त अनिवार्य था।

इस प्रकार उसने अपनी लंका को सजा देने के बाद उसकी रक्षा की समुचित व्यवस्था भी की थी। फिर, उस सजी-सजाई लंका में अगर कोई परिन्दा भी पर मारना चाहे तो दरअसल यह नामुमकिन था—और अन्त तक यह नामुमकिन ही बना रहा। लंका में रहने वाले उस नागरिक के जन्म-सिद्ध अधिकार स्वयं उसी के पास सुरक्षित थे। धन-धान्य से पूर्ण उस लंका में कोई ग़रीब और कोई अमीर न था। प्रत्येक की अपनी रुचि ही उसका सर्वस्व थी। राज्य के द्वारा भी उसकी रक्षा की जाती थी। भगवान् की भक्ति करने वाले को राज-सभा में उच्च स्थान दिया जाता था; मगर मन-गढ़न्त देवताओं की पूजा करने वाले को कठोर दंड! दुखी जीवन के कराहने की आवाज़ समूची लंका में कहीं भी सुनाई नहीं देती थी। लंका में रहने वाले वे सभी केवल एक ही वर्ण के थे—केवल मानव और वे खुश थे।

फिर, दशकधर भी खुश था।—लंका हँसती थी तो उसे जान पड़ता था, जैसे उसका रोम-रोम हँस रहा है। और यकायक वह सोचने लगता था—लंका की यह हँसी—काश, दुनियाँ की हँसी बन सकती! तभी, उसे ध्यान होता—इसी प्रयोजन के लिये तो उसने लंका में रहना शुरू किया है। उसके पास अनुभव है—मार्ग खुला पड़ा है—और वह सर्वस्व-सम्पन्न राजप्रसाद के उस अद्वितीय कमरे में एकाकी बैठा फिर शान्त हो जाता।

: तेरहवाँ अध्याय :

: सीता-हरण :

निर्धन और धनवान, ब्राह्मण और शूद्र के भेद से रहित लंका में महाराजाधिराज रावण का महल सौन्दर्य, आह्लाद और कला की पराकाष्ठा का एक सफल और उत्कृष्ट उदाहरण था। सूर्य के समान दमकते हुये परकोटे के भीतर अनेक और विविध प्रकार के घर बने हुये थे। जिनमें रजत-हास वाली विचित्र चित्रकारी चित्रित की गई थी। इस परकोटे के बाहर और भीतर, राजमहल की रक्षा के निमित्त सदा घुड़सवार और रथ सवारों की एक पूरी सेना तैयार रहती थी। भीतर की ओर पैदल सैनिक भी स्थान-स्थान पर दीख पड़ते थे। वे सदाँ सतर्क रहकर पहरा देते थे। परकोटे के आस-पास ही अश्व-शाला, रथ-शाला, हस्तिशाला आदि शोभा-सम्पन्न दीख पड़ती थीं। जहाँ हर समय घोड़ों की हिनहिनाहट, हाथियों की चिंघाड़ सुनाई देती थी। इस प्रकार रक्षित वह राज-भवन हर्ष से ओत-प्रोत श्रेष्ठ स्त्रियों से भरा-पुरा, उनके पायलों की रुन-झुन से प्रतिक्षण व्याप्त रह सभी मनोकामनाओं का पूर्ण करने वाला था। सुबह-शाम भगवान् की पूजा के समय मृदंगों का शब्द, शखों का घोष और अनेक मनुष्यों का जयनाद पृथ्वीतल से ऊपर उठ अंबर में समा जाता था। फिर, सारे दिन और रात्रिभर वहाँ मदमत्त जीवन अठखेलियाँ करता था। प्रातः की पूजा के पश्चात् राज-सभा में बैठ कर दशकंधर नई-नई आज्ञाएँ दे-देकर मनुष्य जीवन को सुखी बनाने का सफल प्रयत्न

करता था। फिर दोपहर बाद, भोजन के उपरान्त वह आत्म-चिन्तन में लीन रह कर न जाने और क्या पा जाने की अपनी अभिलाषा को पूर्ण करता था। और, सन्ध्या की पूजा कर चुकने पर उसे मन्दोदरी अपनी काली अलकों में ढक-ढाँप लेती थी।

फिर, रात्रि-भर वहाँ आनन्द का स्रोत उमड़ता था। रस की मादक फुहार छूटती थी। यौवन अँगड़ाई लेकर उसकी ओर देखता था और उसकी मधु की प्यास फिर और बढ़ जाती थी। तब अनगिनती कोमलांगियों के हाथ, स्वर्ण-निर्मित मधु पात्रों को सँभाले उससे कहते थे—'पीलो मोरे राजा!' और वह पीता था—रात्रि के आलोक में झिलमिलाती उस मदिरा को! जिसमें रात्रि का सुख निहित था—उसका चिर-सुख!

और राक्षसेन्द्र रावण के उस दो कोस चौड़े और चार कोस लम्बे भवन में फिर अर्द्ध-रात्रि तक यही सब कुछ चलता—तब विविध अलङ्कारों से विभूषित सहस्रों सुन्दरी रमणियाँ, मद्यपान और निद्रा के वश में हो अपने-अपने आसनों पर उसे घेरकर सोता। तब वह उन सुन्दर तारिकाओं से घिरकर शरद ऋतु के पूर्ण चन्द्र के समान शोभायमान प्रतीत होता—और वे तारावलियाँ श्रम-कणों के समान उज्ज्वल दीख पड़तीं। गहरी निद्रा में अचेत उन रमणियों के जूड़े खुल जाते, आभूषण इधर-उधर बिखर जाते, चन्द्रमा की किरणों के समान शुभ्र वर्ण के मुक्ताहार उनके वक्षस्थल में उलटे-सीधे पड़, स्तनों के बीच में, फिर सोते हुये हँस के समान शोभा पाते। उन स्त्रियों के कोमल अंगों और कुचाओं के अग्रभाग में स्थित नखरेखा उस समय रूपरेखा-सी जान पड़ती। तीव्र आलोक में उनके बहुरंगी वस्त्रों की झिलमिली ओट से उनका रूप उस समय भी सजग रह-

कर झाँकता सा प्रतीत होता। वीर्यवान रावण के सौन्दर्य पर मुग्ध हुईं वे बालाएँ तब उसी के स्वप्न देखतीं और प्रातः तेजोमय उसके मुख को।

मगर इसी प्रकार सुख के हिंडोले मे झूलते हुये रावण को सहसा एक दिन अकम्पन ने चौंकाकर उससे कहा—'हे राजन ! खर और जन-स्थान की रक्षा करने वाले अन्य वे सभी वीर मारे गये, मैं किसी प्रकार बचकर आपके पास आया हूं।'

अकम्पन नाम के उस सैनिक से यह सुन रावण को एक बार फिर अपने पुराने जीवन की याद हो आई। उसकी आखे क्रोध से जलने लगीं—तब, वह वीभत्स वाणी मे उससे बोला—'किस व्यक्ति ने मृत्यु की कामना कर जन-स्थान को सैनिकों से रहित कर दिया है? पुराने, मगर भयंकर इस सर्प के बिल में कंकड़ी डाल कर उसे छेड़ा है। मुझे बताओ अकम्पन, मै जरूर उसे नष्ट कर दूँगा' इतना कह वह बढ़ते हुये क्रोध के कारण काँपने लगा।

तो अकम्पन बोला—'हे महाभुज ! राजा दशरथ के राम नाम वाले एक पुत्र है—उन्होंने यह सब उत्पात मचाया है। उनके साथ मे उनकी स्त्री सीता और छोटा भाई लक्ष्मण भी है। उन दोनो भाइयो ने दण्डक-बन में अपने रहने के लिये एक कुटी बनाली है—सीता भी उन्हीं के साथ वहीं पर रहती हैं। वह बहुत ही सुन्दर और अभी तरुण है। आप सीता को चुराकर लङ्का में लाकर रख लीजिये। राम अपनी प्राणप्यारी सीता के बिना जीवित नहीं रह सकता, यह निश्चित् है। पत्नि के वियोग में रो-रोकर कुछ ही दिनो मे वह जरूर मर जायेगा—आप विश्वास कीजिये।' इतना कह अकम्पन उसके मुख की ओर देखने लगा।

राम के साथ युद्ध करने के लिये आतुर महाबली दशकंधर को अकम्पन की यह युक्ति भी पसन्द आई। कुछ क्षणों तक सोचने के उपरान्त वह सिंहासन पर से उठ खड़ा हुआ और सभा को विसर्जित होने का आदेश दे फिर उसने रथ को तैयार करने की आज्ञा दी।

वह सोच रहा था—अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र का आज यह साहस! उसे शायद यह ज्ञात नहीं है कि वह उसके पुरखाओं को युद्ध में आज से बहुत पहले ही परास्त कर चुका है। और वह उस उद्दंड राम को भी समाप्त कर सकता है। मगर पहिले तो वह अकम्पन के सुझाव के अनुसार ही कार्य करेगा। ताडका के पुत्र मारीच की सहायता से वह राम की सीता का कल ही हरण करेगा, यह निश्चय है। उसे विश्वास था—मारीच अपने शत्रु के खिलाफ जरूर उसकी सहायता करेगा। और वह तुरन्त ही तैयार खड़े हुये रथ मे बैठ शीघ्रता के साथ राम द्वारा अपमानित मारीच के निवास स्थान की ओर चला। उसके रथ की तीव्र-गति ने उसके विचारों को भी गति प्रदान की और मार्ग में वह सोचता चला—शायद अब ताडका का वध करने वाले राम की अधीनता में वे सभी विजित क्षत्रिय राजा उसके खिलाफ बगावत करने का साहस कर रहे हैं—वे अपनी मनमानी के बने संसार के खण्डहरों में एक गगन-चुम्बी भवन का निर्माण करने की इच्छा मे संलग्न हैं—मगर यह न होगा, जब तक वह जीवित हैं—और इसीलिये खर का वध करने वाले इस राम को मिटा देना ही अब उसका लक्ष्य है।

इसी प्रकार सोचता हुआ जब वह मारीच के द्वार पर पहुँचा तो तेज-पुंज, संसार के स्वामी दशकंधर को अपने भवन पर अचानक आया हुआ

देखकर मारीच को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। वह उसका विधिपूर्वक स्वागत कर फिर कहने लगा—'हे राक्षसेन्द्र! चारों ओर कुशल तो है-यहाँ पर बिना सूचना के आपका आगमन हुआ है, मुझे बड़ा ही आश्चर्य हो रहा है। मेरे लायक कोई सेवा हो तो कहिये।'

वाक्य विशारद महातेजस्वी रावण मारीच के ऐसे वचन सुन उससे कहने लगा—'दशरथ के पुत्र राम ने तुमको अपमानित करने के पश्चात् अब मेरे जन पद नाम वाले थाने को नष्ट भ्रष्ट कर दिया है। उसने दुर्धर्ष खर को उसके सैनिकों सहित मार डाला है। इसका मैं उसको दंड अवश्य ही दूँगा, इसलिये इस कार्य में तुम मेरे मन्त्री बनकर मेरी सहायता करो।'

मारीच रावण की यह बात सुन कुछ सोच में पड़ गया। राम की बलवान् मूर्ति उसके नेत्रों के सामने आकर खड़ी हो गई। वह राम के असीम बल से आज से बहुत पहिले ही टक्कर ले चुका था और उसने उसमें मुँह की खाई थी। तब वह बोला—'हे राजन! वह कौन व्यक्ति है, जो इस प्रकार आपके साथ दुश्मनी निकालना चाहता है। आप तो सभी को प्रसन्न रखते हैं—फिर भी, वह कौन व्यक्ति है, जो आपसे सन्तुष्ट नहीं है। राम की शक्ति को मैं देख चुका हूँ—आपको उसके साथ युद्ध नहीं करना चाहिये। हे लंकेश्वर! आप मेरी बात पर क्रुद्ध न होकर, लङ्का को गमन कीजिये और जीवन पर्यन्त सुख पूर्वक वहाँ पर रहिये।'

मारीच के शब्दों को सुनकर वह तुरन्त ही रथ में आकर बैठ गया। फिर, वह लंका की ओर वापिस लौटता हुआ मार्ग में सोचने लगा—राम से मारीच बहुत अधिक भयभीत है, इसलिये वह राम के सामने अब नहीं

पड़ना चाहता। इस समय अपने कार्य के लिये उससे अधिक कुछ कहना उचित नहीं था अन्यथा उसके इन्कार करने पर, वह समझता था कि मैं ही क्रोध के वशीभूत हो, उसे मार डालता और बाद में पछतावे के अतिरिक्त और कुछ हाथ न लगता।

यही सब कुछ सोचता-विचारता जब वह लंका के समीप पहुँचा—सूरज डूब चुका था। असख्य दीपकों का प्रकाश लंका को पुनकित कर उसे जीवन दान सा दे रहा था। आज उसने बहुत दिनों के बाद दूर से अपने विशाल भवन को देखा—अमावस्या की रात्रि के गहरे अंधकार में वह प्रकाश पुंज-सा दीख पड़ रहा था। राज-मार्गों में युवक युवतियाँ, छोटे बड़ों का शोर और अपनी जय-जयकार सुनता हुआ जब वह अपने भवन के समीप पहुँचा तो वह रथ में से उतर सीधा मन्दोदरी के महल की ओर बढ़ा। वह जानता था, मन्दोदरी की चिर नूतन मुस्कान सदा की भाँति उसे आज भी सुखकर प्रतीत होगी।

और दूसरे दिन जब वह भवन की सातवीं मंजिल के ऊपरी भाग पर बैठा हुआ अपने मन्त्रियों के साथ राम को परास्त करने विषयक विचारों में लीन था—तभी, बहिन शूर्पणखा ने उसे दूर से देखा—प्रदीप्त तेजवाला उसका भाई सूर्य की आभा में दमकते हुये स्वर्ण के बने सिंहासन पर विराजमान अग्नि के समान उज्ज्वल प्रतीत हो रहा था। उसने सोचा—यह उसका वह भाई है, जिसने ससार में सभी को परास्त किया है और राजलक्षणों से विभूषित वह अपनी उपमा स्वयं ही है। सुन्दर वस्त्रों के भीतर से उसका बदन उसे झाँक कर देखता हुआ सा जान पड़ा। तभी, उसका मन उससे कहने लगा—खर के नष्ट होने पर तुम चिन्ता क्यों करती

हो ? इन्द्र, वरुण, यम, कुबेर, वासुकि, तक्षक आदि अनेक बलवान् नरेशों को सहज ही में परास्त कर देने वाले रावण—अपने भाई के असीम बल में क्या तुम्हें विश्वास नहीं ? दिव्य अस्त्रों का प्रयोग करने वाला तुम्हारा यह भाई संसार में किसे युद्ध में परास्त नहीं कर सकता ! तुम उसकी बहिन हो—फिर, तिसवा—वह तुम्हारे इस अपमान को कभी भी सहन नहीं कर सकता। राम द्वारा अपनी बहिन को कुरूपा बना दिये जाने पर वह चुप नहीं बैठ सकता। पगली ! ऐसा कौन भाई है जो, अपनी बहिन का अपमान सहन कर सके। तुम उसके समीप पहुँच कर उससे कहो तो—वह राम को भी युद्ध में परास्त कर सकेगा।

और तभी वह उसके पास पहुँच उससे कहने लगी—'हे जीतने वालों में श्रेष्ठ ! दशरथ के पुत्र राम ने मुझे कुरूपा कर खर, दूषण आदि दण्डक वन के सभी वीरों को मार डाला है। वह बड़ा ही गोरा और पराक्रमी है। उसका भाई लक्ष्मण उसकी दाहिनी भुजा के समान है और उसकी प्रियतमा सीता सदा उसी में परायण रहने वाली अनिन्द्य सुन्दरी उसकी जीवन-दात्री है। उसका मुख पूर्ण चन्द्र के समान, उसके केश, नाक और उसकी जंघाएँ मनोहर एवं उसके नख ऊँचे और लाल लाल हैं। वास्तव में वह तुम्हारी भार्या होने के लायक है। तुम सर्व समार्थ हो—तुम सीता को अपनी पत्नि बनाकर मेरे अपमान का बदला राम से लो।' इतना कह वह भाई के सम्मुख फूट-फूट कर रोने लगी।

सामर्थवान् दशकंधर बहिन की ऐसी दशा देखकर दुःख से व्याकुल हो क्रोध में भर गया। मगर अपमान की युक्ति रह रह कर उसका मार्ग दर्शन कर रही थी। वह अपने मन्त्रियों को चले जाने की आज्ञा दे विचारों में

िमान हो गया। वह इस कार्य में सूक्ष्म-दृष्टि से काम लेना चाहता था। फिर, अपनी बुद्धि की सहायता से कुछ निश्चित् कर, उसने अपने रथ को तैयार करने की आज्ञा दी। और कुछ ही देर के बाद लंका के राजमार्गों में आने-जाने वाली उसकी प्रजा ने देखा—उनका राजा श्रीमान् दशकंधर स्वर्ण से भूषित और महावेगवान रथ में बैठ कर लंका से बाहर कहीं पर जा रहा है। उसके बलिष्ठ और सुन्दर शरीर पर स्वर्ण के बने हुये पवित्र गहने प्रभायुक्त दीख पड़ रहे हैं। सुन्दर वस्त्रों के आवरण के भीतर से उसका पुरुषार्थ फूटा पड़ रहा है। और श्रद्धा से वे उसके सम्मुख नत-मस्तक हो उसका जय-जयकार करने लगे। मगर उन हजारों को शीघ्रता से पीछे छोड़ता हुआ वह मारीच के निवास-स्थान की ओर बड़ी तेजी के साथ बढ़ा चला जा रहा था। उसने निश्चय कर लिया था—वह मारीच को अपना साधन बना कर निश्चय ही सीता का हरण करेगा। वह सोच रहा था—अपने विचारों की रक्षा के निमित्त राम को संसार से मिटा देना नितान्त आवश्यक है। अपनी विधवा बहिन के अपमान का बदला लेना अपने गौरव और अपनी शान को कायम रखना है—फिर सीता जैसी सुन्दर तरुणी को अपनी भार्या बना लेने से वह सब कुछ अनायास ही हो जायेगा। इसीलिए वह पर्वतों, मैदानों, जंगलों को लाँघता हुआ बड़ी तीव्र गति से मारीच की ओर चला जा रहा था।

और जब वह मारीच के आश्रम के निकट पहुँचा तो रावण को इतनी शीघ्रता से दूसरे दिन ही दूसरी बार आया हुआ देखकर मारीच को हुत अचम्भा हुआ। भोजन और जल से उसका स्वागत कर वह उससे कहने लगा—'हे राजन्! आपने शीघ्र ही किस कारण से इतना कष्ट उठाया। लंका में सब प्रकार से कुशल तो है।'

मारीच के इस प्रकार पूछने पर वाक्य—विशारद रावण उससे कहने लगा—'हे मारीच ! मैंने यह प्रतिज्ञा की है कि मैं सीता का हरण जरूर करूँगा। अपनी बहिन के अपमान को मैं सहन नहीं कर सकता। तुम्हें शायद ज्ञात नहीं है कि लक्ष्मण ने राम की आज्ञा से बहिन शूर्पणखा के नाक और कानों को काटकर मुझे अपमानित किया है। सीता का हरण कर मैं राम से अपने अपमान का बदला लेना चाहता हूँ। हे तात ! इस समय मैं बहुत ही दुखी हूँ और इस अवसर पर केवल तुम ही मेरी सहायता कर सकते हो। मैं इसीलिये इतनी शीघ्रता से तुम्हारे पास आ पहुँचा हूँ।'

राम के पराक्रम को जानने वाला मारीच दृढ़ प्रतिज्ञ रावण के ऐसे वचन सुनकर हठात् भयभीत हो उसके मुख की ओर देखने लगा। उस समय उसका मुख सूख गया और वह अपने सूखे हुये ओठों को चाटने लगा। फिर, बहुत ही आर्त बन हाथ जोड़ उससे कहने लगा—'हे राजन् ! मैं राम के बल को जानता हूँ—इसलिये, अगर आप मेरी और अपनी भलाई चाहते हैं तो आप राम से भिड़ने का साहस न कीजिये। मेरी भाँति आप भी अपने अपमान को भूल जाने की कोशिश कीजिये। हे महाबली ! मैं जानता हूँ, आपने युद्ध में इन्द्र और यम को भी परास्त किया है—मगर सीता का हरण करना बहुत कठिन कार्य है। इसलिये आप मेरी बात पर ध्यान दीजिये और अपने निवास स्थान को लौट जाइये—इसी में आपकी भलाई है।'

मारीच की इस बात को सुन कर रावण को क्रोध-सा हो आया और वह आज्ञा देता हुआ-सा उससे कहने लगा—'मारीच ! तुमको मेरी आज्ञा का पालन करना ही होगा। तुम राम से बहुत अधिक डरे हुये हो, इसीलिये तुम इस प्रकार की बातें कर रहे हो और मेरी बात पर बिल्कुल

भी ध्यान नहीं दे रहे। अब जो मैं तुमसे कहता हूँ उसे ध्यान-पूर्वक सुनो और मेरे साथ चलने के लिये तैयार हो जाओ। हे बहुत-सी मायाओं के जानने वाले! अपनी माया की सहायता से तुम एक बहुत ही सुन्दर हिरण बनकर राम के आश्रम म जा, सीता के सामने विचरण कर, उसे अपने ऊपर आसक्त करो। जब, सीता की इच्छा पूर्ति के निमित्त, राम और लक्ष्मण तुम्हे मारने के लिये तुम्हारी ओर दौड़ें तो तुम तेजी से दौड़ते हुए, इस प्रकार उन्हे बहुत दूर ले जाओ। तब, मैं सीता का अनायास ही हरण कर लूँगा—इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।'

कुछ रुक कर वह फिर कहने लगा—'इस प्रकार कार्य करने मे सम्भव है, तुम्हारे प्राण न जायें; मगर मेरी आज्ञा का उलंघन करने पर तुम्हारी मृत्यु निश्चित है। अब जो तुम्हें उचित जान पड़े वह करो।' इतना कह कर वह क्रोध के कारण लाल पड़ गई आँखों से उसकी ओर देखने लगा।

रावण की इस कठोर आज्ञा को सुनकर मारीच बहुत अधिक डर गया—फिर, वह स्वस्थ होकर उससे कहने लगा—'जो आज्ञा! अगर आप इसी बात म खुश हैं, तो मैं आपके साथ राम के स्थान को चलता हूँ।'

मारीच की इस बात को सुनकर रावण का रोम-रोम हँस पड़ा। वह उसकी पीठ को थपथपाते हुये कहने लगा—शाबाश मारीच! यह बात तुम्हारी वीरता के अनुरूप है। वीर-पुरुष को युद्ध मे मारे जाने का भय नहीं सताता। उन्हे तो कुत्ते-जैसी मौत से नफरत होती है। आओ—अब तुम मेरे रत्न विभूषित स्वर्ण के बने रथ में मेरे साथ बैठो।'

फिर, कुछ क्षणों के उपरान्त महावेगवान वह रथ रावण और मारीच को लेकर पवन-वेग से वन, पर्वत, नदियो और बहुत से नगरों को लाँघता

हुआ दण्डक-वन में अवस्थित राम के आश्रम की ओर जा रहा था। अब वह सोच रहा था, उसकी सफलता निश्चित है। और वह खुश था।

इस प्रकार सोचते-चलते हुए जब वह राम के आश्रम के समीप पहुँचा तो उस दिव्य रथ में से उतर मारीच का हाथ पकड़कर कहने लगा—'हे सखे! सामने की ओर—वह कदलीवन से घिरा हुआ देखो, राम का आश्रम है। अब तुम मेरा मनोरथ पूर्ण करो।' और मारीच इतना सुनते ही अद्भुत दीख पड़ने वाले मृग के रूप में राम के आश्रम के बहुत ही समीप पहुँच कर रावण के कथनानुसार वहाँ पर विचरण करने लगा। वास्तव में मृग के रूप में उस समय मारीच बहुत ही सुन्दर दीख पड़ रहा था। उसके सींग बढ़िया मणियों के समान शोभा-सम्पन्न जान पड़ रहे थे। मुख लाल और नीले कमलों की मिश्रित आभा से विभूषित था। मुख-मण्डल श्वेत और काला, कान इन्द्र नील मणि जैसे और गरदन कुछ उठी हुई, शरीर का वर्ण कमल के पराग की भाँति और दोनों पार्श्वों का रंग महुए के पुष्प के सामन दीख पड़ने वाला था। उसके खुर वैदूर्यमणि के समान, जंघाएँ पतली और पूँछ इन्द्रधनुष के समान चिचित्र वर्ण की कुछ-कुछ ऊपर को उठी हुई थी। उसकी पीठ पर सैकड़ों चाँदी के रंग के विन्दु विचित्र हो रहे थे।

ऐसे सुन्दर दीख पड़ने वाले मृग के देश मे मारीच वहाँ पर उगे हुये वृक्षों के पत्ते खाता हुआ, सीता की दृष्टि को अपनी ओर आकर्षित करने की कामना से, राम के आश्रम के पास मन्द गति से चलता हुआ कभी कदलीवन मे और कभी कन्नेर के वृक्षों में सुख पाने लगा।

और तभी, खञ्जनपक्षी के समान नेत्र वाली सीता ने उसे देखा और वह पुष्प चुनना भूल उसको देखती हुई ठगी-सी खड़ी रह गई। विस्मय के

कारण उसके नेत्र चमक उठे। आनन्द-विभोर हो उसने राम और लक्ष्मण को पुकार कर कहा—'हे आर्यपुत्र! शीघ्र ही यहाँ आकर इस परम मनोहर हिरण को देखो।' राम और लक्ष्मण के वहाँ आ-पहुँचने पर उसने फिर कहा—'हे आर्यपुत्र! चन्द्रमा के समान प्रिय दीख पड़ने वाला यह हिरण, अनेक रंगों से चित्रित होने के कारण यह मेरे मन को मोहे ले रहा है। अगर आप इसे जीवित ही पकड़ लें तो कितना अच्छा हो। हे प्रभो! वनवास की अवधि समाप्त होने पर हम इसे अयोध्या ले चलेंगे—वहाँ पर जो भी इसे देखेगा—वही विस्मित होगा। और हे नर-श्रेष्ठ! अगर आप इसे जीवित न पकड़ सकें—तो, इसकी चर्म भी मुझे बहुत ही सुख देगी।'

सीता की उत्कंठा पूर्ण इस वाणी और हिरण की सुन्दरता ने राम का मन भी विचलित कर दिया। वह सीता की रक्षा का भार लक्ष्मण पर छोड़, शीघ्रता से स्वर्ण की बनी हुई मूँठ वाली अपनी तलवार और तीन स्थानों में झुके हुये धनुष को धारण कर मृग रूपी मारीच के पीछे दौड़ा, मगर वह राम को अपनी ओर आता हुआ देख कर, भय के कारण तुरन्त ही अन्तर्धान होगया और थोड़ी देर के बाद ही, दूरी पर, वह फिर राम को दीख पड़ने लगा। और फिर, राम को अपनी ओर आता हुआ देखकर वह तीव्र गति से भागने लगा।

इस प्रकार उसके पीछे भागते-भागते बहुत दूर निकल आने पर महातेजस्वी राम ने उसका बध करने के विचार से क्रोध में भरकर सूर्य की किरण के समान उज्ज्वल बाण को अपने धनुष पर चढ़ा, उस समय वृक्षों की ओट में से निकलते हुये मारीच रूपी उस हिरण पर छोड़ा। और पलक-मारते राम के उस बाण ने मारीच के हृदय को बींध डाला—मगर

उसे अपने अन्तिम समय में भी अपने वचनों का ध्यान था और उसने बड़े जोर से चिल्ला कर कहा—'हा, सीते! हा, लक्ष्मण!' फिर, वह चुप हो गया। उसके प्राण-पखेरू उड़ चुके थे।

उधर आश्रम में बैठी हुई सीता ने जब इस आवाज़ को सुना तो उसे राम का कंठ-स्वर समझ वह लक्ष्मण से कहने लगी—'हे लक्ष्मण! तुम बिना विलम्ब किये उस ओर जाओ। स्वामी के इस आर्त-स्वर को सुनकर मेरे हृदय की गति रुकी-सी जा रही है। तुम्हारे भ्राता विपत्ति में पड़ कर यह चीत्कार कर रहे हैं। तुम तुरन्त वहाँ पहुँच कर उनकी रक्षा करो।'

सीता के मुख से ऐसे वचन सुनकर लक्ष्मण ने अनेक प्रकार से उसे समझाने का प्रयत्न किया, परन्तु उसने लक्ष्मण के समझाने की ओर बिल्कुल भी ध्यान न दे अन्त में कहा—'अरे दुराचारी कुलदूषण! तू परम दुष्ट है, इसीलिये इस प्रकार बातें बनाना तुझे अच्छा लगता है। मगर तू मुझे प्राप्त नहीं कर सकेगा। मैं राम के बिना इस संसार में एक क्षण भी जीवित नहीं रहूँगी; मैं तेरे सामने ही अपने प्राणों को त्याग दूँगी।' इतना कह वह फूट-फूट कर रोने लगी।

सीता के इन कठोर वचनों को सुन कर साधु-स्वभाव लक्ष्मण वहाँ पर एक क्षण भी रुकना अनुचित जान तुरन्त ही राम की ओर चल दिया। वह अभी कुछ ही दूर पहुँचा होगा कि वेश बदले हुये रावण, वृक्षों की ओट में से निकल, सीता की ओर चला। शरीर में गेरुआ वस्त्र पहिन बाँये कंधे पर शुभयाष्टिका और कमण्डल धारण कर, इस समय उसने पूर्ण रूप से संन्यासी का रूप धारण किया था। वह शीघ्रता से रोती-जाती सीता के समीप पहुँच उससे कहने लगा—हे शोभने! तुम कौन हो?

तुम्हारा वर्ण बहुत ही सुन्दर और मनोमुग्धकारी है। तुम्हारे नेत्र विशाल और निर्मल हैं। नेत्रों में काली पुतलियों की कोर लाल-लाल और शोभायुक्त है तुम्हारे लोल कपोलों पर बिखर जाने वाले ये अश्रु मोती कितने शोभा-सम्पन्न दीख पड़ते हैं। तुम्हारे अधर सुधा-रस-पूर्ण और दाँतों का अग्रभाग चमेली के फूलों के समान श्वेत और मनोहर है। परस्पर सटे हुये तुम्हारे दोनों स्तन स्निग्ध और पत्थर के समान सख्त जान पड़ते हैं। हे विलासिनी! हाथी की सूँड़ के समान दीख पड़ने वाला तुम्हारा यह जघन देश मुझे अपनी ओर हठात् खींचे ले रहा है। तुम्हारा रूप संसार में अनोखा है—मगर इस तरुणाई में तुम्हारा वन में रहना मेरे मन को बहुत दुख दे रहा है। भयंकर और साक्षात् काल रूप वन-पशुओं से सेवित यह वन तुम जैसी रूपसी के लिये उपयुक्त निवास स्थान नहीं जा कहा सकता। तुम्हारा मंगल हो, तुम यहाँ से प्रस्थान करो।' इतना कह वह सीता की ओर देखने लगा।

मगर साधु-रूप रावण द्वारा की गई अपनी इस प्रशंसा के शब्दों को पवित्र अन्तः करण वाली सीता ने बहुत ही सात्विक भाव से ग्रहण किया—फिर, वह उसे वास्तव में कोई महात्मा समझ उसके आतिथ्य-सत्कार में लग गई। उसने पहिले रावण को आसन और अर्घ दिया—फिर, उसे भोजन कराने के विचार से उससे कहने लगी—'हे ब्राह्मण! आप इस कुश के बने आसन पर बैठ कर, सुखपूर्वक इस पाद्य को ग्रहण कीजिये। यह सिद्ध किया हुआ उत्तम और पवित्र वन्य अन्न आपको अर्पण है।'

पास ही में खड़े हुये ब्राह्मण-रूप रावण के सम्मुख भोजन की सामग्री रख, भोजन कर लेने के लिये उससे प्रार्थना करने के उपरान्त,

विदेह राज नन्दिनी सीता, उस समय मृगया के लिये गये हुये राम और लक्ष्मण को लौट आते हुये देखने की इच्छा से वन में इधर-उधर देखने लगी—मगर वन के वृक्षों और पशु पक्षियों के अतिरिक्त वहाँ उसे राम और लक्ष्मण न दीख पड़े। तब, उसने उसी प्रकार खड़े रहकर अपनी ओर कड़ी नजर से देखते हुये रावण की ओर देखा—फिर, उसकी उस दृष्टि का यह अर्थ अनुमान कर कि साधु अपने प्रश्न का उत्तर न पाने के कारण उसपे क्रुद्ध हो उठा है—शायद इसी कारण वह उसे श्राप न दे वह उससे कहने लगी—'आपका मंगल हो—मैं राजा जनक की पुत्री और राम की प्रिय पत्नि हूँ। मेरा नाम सीता है। विवाह के उपरान्त मैंने इक्ष्वाकुवंशियों की राजधानी अयोध्या के राज भवनों में लगातार बारह वर्षों तक रह कर सभी प्रकार के भोगों को भोगा है। जब मैं अठारह वर्ष और मेरे स्वामी महा तेजस्वी राम पच्चीस वर्ष के हुये, तब मेरे श्वसुर सत्य प्रतिज्ञ राजा दशरथ ने नियमानुकूल अपने सबसे बड़े पुत्र और मेरे पति भगवान राम का, अपने मन्त्रियों के साथ विचार विमर्श करने के उपरान्त, राजाभिषेक करना चाहा, परन्तु मेरी सास कैकयी ने अपने पति को शपथ दिला दो वर माँगे। पहिले वर से अपने पुत्र भरत को राज्याभिषेक और दूसरे में मेरे पति को चौदह वर्षों का वनवास! तब मेरे श्वसुर ने अनेक युक्ति भरे वाक्यों की सहायता से माता कैकयी को समझाने का बहुत अधिक प्रयत्न किया, परन्तु वह न हो सका।

इस प्रकार माता कैकयी की इच्छा को पूर्ण करने के निमित जब शीलवान् राम मेरे साथ वन को आने लगे तो उनके सौतेले भाई लक्ष्मण

ब्रह्मचारी और दृढ़व्रत बन, हाथों में धनुष-बाण ले हमारे पीछे-पीछे चले। हे द्विज श्रेष्ठ! इस प्रकार हम तीनों राज्य-भ्रष्ट होकर इस गंभीर वन में काल-यापन कर रहे हैं। आप यहाँ पर कुछ देर ठहरिये, मेरे स्वामी मृग-गोह और वराहों को मार कर उनका बहुत-सा माँस अपने साथ में लेकर आते ही होंगे। अब हे ब्राह्मण! आप अपना नाम, गोत्र और कुल बताइये।'

महाबली राम की पत्नि सीता के इस प्रश्न को सुनकर विश्व-विजयी रावण तब कहने लगा—'हे सीते! जिसने अपने पराक्रम से सारे संसार को जीत लिया है--मैं वही रावण नाम वाला राक्षसेन्द्र रावण हूं। हे अनिन्दिते! तुम्हारे रूप को देखकर अब मेरा मन अपनी स्त्रियों से बिल्कुल ही हट गया है। तुम्हारा कल्याण हो--मैं चाहता हूँ, तुम मेरी पटरानी बनो। समुद्र के मध्य में स्थित जो महानगरी है—लङ्का नाम की वही नगरी मेरी राजधानी है। त्रिकूट पर्वत पर बसी हुई रूपवती उस लङ्का में रहकर तुम सभी प्रकार के सुखों का उपभोग कर सकोगी। हे सीते! अगर तुम मेरी भार्या बन जाओ तो पाँच हजार दासियाँ तुम्हारी सेवा में हर समय तत्पर रहेंगी। मेरे साथ जब तुम लङ्का के सुन्दर उपवनों में विहार करोगी, तब तुम्हें इस प्रकार वनवास करना अच्छा नहीं लगेगा। इतना कह कर वह अपनी बात के प्रभाव को जानने के लिए सीता के मुख की ओर देखने लगा।

उसके ऐसे वचनों को सुनकर तब अनिंद्य सुन्दरी सीता उससे कहने लगी—'बड़े भारी पर्वत के समान जो अडिग है, समुद्र के समान क्षुब्ध उन पतिराम के साथ रहकर मैं सुखी हूँ। मैं उन बड़ी-बड़ी भुजाओं वाले

सिंह के समान क़दम-क़दम चलने वाले अपने पति राम से गहरा प्रेम कर सदाँ उन्हीं म परायण रहती हूं। तू तों गीदड़ है, अतः मुझ सिंहनी को प्राप्त करना तेरे लिये दुष्कर कार्य है।' महा वार्यवान राम की पत्नि स्वप्न मे भी तेरी भार्या नहीं बन सकती। इस प्रकार कटु वाक्य कहने के उपरान्त सीता आँधी से व्यथित हुई कदली के समान काँपने लगी।

तब क्रोध में भर रावण ने अपना साधु-वेश त्याग दिया—फिर, वह कहने लगा—'तूने अभी तक मेरा पराक्रम नहीं देखा है। मूर्खे! मैंने इन्द्र, वरुण, यम आदि सब ही को युद्ध म परास्त किया है। महाबली और धनाध्यक्ष कुबेर मेरा बड़ा भाई है। मगर मैंने उसे भा युद्ध में हरा कर उसका पुष्पक नाम का विमान उससे छीन लिया है। मै अपने तीक्ष्ण बाणों की सहायता से पृथ्वी को भी फोड़ सकता हूं। आकाश मे चलते हुये चन्द्रमा और सूर्य को भी रोक सकता हू। अरी पण्डित मानिनि मूर्खे! जो मूर्ख साधारण स्त्री के वाक्य से राज्य और बन्धुओ को त्याग कर यहाँ वन म चला आया है, तू उस राज्यभ्रष्ट, विफल मनोरथ और अल्पायु राम के किस गुण पर रीझ रही है। मैं बहुत शीघ्र ही राम को मृत्यु के मुख में झोंक दूँगा।'

सीता से इस प्रकार कहने के उपरान्त रावण ने उसे पकड़ लिया। फिर, समीप ही वृक्षों की ओट मे खड़े हुये शीघ्रगामी अपने रथ मे उसे डाल वह लङ्का की ओर चला। उस समय सीता का विलाप चारो दिशाओ को गुँजा रहा था।

———

: चौदहवाँ अध्याय :

: सीता—लंका में :

सीता का हरण कर दण्डक वन में बने हुये राम के आश्रम से क़ाफी दूर निकल आने पर, लंका के मार्ग में वह सोच रहा था—सभी क्षत्रिय राजा, साथ ही वे बहुत-से तपस्वी अपनी बिगड़ी हुई बात को बना लेने की गरज़ से, राम को अगुआ बना कर उसके साथ युद्ध कर उसे संसार से मिटा देना चाहते है। इसीलिये राम सभी वनों को छोड़कर अपने वनवास की अवधि समाप्त होने तक, उसके राज्य के अन्तर्गत् पड़ने वाले दण्डक-वन में आकर स्थायी रूप से बस गया है। और उसकी बहिन का अपमान करने का अर्थ है, उसके साथ खुली बग़ावत ' मगर उसने भी इस समय नीति-कुशलता का परिचय दिया है। उसकी बहिन को अपनी कुटिया में अकेली और निर्बल देख कर जिस प्रकार राम ने उसका अपमान किया था—ठीक, उसी तरह उसने उसकी भार्या का हरण कर उसका उसे उचित और उसके अनुरूप दंड दिया है। तभी, उसने अपनी बाहुओं मे कसी रोती हुई सीता की ओर देखा—फिर, कुछ ही दूरी पर चमकती हुई लंकापुरी को '

और कुछ ही देर के बाद वह सीता के साथ उस सुविस्तृत नगरी में घुस फिर अपने अन्त:पुर मे घुसा। उस बड़े कमरे में पड़े हुये अनेक आसनों मे से सीता को एक आसन पर विराजमान कर वह वहाँ पर खड़ी हुई दासियों से कहने लगा—'कोई स्त्री अथवा पुरुष मेरी आज्ञा के बिना सीता को देखने के लिये यहाँ पर नहीं आ सकता। वस्त्र, आभूषण आदि

किसी भी वस्तु की इच्छा करने पर, उस वस्तु को इनके सम्मुख तुरन्त उपस्थित कर देने की मैं पहिले से ही तुम्हें आज्ञा देता हूं। सीता का, जान में अथवा अनजान में अप्रिय करने वाला वह कोई भी मृत्यु दण्ड का अधिकारी होगा।'

उन दासियों को इस प्रकार आज्ञा देने के उपरान्त रावण अन्तःपुर के उस बड़े कमरे में से बाहर निकल फिर उस समय के अपने कर्त्तव्य के विषय में विचार करने लगा। खर और दूषण के मारे जाने के पश्चात् इस प्रकार रिक्त हुये उन स्थानों पर वह योग्य व्यक्तियों की नियुक्ति कर दण्डक वन की रक्षा का भार उन्हें सौंपे। सीता के विषय में वह कौनसी नीति को अपनाये। बगावत करने वाले इन नरेशों को वह किस प्रकार दबा सकता है—आदि, इसी प्रकार के अनेक प्रश्नों पर वह गम्भीरता के साथ मनन कर रहा था। और तभी उसने अपने कमरे की खिड़की के उस पार, महल की खास सड़क पर- विश्वास-पात्र और महाबली इन आठ योद्धाओं को जाते हुये देखा, जिन्हें उसने कुछ दिनों पहिले ही एक बड़ा भारी काम सौंपकर उनके बल-विक्रम की परीक्षा ली थी। उसने तुरन्त ही द्वारपाल को आज्ञा देकर उन्हें अपने पास बुला भेजा।

और क्षण भर के उपरान्त वे आठों योद्धा उसके सम्मुख पहुंच, नत-मस्तक हो, उसकी जय-जयकार करने के पश्चात उससे कहने लगे—'महा-राज की हमारे लिये क्या आज्ञा है?'

तब अपनी गर्दन को ऊपर उठा उनकी ओर देखते हुये उसने कहा—पहिले जिस स्थान पर मैंने खर और दूषण की नियुक्ति कर उसकी रक्षा का भार उनके ऊपर छोड़ा था—अब राम के द्वारा उनके नष्ट हो जाने पर,

उस स्थान की रक्षा के निमित्त मैं तुम्हें नियुक्त करता हूँ। उस राम के साथ मेरी बड़ी भारी शत्रुता हो गई है—अपने उस महाशत्रु राम को मारे बिना मैं सुख की नींद नहीं सो सकता। इसलिये मैं क्रोध के कारण इस समय बहुत ही अधीर हो रहा हूँ। मेरी इच्छा की पूर्ति के लिये वहाँ पहुँच कर तुम इस बात का ध्यान रखना कि राम विषयक सभी सम्वाद मेरे पास समय के भीतर ही पहुँचते रहें। हे योद्धाओ! मैंने तुम्हारा पराक्रम देखा है—अगर हो सके तो तुम राम को मार डालने का स्वयं ही प्रयत्न करना; मगर देखो, यह कार्य बहुत ही सावधानी के साथ होना चाहिये। मैंने तुमको सभी बातें अच्छी तरह समझादी हैं—अब तुम जा सकते हो।'

तदन्तर रावण की आज्ञा को शिरोधार्य कर वे आठों योद्धा उसी समय दण्डकवन की ओर चले और वह सीता को देखने की लालसा से वहाँ से उठ अन्तःपुर के उस कमरे की ओर चला जहाँ आँसू बहाती हुई सीता दासियों से घिरी बैठी थी। वहाँ पहुँच कर उसने देखा—शोक से पीड़ित सीता मुख नीचा किये हुये समुद्र में आँधी से झँझोड़ी हुई नाव के समान शोभा-हीन हो रही है। उसने उसका मन बहलाने की इच्छा से उसका हाथ पकड़ उसे उठाया और अपने साथ में लेकर उसे अन्तःपुर में घुमाने लगा। सीता ने देखा—उसका अन्त पुर बहुत-सी महिलाओं से भरा-पुरा और मदमाती लहरों से ओत-प्रोत है। चूने से पुती हुई दीवारों पर मणि-मुक्ताओं की सहायता से विविध प्रकार की चित्रकारी कर उसे खूब ही सजाया गया है। चारों ओर स्थान-स्थान पर स्वर्ण के बने पिंजड़ों में अनेक प्रकार की बोली बोलने वाले पक्षी अपनी-अपनी तोलियों पर बैठे न जाने क्या कुछ बोल बोल कर उसका स्वागत्-सा कर रहे हैं। रुचिर पुष्पों से

आच्छादित बहुत से वृक्ष भी उसने वहाँ पर उगे हुये देखे—फिर, वह अनमनी-सी उसके पीछे-पीछे तपे हुये स्वर्ण की बनी हुई सीढ़ियों पर चढ़ने लगी—और रंगमहल के ऊपरी भाग की खुली छत पर पहुँच कर उसने देखा—दूर तक चली गई भवनों की वह कतार शोभा-युक्त है। वज्रमणि और वैदूर्यमणि से जड़े हुये खम्बों पर खड़ी की गई वे बाहरी छतें मनहरण और कान्ति से परिपूर्ण हैं। और वे सभी कमरे हाथी दाँत और चाँदी के बने झरोखों से सुसज्जित हैं। तभी, वह सीता-सहित एक कमरे के भीतर पहुँच सीता का एक हाथ अपने हाथ में लेकर आत्म-विभोर सा हुआ कहने लगा—'हे सीते! इस सुन्दर और परम-मनोहर नगरी का मैं एक मात्र स्वामी हूँ। इस नगरी में अवस्थित मेरे राज-महल की शोभा को तुम अपनी आँखों से स्वयं देख रही हो। हे विशाल लोचने! तुम मुझे प्राणों से भी अधिक प्यारी हो—इसलिये मेरा यह सम्पूर्ण राज्य और मैं स्वयं तुम्हारे ही अधीन हूं। तुम मेरी भार्या बन, इन सबको ग्रहण करो। तुम हँसकर, केवल एक बार मेरी ओर देखो—मैं इस समय बहुत अधिक दुखी हो रहा हूँ।'

कुछ ठहर कर वह फिर कहने लगा—'सौ योजन मे फैली हुई इस नगरी में संसार में ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं है, जो बल पूर्वक प्रवेश कर सके। मैंने संसार के सभी राजाओं को युद्ध में परास्त किया है—मैं अब राम को भी जीवित नहीं छोड़ूँगा - इसलिये तुम उस अल्पायु, अल्प तेज वाले और जँगलों की खाक छानते-फिरने वाले राम को बिल्कुल भूल जाओ। सीते! मैं तुम्हारे लिये योग्य स्वामी हूँ, तुम मेरा ही सेवन करो। मेरी भार्या बन कर इस बड़े भारी लंका के राज्य को तुम सुख पूर्वक भोगो। अभि-

षेक के जल से पवित्र होकर, प्रसन्नचित्त से मेरे साथ रमण करो। हे मैथिलि! तुम उत्तम-उत्तम वस्त्र और अलकारों को धारण कर मेरे साथ पुष्पक विमान में बैठ कर आकाश में विचरण करो—इस प्रकार कुछ ही देर में तुम्हारा सब कष्ट दूर हो जायेगा। हे वरारोहे! कमल के समान खिलने वाले इस मुख को रो-रो कर और अधिक मलीन मत होने दो। और हे विदेहराजकुमारी! तुम धर्मनाश के भय से लज्जित न होओ, क्योंकि—हे देवि! तुम्हारे साथ मेरा जो यह सम्बन्ध होगा—यह ऋषियों के द्वारा भी मान्य है। तुम चिन्ता मत करो।'

रावण के इन वचनों को सुन शोक से दुर्बल हुई सीता, एक तिनका अपने और उसके बीच में रख कर, निर्भयतापूर्वक उससे कहने लगी—'धर्मात्मा राजा दशरथ के पुत्र राम मुझे प्राणों से भी अधिक प्यारे हैं। विशाल-नेत्र और बड़ी बड़ी भुजाओं वाले वही राम, भाई लक्ष्मण को साथ में लेकर, अब भी मेरी रक्षा करेंगे, मुझे विश्वास है। वीर्यवान् राम के धनुष से छूटे हुये वे बाण कभी भी निष्फल नहीं होते—इसलिये, स्वयं ही अपनी मृत्यु की कामना करने वाले ओ रावण! तू होनहार के वशीभूत होकर ही मुझसे इस प्रकार की बातें कर रहा है। तुझे वह शीघ्र ही नष्ट कर डालेंगे, तू विश्वास कर। मुझे, राम के बिना, अपने जीवन से लेशमात्र भी मोह नहीं है। मगर मैं कलंकित होकर जीवित रहना नहीं चाहती।' इतना कह सीता क्रोध के आवेश के कारण हठात् चुप हो गई।

और सीता के इन वचनों को सुनकर रावण का मुख क्रोध के कारण रक्ताभ हो आया। उसके कानों के कुंडल हिलने लगे। फिर, वह बहुत ही कठोर वाणी में बोला—'सीते! तुझे राम का बहुत अधिक घमन्ड है—

मगर मैं जो तुमसे कहता हूँ, उसे सुन—यदि तू एक वर्ष के भीतर अपनी इच्छा से मेरी भार्या न बनी तो मैं तेरे टुकड़े-टुकड़े करवा डालूँगा—यह याद रख।' इतना कह कर वह कमरे से बाहर निकल गया। खुली हुई छत पर पहुँच उसने भयंकर स्वभाव वाली दासियों को बुलाकर आज्ञा दी—'तुम सब इसी समय सीता को अशोक वाटिका में ले जाओ। गुप्त भाव से उसकी रक्षा करती रहो, मगर भयप्रद, भर्त्सनापूर्ण और सान्त्वना वाले वाक्य कह-कह कर तुम इसे मेरी भार्या बनाने का प्रयत्न करो।'

इस प्रकार रावण की आज्ञानुसार वे दासियाँ सीता को पकड़ अशोक वाटिका की ओर ले चलीं। कुछ ही देर के बाद जब सीता डरावनी शक्ल की उन दासियों से घिरी हुई अशोक वाटिका में पहुँची तो उसने देखा—अशोक वाटिका में विविध प्रकार के वृक्ष उगे हुये हैं, जिनकी डालें फूलों और फलों के भार से झुकी हुई हरी-भरी उस भूमि को छूने का प्रयास सा करती जान पड़ती हैं। तरह-तरह के पक्षियों का कलरव उस सुन्दर वाटिका को मुखरित सा कर रहा है। और वह वहाँ पहुंचते ही प्रिय पति राम और भाई लक्ष्मण का स्मरण कर, शोक के कारण मूर्छित हो, पृथ्वी पर गिर पड़ी। तुरन्त ही दासियों ने उसे अपने हाथों पर सँभाला और होश में लाने का प्रयत्न करने लगीं।

कुछ ही देर के उपचार के बाद जब राम के वियोग में अधमरी-सी हुई सीता ने अपने बड़े-बड़े नेत्र खोले तो परिस्थिति का ज्ञान कर वह फिर फूट-फूट कर रोने लगी। तभी, धीरज ने धीरे से उसके कान में कहा—तुम रोती हो—सीता! अपने इस आपत्ति काल में तुम मुझे धारण करो। फिर, उसका मन उससे कहने लगा—सीते! क्या तुझे

राम की शक्ति में विश्वास नहीं—क्या लक्ष्मण की श्रद्धा में तुझे अभी भी अविश्वास है—और वह रोती जाती एक दम शान्त हो, अशोक वाटिका में उगे हुये उन वृक्षों की ओर देखने लगी। तभी, उसके मस्तिष्क में एक विचार आया और आकर अटक गया—अपने प्राण प्यारे राम के लिये तुम्हें किसी भी प्रकार जीवित रहना ही होगा,—माते! और वह उठ कर बैठी हो गई।

इस प्रकार धीरज की बाँह पकड़े हुये, राम के वियोग में जल से दूर करदी गई मीन की भाँति तड़पती हुई सीता को जब कई दिवस व्यतीत हो चुके तो एक रात्रि के अन्तिम प्रहर में उसने देखा—बहुत सी रूपवती स्त्रियों से घिरकर रावण मदमाती चाल से उसी की ओर चला आ रहा है। उसके आगे आगे चलने वाली स्त्रियों के हाथों में जल से भरी हुई स्वर्ण निर्मित झारियाँ है और अगल-बगल चलने वाली वे स्त्रियाँ अपने हाथों में मशाल लिये हुये है—उसके पीछे-पीछे चली आने वाली वे सब अपने-अपने हाथों में चमर और पंखे लेकर उसके ऊपर डुला रही हैं। उनके कटि-प्रदेश में बंधी हुई तगड़ी और पैरों के नूपुरों से निकली हुई झंकार विस्तृत उस अशोक वाटिका को गुँजा रही हैं।

और यह देख कर वह वास्तव में काँप उठी। क्षण क्षण में समीप आते जाते रावण के डर के कारण उसने अपने पेट को अपनी जंघाओं से और अपने स्तनों को अपनी भुजाओं से ढक लिया। फिर, अपनी स्वच्छ और निर्मल आँखों में राम की मूर्ति को स्थापित कर, उसने अपने नेत्र बन्द कर लिये। तभी, मदिरा की खुमारी में झूमते हुये रावण ने उसके समीप पहुँच कर उससे कहा—'प्राण प्यारी सीते! तुम मुझे देख

कर डर रही हो। ओह ! मुझे देख कर तुमने अपने अंगों को भी छिपा लिया है। मगर सीते ! तुम्हारा यह डर निर्मूल है। मै तुमसे एक बार फिर प्रेम की भिक्षा माँगने के लिये आया हूं। वास्तव मे तुम्हें पृथ्वी पर शयन करते हुये और मलीन वस्त्र धारण किये हुये देखकर मुझे बहुत अधिक कष्ट होता है। तुम मेरे प्रेम को स्वीकार कर अनेक सुन्दर वस्त्र और आभूषणों को धारण कर मेरे साथ लंका के राज्य का भोग करो।' काँपती हुई सीता को देख कर वह फिर कहने लगा—'तुम भय के कारण काँप रही हो, मगर यह काँपना निरर्थक है। भुजबल अथवा पराक्रम से तो रावण ने युद्ध-स्थल म वीरों पर ही अधिकार करना सीखा है। तुम जैसी सुन्दरी को तो वह अपने प्रेम से ही जीतना अधिक ठीक समझता है। तुम्हारे सम्मुख खड़ी हुई इन सभी स्त्रियों ने जब रावण को अपनी इच्छा स स्वंय को उसके हाथो म सौंप दिया है, तभी, उसने उनके साथ रमण किया है। तुम विश्वास करो। प्राण प्यारी सीते ! तुम रूप की खान हो। संसार मे ऐसा कौनसा प्राणी ह, जो तुम्हे देखकर तुम्हारे रूप पर मुग्ध हुये बिना रह सकेगा। हे भीरु ! मे तुम्हारे इस रूप पर अपना राजपाट आदि सभी कुछ अर्पण कर सकता हूं। तुम वनचारी उस राम का ध्यान छोड़कर मुझे पतिरूप मे ग्रहण करो। मै तुम्हारा हूं, तुम मेरी होकर रहो।'

रावण के ऐसे बचन सुन, मन मे धीरज धारण कर, तब सीता उससे कहने लगी—हे रावण ! आज से चौबीस वर्ष पूर्व जब मैं केवल छः वर्ष की थी—पिता की आज्ञा स मैंने अपना मन, रूप, यौवन सभी कुछ राम को सौंपा था—इसलिये राम ही मेरे एकमात्र स्वामी है। मैं उनके सिवा अब किसी को भी अपने मन मे स्थान नहीं दे सकती। उनकी निधि क

अब दूसरा स्वामी नहीं हो सकता। तुम मेरा ध्यान छोड़ कर अपनी स्त्रियों मे ही मन लगाओ।' फिर कुछ कठोर होकर वह कहने लगी—अरे दशग्रीव! मुझसे राम के विषय में इस प्रकार की बातें करते हुये तुझे लज्जा नहीं आता। वास्तव में तू राम की शक्ति से अपरिचित है—इसीलिये, इस प्रकार बातें कर रहा है। राम और लक्ष्मण के कठोर बाणों को तू सहन नहीं कर सकेगा—मैं तुझ से सत्य कहती हूं। तू अमज्जन······।'

सीता को बीच ही में रोक कर तब रावण उससे कहने लगा—'सीता! यह तेरा दोष नहीं, तेरी जाति का दोष है। स्त्रियों का यह स्वभाव होता है कि वे दुख में सान्त्वना देने वाले उस पुरुष को अपने वश में हुआ समझ लेती है और जैसे-जैसे वह उनका प्रिय कार्य करता जाता है -वैसे ही वैसे स्त्रियाँ उसका अपमान करने लगती है। तेरे ये कठोर बचन सुनकर मुझे क्रोध अवश्य आता है, मगर मैं निर्धारित समय से पहिले तुझे कोई भी दड नहीं देना चाहता।'

इतना कहकर वह चुप हो गया, मगर उसका क्रोध उसे रह रह कर छेड़ रहा था। तब वह सीता की ओर एक कठोर दृष्टि डालकर, वहाँ पहरे पर नियुक्त उन दासियों को आवश्यक आज्ञा दे, साथ वाली स्त्रियों सहित अपने भवन को लौट गया। और सीता अपने पति राम का ध्यान कर वहाँ उसी प्रकार बैठी हुई बहुत देर तक आँसू बहाती रही।

फिर, यह बहुत दिनों को बात है—जब दुखिनी सीता ने उस रम्य रूपवाली अशोक-वाटिका में इसी प्रकार रहते हुये अपने जीवन के कई मास व्यतीत कर दिये—अचानक एक रात्रि के अन्तिम प्रहर मे, राम के दूत वीरवर हनुमान ने उसके समीप पहुंच, राम की कुशल-क्षेम, शीघ्र ही रावण

के साथ युद्ध कर उसे वहां से मुक्त करने की बात कह कर, आश्चर्य में डाल दिया। हनुमान के इन प्रिय वचनों को सुनकर सीता आत्म-विभोर हो, राम के रूप में खो-सी गई। तब, उसकी आशा, हनुमान रूपी गहरे विश्वास में परिणत हो उससे कहने लगी—अब कुछ ही दिनों की देर और है सीते ! तुम एक बार फिर अपने प्रिय राम के शुभ दर्शन कर सकोगी। और सीता में जैसे जीवन लौट आया—तब, राम से जाकर केवल तुम इतना ही कहना कि शीघ्र ही मुक्ति की कामना करती हुई सीता सर्वदा राम का ही ध्यान कर, केवल उन्हीं के दर्शनों की अभिलाषा में अभी तक जीवित है। और बस।'

इतना कह कर सीता ने पहिले नत-मस्तक होते हुये हनुमान के मुख को देखा—फिर, लौटकर जाते हुये उसकी पीठ को—और वह राम का चिन्तन कर सुख पाने लगी।

: पन्द्रहवाँ अध्याय :

: युद्धारंभ होने से पूर्व—दोनों ओर :

दक्षिण दिशा में सीता की खोज करते-करते लंका में आ पहुँचने वाला राम का दूत हनुमान विक्रमी, धीर, वीर और साहसी था। उसने अपने प्रभु के इस कार्य को इतनी सफलता से पूर्ण किया कि सोच कर दाँतों तले उँगली दबानी पड़ जाती है। लंका में पहुँच कर उसने सीता को राम का सन्देश भी दिया और रावण के छोटे भाई विभीषण को अपने स्वामी का अनुयायी भी बना डाला। फिर, लंका में अग्नि कांड कर वह साफ बच कर भी निकल गया। अपनी इस महती सफलता से, वास्तव में, राम के इस कठिन कार्य को उसने बहुत ही सुलभ कर दिया। राम के पास पहुँच कर जब उसने यह सब कुछ कहा तो राम के आश्चर्य की सीमा न रही। तब हर्ष से गद्गद हो राम उससे कहने लगा—'हनुमान! तुम पुरुषोत्तम हो। जो भृत्य स्वामी के कठिन कार्य को अनुराग पूर्वक करता हुआ, उस कार्य को क्षति न पहुँचा कर, अपने स्वामी के दूसरे कार्य को भी साधता है, वही पुरुषोत्तम है। मैं तुमसे विश्वास पूर्वक कहता हूँ—मेरे इस महा कठिन कार्य को तुम्हारे अतिरिक्त संसार में दूसरा प्राणी नहीं कर सकता था। सीता का सन्देश देकर तुमने मेरे और लक्ष्मण के जीवन को बचा लिया है, तुम्हारी इस पराक्रम पूर्ण कार्य करने की क्षमता को देख कर मैं आश्चर्य चकित रह गया हूँ।' इतना कह कर राम ने हनुमान को हृदय से लगा लिया।

तब कुछ सोच-विचार करने के उपरान्त, पास ही में खड़े हुये सुग्रीव से वह कहने लगा—'हे सुग्रीव! वीर हनुमान के द्वारा सीता का पता मिल जाने की यह खुशी, समुद्र को पार करने की कठिन समस्या में विलीन हुई जा रही है। मै सोच रहा हूँ, यह सेना समुद्र के उस पार लंका में किस प्रकार पहुँचेगी—और यही सोच कर मेरा सारा उत्साह भंग हुआ जा रहा है। इस अगाध जल-राशि के समुद्र को हम किस प्रकार पार कर सकेंगे, रह-रह कर यही बात मेरे हृदय को अपार कष्ट दे रही है।'

शोक सन्तप्त, दशरथ नन्दन राम के इन वचनों को सुन कर तब सुग्रीव बोला—'हे वीर! साधारण व्यक्तियों की भाँति आप इस प्रकार दुखी क्यों हो रहे है! हे राघव! जब हमें सीता के स्थान का पता मिल गया, तब आपके इस प्रकार शोक करने का कारण मेरी समझ में नहीं आता। आप विश्वास कीजिये, मै निश्चय पूर्वक कहता हूँ, हम सभी इस समुद्र को पार कर, आपके दुश्मन को युद्ध मे जरूर मार डालेंगे। मै मानता हूँ, समुद्र पर बिना पुल बाधे हुये हम लंका मे नहीं पहुँच सकते—मगर यह भी आप निश्चय ही समझिये, विश्वकर्मा के पुत्र नील की सहायता से यह पुल अवश्य बाधा जायेगा। इसलिये हे राजन! धैर्यवान पुरुष की भाँति आपको इस शोक वाली बुद्धि को तुरन्त ही छोड़ देनी चाहिये। शोक ही मनुष्य के वीर्य को नष्ट कर डालता है। अब समय है, आपको शूरता का अवलम्बन कर तुरन्त ही कदम उठाना चाहिये। मै आपसे अधिक क्या कहूँ, आप स्वयं भी इन बातों के मर्मज्ञ हैं। मुझे तो शुभ-शकुन हो रहे हैं—विजय हमारी निश्चित है—और मेरा मन खुशी से फूला नहीं समाता।'

सुग्रीव की इस युक्तियुक्त बात को सुन, राम ने तब हनुमान से पूछा—'हे हनुमन् ! दुर्गम इस लंका पुरी में कितने दुर्ग हैं ? रावण की सैन्य-संख्या कितनी है ? द्वार देश को दुर्गम बनाने वाली खाइयाँ कैसी और कितनी हैं ? दुर्ग-रक्षक परकोटों आदि के ऊपर यन्त्र आदि हैं, अथवा नहीं ?'

ककुत्स्थवंशी राम के इस प्रकार पूछने पर तब हनुमान कहने लगा—'हे राजन् ! इसमें तो सन्देह नहीं कि लंकापुरी में दुश्मन का सहसा प्रवेश कर लेना नितान्त असम्भव है। रावण द्वारा सेवित इस लंका पुरी को दूसरे शब्दों में अजेय ही कहना ठीक होगा। लंका के बड़े और सुदृढ चारों द्वारों पर बहुत ही मजबूत किवाड चढ़े हुये हैं—उन द्वारों के भीतर वाण-शिला आदि फेंकने वाले पत्थर के बने हुये बहुत से यन्त्र भी रक्खे हुये हैं, जिनकी सहायता से वहां पर आई हुई शत्रु सेना को बाहर-से बाहर ही भगा दिया जा सकता है—लोहे की बनी हुई अनेक तोपें भी रक्खी हुई वहाँ पर मैंने देखीं। समुद्र की भाँति अगाध जलराशि से परिपूर्ण बहुत-सी खाइयाँ उन चारों द्वारों को घेरे हुये हैं—जिनके ऊपर विस्तृत पुल बने हुये हैं। उन पुलों की रक्षा का भार सदा—सतर्क रहने वाले सैनिकों के ऊपर है। हे राम ! रावण बहुत ही सतर्क भाव से अपनी सेना का यदा-कदा निरीक्षण किया करता है। उसकी सेना अपार है। बड़े-बड़े धनुर्धारी, खड्ग-युद्ध के विशेषज्ञ, रथी और अश्वारोही, इस प्रकार अनेक उसकी सेना में दुर्धर्ष वीर सदा उसके लिये अपने प्राण दे-देने के लिये तत्पर रहते हैं। रावण भी अपने सैनिकों को बहुत अधिक प्यार करता है। मगर अब आप शीघ्र ही कठिनता से जीती जाने वाली उस लंकापुरी को नष्ट-भ्रष्ट हुई देखेंगे।'

हनुमान की बातों को राम ने बहुत ही ध्यान-पूर्वक सुना फिर, उत्साह में भर वह बोला—'हे सुग्रीव ! अजेय इस लंकापुरी को मैं जरूर जीतूँगा—यह मैं तुमसे सत्य ही कहता हूँ । सूर्य मध्यगामी हो रहे हैं, विजय के इस शुभ-मुहूर्त में तुम अपनी सेना को लंका की ओर कूँच की आज्ञा दो। आज चन्द्रमा उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र पर हैं और कल हस्त-नक्षत्र का चन्द्रमा होगा, इसीलिये हे सुग्रीव ! रावण के ऊपर विजय-प्राप्ति के निमित्त मै आज ही युद्ध-यात्रा करूँगा। सेनापति नील वेगवान् सेनापतियों को लेकर, मार्ग ठीक करने के लिये, सेना के आगे जावें।' तब, वह सामने खड़े हुये सेनापति नील से कहने लगा—'हे वीर ! उत्तम फल, मूल और शीतल जल से भरे-पुरे वन मार्ग में होकर तुम आगे बढो । विष के द्वारा दुश्मन मार्ग के फल और जलाशयों को दूषित कर सकता है—इसलिये, इस विषय मे तुम्हे विशेष सावधानी रखकर अपने सैनिकों की रक्षा करनी होगी।' इस प्रकार नील को आदेश दे-देने के उपरान्त उसने सुग्रीव से फिर कहा—'हमारी सेना में जो दुर्बल और वृद्ध हैं, उन्हे तुम यहीं किष्किंधा में छोड़ो और इस विराट् सैन्य दल को तुरन्त ही चल देने का हुक्म दो।'

राम की इस आज्ञा को सुनकर सेनापति सुग्रीव ने हर्षित हो अपने हजारो-लाखों सैनिकों को लंका की ओर चल देने का अपना निर्णय सुना दिया। और थोड़ी देर के पश्चात्, अपने राजा सुग्रीव की आज्ञा शिरोधार्य कर, वह समूची सेना, राम और लक्ष्मण को अपने मध्यभाग मे स्थान दे, सेनापति नील के पीछे पीछे लंका की ओर जा रही थी। सेनापति नील की सहायता के लिये वीर ऋषभ और कुमुद तथा अनेक सिपाही भी उसके साथ थे।

इस प्रकार चलती हुई यह सेना जब समुद्र के तट पर पहुँची—उस समय हनुमान के द्वारा लंका में किये गये उस भयंकर कार्य को एक संकेत मानकर, रावण अपने मन्त्रियों से सभा में बैठा हुआ कह रहा था—'हे वीरो! राम के दूत हनुमान ने दुष्प्रवेश लंकापुरी में प्रवेश कर नगरी को क्षुब्ध कर डाला—फिर, वह सीता का पता लेकर अपने स्वामी के पास लौट कर चला भी गया। इसलिये, अब मेरे मन में एक सन्देह उत्पन्न होता है। तुम्हारा कल्याण हो—अब तुम मुझे बतलाओ—ऐसी दशा में अब मैं क्या करूँ? हमारी शक्ति और मान के अनुकूल जो युक्तिसंगत बात हो, उसे तुम मुझे बतलाओ।' क्षण भर के मौन के पश्चात् वह फिर बोला—संसार में उत्तम, मध्यम और अधम इस तरह, तीन प्रकार के मनुष्य हैं। जो व्यक्ति, निर्णय करने में समर्थ—ऐसे तीन मन्त्रियों अथवा सम-दुख-सुख-भोगी-मित्र और बांधवों के साथ मन्त्रणा करके और भगवान् पर भरोसा रखकर किसी कार्य का आरम्भ करता है—पंडित उसे ही उत्तम कहते हैं। जो व्यक्ति, स्वयं ही धर्म और अर्थ का विचार कर किसी कार्य में प्रवृत्त होता है, उसे वे मध्यम पुरुष कहते हैं और जो गुण अथवा दोष का विचार न करके, भगवान की शक्ति में भी विश्वास न कर, अभिमान में भरा हुआ किसी कार्य को शुरू कर देता है और बाद में उसकी उपेक्षा, उसको नराधम! और हे वीरो! इसी प्रकार मन्त्रणा के भी तीन रूप हैं। नीति को जानने वाले मन्त्री, नीति की दृष्टि से उन सब विषयों की आलोचना कर, एक मति हो, जिस मन्त्रणा में प्रवृत्त होते हैं—नीति शास्त्र-विशारद उसको ही उत्तम मंत्र कहते हैं। जिस मंत्रनिर्णय में मन्त्रिगण पहिले अनेक विरुद्ध मतों का अवलम्बन ले, फिर एक ही निर्णय पर पहुँचते हैं, उसे वे मध्यम-

मन्त्र कहते हैं। और जिस मन्त्रणा में, इकट्ठे हुये वे मन्त्री, परस्पर विरोधी मत का अवलम्बन ले विरोधाभास प्रदर्शित करते हुये, कुछ अंश में, एक ही मत का सहारा लेकर भी श्रेयस्कर परिणाम नहीं निकाल पाते हैं, वही अधम मन्त्र कहलाता है। अतः हे मन्त्रियो! तुम मंत्रणा करके किसी उत्तम निर्णय पर शीघ्र ही पहुँचकर, मुझे उससे अवगत करो—क्योंकि, वही मेरा कर्तव्य होगा। अब, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि राम शीघ्र ही किसी भी उपाय से समुद्र को लाँघ मेरे विपरीत हुये नरेशों की सेना को साथ में लेकर, लका मे आ पहुंचेगा। अत अपनी सेना और नगर का जिसमे मंगल हो, तुम सब उसी उपाय को मुझे बतलाओ।'

अपने उन शब्दों के साथ रावण ने फिर सभा को विसर्जित होने की आज्ञा दी। उसने सोचा—ऐसे कठिन प्रश्न पर, विचार करने के लिये, उसके बुद्धिमान मन्त्रियों को समय की आवश्यकता होगी। और इस प्रकार आज्ञा पा, प्रहस्त, निकुंभ, महापार्श्व, महोदर आदि सभी मन्त्री विचार-निमग्न हो, अपने-अपने भवनों को चले गये और रावण अपने महल को! उस समय उसका तेजोमय मुख गंभीरता की गहरी छाया में ढका सा प्रतीत हो रहा था।

और दूसरे दिन प्रातःकाल जब वह भगवान की पूजा करने के उपरान्त सिंहासन पर बैठा हुआ वेदज्ञ ब्राह्मणों से कुछ कह रहा था—तभी राम के दूत हनुमान के बहकाये हुये विभीषण ने उसके समीप पहुँच कर उसे प्रणाम किया। और उसने सदाचार-सम्मत आशीर्वाद देने के उपरान्त, उसे एक आसन पर बैठ जाने की अनुमति दी। फिर, कुछ ही देर के बाद, जब वे ब्राह्मण वहाँ से चले गये तो विभीषण हाथ जोड़ नम्रता-पूर्वक

उससे कहने लगा—'हे महाभुज ! जब से यह सीता लंका में आई है—तब ही से मुझे अनेक कुशकुन दिखलाई दे रहे हैं। इस लिये हे राजन् ! आप सीता को राम को सौंप सुख-पूर्वक जीवन यापन कीजिये। राम से जीतना आपके लिये बहुत कठिन कार्य है। जिसका एक ही दूत इतना अधिक बलशाली निकला—उस राम की अपरिमित शक्ति का क्या ठिकाना होगा ! राम दुर्धर्ष वीर.........।'

तब वह विभीषण की बात को बीच ही में काट कर बोला—'तुम ये बातें किस लिये कह रहे हो, विभीषण ! मैं तो कोई भी अपशकुन नहीं देखता। मैं राम को युद्ध में जरूर परास्त करूँगा—यह मेरा निश्चय है। अब तुम जा सकते हो। मगर कल होने वाली सभा में तुम अपने विचारों को प्रगट कर सकते हो।'

अपने बड़े भाई और रणभूमि में प्रचण्ड पराक्रम प्रदर्शित कर इन्द्र, वरुण, यम और कुवेर के मान का मर्दन करने वाले रावण की आज्ञा को सुन, विभीषण आसन पर से उठ कर खड़ा हो गया। और उसे प्रणाम कर, मन में खिन्न हो, वह तुरन्त ही अपने महल की ओर लौट पड़ा। मार्ग में वह सोचता चला—हनुमान ने उससे कहा था—राम का बल अतुल है। फिर, अगर वह राम से जाकर मिल जाता है, तो लंका का सिंहासन, केवल उसी के लिये सुरक्षित होगा। विभीषण लंकाधिपति ! सोचकर उसके नेत्र चमक उठे—और तभी, उसने निश्चय किया। या तो कल वह सीता को राम के पास लौटवा कर ही दम लेगा—अथवा, वह राम के पास स्वयं ही पहुँच जायेगा। और वह खुश था।

फिर, अपने महल के द्वार में घुसते हुये उसे ख्याल आया—यह निश्चय है कि रावण अपने जीते-जी सीता को नहीं छोड़ सकता। वह दृढ़ प्रतिज्ञ और अपने निश्चय पर अटल और अडिग रहने वाला व्यक्ति है। वह निश्चय ही राम के साथ युद्ध करेगा। और ऐसी दशा में फिर उसका अपना कर्त्तव्य है कि वह यहाँ के सभी भेदों को लेकर कल राज-सभा में से ही राम के पास को चल दे। और इस प्रकार वह कुछ ही दिनों के उपरान्त फिर लंका का स्वामी होगा—लंका का स्वामी—और वह हँस पड़ा। तब, उसने सरमा नाम की, सीता के पास रहने वाली एक दासी को बुला कर कहा—'सरमा! सीता की रक्षा का भार अब तुम्हारे ऊपर है। यह तो मैं जानता हूं कि रावण समय से पहिले सीता को किसी भी प्रकार का कोई दंड नहीं देगा, परन्तु फिर भी तुम सतर्क रहना।' इतना कह उसने एक मोतियों की माला सरमा के हाथों में दे उससे कहा—'अच्छा, अब तुम जा सकती हो।'

और सरमा उसके सम्मुख नत-मस्तक हो—शीघ्र ही अशोकवाटिका में सीता के पास जा पहुंची। तब, वह विचारों में निमग्न रह मीठे स्वप्न देखने लगा। इस प्रकार भाई का दुश्मन बन, दूसरे दिन जब वह राज-सभा में पहुँचा—कुछ ही देर पश्चात् उसने सुना महाबली प्रहस्त को सम्बोधित कर उसका भाई महातेजस्वी रावण कह रहा था 'हे सेनापते! नगर की रक्षा के निमित्त, अस्त्र-शस्त्र के प्रयोग में निपुण रथी, घुड़सवार, हाथी-सवार और पैदल—इन चार प्रकार के सैनिकों की संख्या और बढ़ा दो। फिर, सभी को सम्बोधित कर वह कहने लगा—'हे मन्त्रियों! आप सभी नीति-कुशल, धर्म-कुशल और व्यवहार-कुशल व्यक्तियों में श्रेष्ठ हैं। मैंने

सर्वदा आप सभी से मन्त्रणा करने के उपरान्त ही किसी भी कार्य को किया है—और अब तक, इसीलिये सर्वदा विजय प्राप्त की है। आज भी अपने उसी नियम की रक्षा करते हुये मैं आप सभी से इस कठिन आपत्ति के विषय में, मन्त्रणा करने के लिये, आपके सम्मुख यहाँ पर ये शब्द कह रहा हूँ। आप स्वतन्त्रता-पूर्वक अपने-अपने विचार प्रकट कीजिये फिर, यह निश्चय भी कि ऐसी दशा में अब हमारा क्या कर्तव्य है—जिससे हम राम पर विजय प्राप्त कर सकें। मैंने सुना है कि राम और लक्ष्मण, सीता का पता मिल जाने के कारण, अनेक राजाओं की बहुत-सी सेना को अपने साथ में लेकर समुद्र के उस पार आ पहुँचे हैं' कुछ रुककर वह फिर कहने लगा—'आप और मैं जीवन भर इन राजाओं से केवल इसीलिये लड़े हैं कि ये मनुष्यों की स्वतन्त्रता के कट्टर विरोधी और धर्म की आड़ में उनके जानी-दुश्मन हैं। बुद्धिजीवी प्राणियों के साथ इनका यह घोर अन्याय, फिर, वर्ण-व्यवस्था के रूप में, अपनी चरम-सीमा तक जा पहुँचा। और इस प्रकार अपने पशु-बल की सहायता से, अपने एकाधिपत्य को सुरक्षित कर बनाये गये कठोर नियमों का पालन, जन साधारण से फिर इन्होंने बड़ी कठोरता से करवाना शुरू किया। मगर मैं और आप इनकी शक्ति का लोहा न मान सके—हमने शक्ति का मुकाबला शक्ति से किया। हमने इन्हें हराया। मानव धर्म की रक्षा के लिये अब तक हमने अनेक युद्ध किये हैं--और हम अब भी लड़ेंगे। जिस अपने विचार की हमने अब तक रक्षा की है--उसके लिये हम अपने प्राणों का बलिदान हँसते-हँसते कर देंगे। मैं मानता हूँ आज ये सभी राजा और तपस्वी, राम को अगुआ बनाकर, एक स्थान पर इकट्ठे हो, हमारे साथ युद्ध करने की अभिलाषा

से, समुद्र ने उस पार तक आ-पहुँचे हैं—मगर हम तब भी अपना शीश इनके सम्मुख नहीं झुका सकते।'

और अन्त में वह बोला—'राम की सीता का हरण मैंने इसलिये किया था—मुझे विश्वास था—राम सीता का वियोग सहन नहीं कर सकेगा और इस प्रकार हम अपने शत्रु को सहज ही में संसार से मिटता हुआ देखेंगे। मगर औरों के साथ-साथ हनुमान की सहायता ने मेरे इस स्वप्न को इस तरह पूरा न होने दिया—लेकिन अगर वह उस प्रकार पूरा न हो सका तो अब इस प्रकार पूरा होगा। साथियो! मैंने राम के साथ युद्ध करने का निश्चय किया है—अब, इस विषय में मैं आप सब की इच्छा जानना चाहता हूँ। आप सबका निर्णय, मेरा कर्तव्य होगा। आप अपने विचार स्वतन्त्रता पूर्वक मेरे सामने रखें—उनका स्वागत् है।'

महावीर रावण के इन वचनों को सुन, क्षण भर विचार करने के उपरान्त, तब कुंभकर्ण खड़ा होकर उससे कहने लगा—'हे निष्पाप! आप अपने मन में किसी भी प्रकार की निराशा को किंचित भी स्थान न दें—हम सभी आपके साथ हैं। आप विश्वास करें, मैं अकेला ही राम को युद्ध में मारकर आपके सम्मुख उसके कटे हुये शीश को लाकर रख सकता हूँ। अगर सारा संसार भी इस युद्ध में उसका साथी बन कर आ जायेगा—तो भी मैं दशरथनन्दन राम को लक्ष्मण सहित मार डालूँगा। इसलिए आप निश्चिन्त होकर रहिये और जो उचित पड़े, वह कीजिये।' इतना कह कर वह सभा के अन्य सदस्यों की ओर देखता हुआ अपने आसन पर बैठ गया।

तब महाबली महापार्श्व खड़ा हो, हाथ जोड़ कर उससे कहने लगा—'हे राजन! आपका बल अतुल है—आपका पराक्रम अनोखा है। आपने युद्ध में आज तक सभी को परास्त किया है। मानव धर्म की रक्षा के लिये हम सभी आपके साथ हैं। आप चिन्ता को छोड़, राम के साथ युद्ध करने की तैयारी कीजिये। जिस समय राम लंकापुरी में आवेगा—हम जीवित उसे लौट कर यहाँ से न जाने देंगे। यह हमारा निश्चय है।'

महापार्श्व इतना कहकर अपने आसन पर बैठा ही था कि लंका के सिंहासन का लोभी, भाई का शत्रु विभीषण क्रोध में भरे हुये रावण से कहने लगा। 'हे राजन! आपके ये वीर और आप स्वयं भी राम के बल से अपरिचित हैं। आपकी भलाई इसी में है कि आप तुरन्त ही जानकी को लौटा कर राम के साथ सन्धि करलें। राम का बल अपरिमित है। आप सब में से मैं ऐसा किसी को नहीं देखता जो राम के वज्रसरीखे बाणों के सम्मुख खड़ा भी रह सके। जिस राम के एक दूत का बल इतना है, उस राम की शक्ति को आप अपनी कल्पना से भी नहीं माप सकते। हे महाराज! कुंभकर्ण, इन्द्रजीत, महापार्श्व, महोदर आदि आपके ये वीर युद्ध में राम का सामना करने में समर्थ नहीं हो सकते। युद्ध में राम के सम्मुख पहुँच ये जीवित नहीं लौट सकते।'

विभीषण के इन वचनों को सुन, तब प्रहस्त कहने लगा—'अपने उद्देश्य के लिये हमने आज तक अनेकों युद्ध किये हैं, मगर हम आज तक किसी से भी नहीं डरे। फिर, राम ही हमारा क्या कर सकता है? हम उसे भी युद्ध में परास्त करेंगे। हमें विश्वास है, युद्ध में हमारे सम्मुख आया हुआ राम हमसे बचकर नहीं जा सकेगा। हम अपने विश्वास पर

अहित है—और हम उस छोकरा राम के साथ अवश्य युद्ध करेंगे

प्रहस्त के इन शब्दों को सुन विभीषण का रोम-रोम हँस पड़ा। मगर अपने भाव को सबकी नजरों से छिपा कर बोला—'हे प्रहस्त! तुम्हारी यह धारणा निर्मूल है। राम के उन तीक्ष्ण बाणों को अभी तक तुमने नहीं सहा है, इसीलिये, तुम इस प्रकार बढ़-चढ़ कर बातें बना रहे हो। मैं तुमसे सत्य कहता हूं कि महाबली रावण, कुंभकर्ण, मेघनाथ कुंभकर्ण का पुत्र निकुम्भ अथवा तुम सब मिलकर भी महातेजस्वी उस राम का युद्ध में मुकाबिला नहीं कर सकते। इसलिये अपनी और अपने राजा रावण की रक्षा के लिये तुम रावण से प्रार्थना करो कि वह राजपुत्र राम को उनकी भार्या लौटा दें। मैं तुम सबकी शुभ कामना की इच्छा करते हुये ही ये शब्द कह रहा हूँ। मन्त्री होने के नाते मेरा कर्त्तव्य है कि मैं अपने राजा को उचित परामर्श दूँ।'

विभीषण के इन शब्दों को सुनकर रावण ने एक बार बड़ी ही कठोर दृष्टि से उसकी ओर देखा; मगर पुत्र मेघनाथ को खड़ा होता देख वह चुप हो गया। तब, महाबली मेघनाथ विभीषण को सम्बोधित कर कहने लगा—'चाचाजी! आप भयातुर हुये उस पुरुष की भाँति बातें क्यों कर रहे हैं? महामना पुलस्त्य के वंश में जन्म ग्रहण करने वाले व्यक्ति के लिये, इस प्रकार की बातें करना, वास्तव में बड़ी ही लज्जा की बात है। ऐसी बातें तो कोई साधारण पुरुष भी नहीं कर सकता। उन दोनों राजकुमारों की प्रशंसा करते हुये आप नहीं अघाते—जब कि, हमारा कोई भी एक साधारण सिपाही ही उन्हें युद्ध में परास्त कर सकता है। क्या आप उस बात को भूल गये, जब मैंने इन्द्र को, जो इन सबका स्वामी है, पृथ्वी में डाल

कर रगड़ा था और फिर, उसको यहाँ लंका में बाँधकर ले आया था। जिनके पुत्र में इतनी शक्ति हो, उन महाराजाधिराज रावण का आप इस प्रकार अपमान करने का साहस किसके बलबूते पर कर रहे हैं। अगर आप बलवीर्य, विक्रम, धीरता और शूरता में हीन हैं—तो आपको चाहिये कि आप चुप रहें। हम राम के साथ युद्ध निश्चय ही करेंगे—और उसे युद्ध में परास्त भी! उस समय तक आप अपने महल में चुपचाप बैठे रहें और परिणाम की प्रतीक्षा करें।' इतना कह वह विभीषण पर एक उपेक्षा भरी दृष्टि डाल अपने आसन पर बैठ गया।

तब, विभीषण बोला—'हे पुत्र! तुम में अभी भी बुद्धि बहुत ही कम है—इसीलिये, तुम बहुत अधिक प्रलाप कर रहे हो! हे इन्द्रजीत! तुम पुत्र होकर भी रावण के शत्रु हो—इसलिये तुम्हारा वध तुरन्त ही कर डालना उचित है। तू दुर्बुद्धि, विवेक से शून्य, वाचाल, अविनयी, अदूरदर्शी, मूर्ख और दुरात्मा है—अभी इस प्रकार बातें बना रहा है। राम के कालाग्नि के समान उन बाणों को तू सहन नहीं कर सकेगा।'

अपने आज्ञाकारी, महाबली पुत्र, मेघनाथ के प्रति कहे गये इन कठोर वचनों को रावण और अधिक सहन न कर सका। फिर, वह विभीषण से कहने लगा—'विभीषण! तुम व्यक्तिगत आक्षेप कर, सभा के नियमों का उलंघन जान-बूझकर कर रहे हो। पुत्र मेघनाथ मेरा शत्रु नहीं—वह मेरा मित्र है—मगर तुम उस मित्र के समान हो, जो केवल नाम का ही मित्र होता है। तुम्हें मेरा इस तरह वैभवशाली बने रहना अच्छा नहीं लगता—यह बात मैं बहुत दिनों से जानता हूं। ओ नाम-मात्र के भाई! मैं तेरे वास्तविक रूप को पहचानता हूँ। तू मेरा मित्र नहीं—दुश्मन है! हरह

ऋतु के मेघों के बरसने पर भी जैसे कीच नहीं होती, इसी प्रकार तुझ-जैसे कुटिल हृदय वाले मनुष्यों का मन मित्रता से स्निग्ध नहीं होता। अरे कुटिल! तेरे स्थान पर अगर कोई और होता तो मैं अभी उसे मृत्यु के मुख में झोंक देता; परन्तु हे कुल पांसन! इस समय मैं तुझे धिक्कार देकर ही छोड़े देता हूँ।'

इतना कहने के उपरान्त रावण ने अपनी बात पूरी की ही थी कि निकुंभ, रभस, महाबली सूर्यशत्रु, सुप्तघ्न, यज्ञकोप, महापार्श्व, महोदर, अग्निकेतु, दुर्धर्ष, रश्मिकेतु, लंका का युवराज बलवान् मेघनाथ, प्रहस्त, विरुपाक्ष, निकुंभ द्वितीय, धूम्राक्ष आदि सभी योद्धा अपने-अपने हाथों में परिघ, पट्टिश, शूल, प्रास, शक्ति, फरसे, खड्ग् आदि अस्त्र शस्त्रों को लेकर रावण की जय-जयकार करने के उपरान्त 'हम राम के साथ निश्चय ही युद्ध करेंगे' कहते हुये रावण के सम्मुख अपनी अपनी सन्मति प्रगट् करने लगे। तब रावण का छोटा भाई; मगर वास्तव में उसका दुश्मन, लंकाधिपति होने के स्वप्न देखता हुआ, अपने चार विश्वास पात्र अनुयायियों के साथ, सभा में से उठ कर चल दिया और थोड़ी देर के बाद, अपने विमान में अपने उन्हीं चार मन्त्रियों के साथ बैठा हुआ वह राम के पास शीघ्रता-पूर्वक पहुँच जाने की अपनी इच्छा को अपने मन में छिपाये-दबाये मार्ग में बड़ी उतावली के साथ जा रहा था।

वह बहुत ख़ुश था। उसके विशाल शरीर में स्थित उसके नन्हे से दिल की अपार ख़ुशी उसके मुख पर फूटी पड़ती थी। बहुमूल्य गहनों और उत्तम वस्त्रों मे ढके हुये उसके शरीर का रोम-रोम हँस रहा था। अनुपम कवच और आयुधों को धारण कर, आज, वह पहिली बार जीवन में उनकी

महत्ता का अनुभव कर रहा था। उसके वे चार अनुचर भी, उस समय, बहुमूल्य वस्त्र और आभूषणों को धारण किये हुये खिल-खिलाकर हँस रहे थे।

और इस प्रकार चलता हुआ जब वह सकुशल समुद्र के उस पार राम के स्थान पर पहुँचा तो राज-लक्षणों से युक्त, बहुत-से वीरों से घिरकर खड़े हुये सुग्रीव से वह कहने लगा—हे वीर ' मैं विभीषण नाम वाला दुरात्मा रावण का छोटा भाई हूँ। मैं जानता हूँ कि उसने राम की प्रिय भार्या सीता का हरण कर उन्हें अशोक-वाटिका नामक अपने एक उपवन में क़ैद कर रख छोड़ा है। आज तक मैंने उसे बहुत समझाया, मगर उसने एक न सुनी—साथ ही मुझे अपमानित करने में भी कुछ उठा न रक्खा—इसीलिये अन्त मे मैं अपने बाल-बच्चों को लंका मे छोड़ राम की शरण में आया हूँ। अब आप कृपा कर, महाबली राम को मेरे आगमन की सूचना दे, मुझे कृतार्थ करें।'

चतुर सुग्रीव, जिसे इस भेद का अब तक कुछ भी पता न था और जो कारणवश विभीषण को देखते ही मन में एक शंका को जन्म दे चुका था; उसकी इस बात को सुन, और भी अधिक शंकित हो, साथ ही पास में खड़े हुये उन योद्धाओं को सतर्क रहने का आदेश दे, शीघ्रता से राम के पास पहुँच, क्रोध पूर्वक उससे कहने लगा—'हे राम! शत्रु के द्वारा भेजा गया यह कोई बहुत ही चतुर शत्रु हमारे पास आ पहुँचा है। वह कहता है कि मैं रावण का छोटा भाई विभीषण नाम से प्रसिद्ध हूँ। अब अपने भाई के व्यवहार से दुखी होकर राम की शरण मे आया हूँ। मगर हे परंतप ! मुझे उसकी बातों पर विश्वास नहीं होता। उसके साथ और भी चार योद्धा

हैं। मै सोचता हूं—वह राक्षसेन्द्र रावण का कोई दून है—इसलिये, अगर हम इसे अपने यहाँ शरण देते हैं तो किसी दिन अवश्य ही भारी मुसीबत में पड़ जायेंगे। तभी, मै सोचता हूं, इसे क़ैद कर लेना ही हमारे लिये ठीक होगा।'

सुग्रीव के युक्ति-संगत इन वचनो को सुन, भेद को जानने वाला राम, तब पास में खड़े हुये हनुमान, लक्ष्मण आदि सभी योद्धाओं को सम्बोधित कर कहने लगा—'हे वीरो' वीरवर सुग्रीव ने रावण के भाई विभीषण के विषय में जो उचित बात मुझसे कही, उसे आप सबने भी सुना। मित्र के कार्य में परायण रहने वाले मित्र, मित्र के उस कार्य मे विघ्न उपस्थित होने पर, अपने मित्र को इसी प्रकार अपनी सलाह देते है—इसलिये सुग्रीव के इन विचारो का मैं स्वागत करता हू। मगर आप सब भी मेरे मित्र हैं—मै चाहता हूं, आप भी इस विषय म अपने-अपने विचार प्र ट करें।' इतना कह उन्होंने मुस्करा कर हनुमान की ओर देखा—फिर, सामने खड़े हुये उन वीरों के उस पार, अपनी विराट् सेना की ओर!

तब, बुद्धिमान अंगद कहने लगा—'हे महाराज! क्रूर प्रकृति के मनुष्यो का यह स्वभाव होता है कि वे सदाँ अपनी क्रूरता को अपने हृदय में छिपाये फिरा करते है और अनुकूल अवसर आ-जाने पर ही उसका प्रयोग करते है और इस तरह वे उस दूसरे का बड़ा भारी अनर्थ कर डालते है। विभीषण के विषय मे मै तो यही सोचता हू कि उस पर पहले हमें अविश्वास ही करना उचित है। अगर वह हमारी कसौटी पर ठीक उतरता है तो हमें उसे फिर ग्रहण करने मे कोई संकोच नहीं होगा।'

फिर शरभ बोला—हे महाभुज! पहले हमे इसकी परीक्षा अवश्य

लेनी चाहिये—तदन्तर फलदायक साबित होने पर इसे हमें अपना बना लेना चाहिये। अन्यथा इसे उचित दंड मिलना चाहिये।'

शरभ ने जैसे ही अपनी बात समाप्त की कि तुरन्त ही जाम्बवान् बोला—'हे राजन्! विभीषण के इस प्रकार यहाँ आने के ढंग से तो मैं यही समझता हूँ कि यह निश्चय ही रावण के द्वारा यहाँ पर भेजा गया है। पहिले इस पर हमें सन्देह ही करना उचित है।'

तब वाक् चातुर मैंद कहने लगा—'हे राजन्! विभीषण हमारे शत्रु रावण का छोटा भाई है, इसलिये, हमें सहसा उस पर विश्वास नहीं कर लेना चाहिये। मीठी-मीठी बातें बनाकर पहले हमें उससे सब कुछ पूछना चाहिये—तदनन्तर, यह सद्-बुद्धि है, अथवा, असद् बुद्धि इस बात का हमें अपनी बुद्धि के अनुसार निश्चय करना चाहिये।'

तभी, सफलता पूर्वक इस कार्य को कर डालने वाले हनुमान ने कहा—'हे वानर प्रवर! आप असीम शक्ति-शाली हैं। आपके बुद्धि-चातुर्य के सम्मुख तर्क में कौन ठहर सकता है—इसलिये, इस विषय में जो कुछ मैं कह रहा हूँ—उसे आप केवल मेरी आन्तरिक भावना ही समझें। हे राजन्! आपके पूछने पर इन मन्त्रियों ने विभीषण के विषय में जो कुछ भी कहा है—उससे मै सहमत नहीं हूँ। मेरी बुद्धि के अनुसार उसके आन्तरिक भाव जानने के लिये इस समय उसकी परीक्षा लेना उचित नहीं जान पड़ता इस प्रकार उसके यहाँ पर चले आने के विषय मे मै तो केवल इतना ही समझता हूँ कि वह अपने भाई रावण को महा पातकी और बुद्धि रहित जानकर, आपके पराक्रम से प्रभावित होकर ही यहाँ चला आया है। और यह उसकी बड़ी भारी बुद्धिमानी है। वहाँ दूर पर खड़े हुये विभीषण के

मुख को मैं भली-भाँति देख पा रहा हूँ—मुझे तो उसके मुख पर कोई भी दूषित भाव नहीं दिखाई दे रहा है। हे कार्यज्ञ! आपने बाली को मारकर किष्किंधर का राज्य उसके छोटे भाई सुग्रीव को दिया है—और अब आप रावण को मार डालने के लिये प्रयत्नशील हैं—यही बात वह अपने मन में रख कि रावण को मार कर लंका का राज्य आप उसे देंगे, वह यहाँ पर आया प्रतीत होता हैं। इसलिये हे कुशाग्र बुद्धि! आपकी यही बात अपने ध्यान में रख कर विभीषण को ग्रहण करना चाहिये।' इतना कहकर हनुमान ने अर्थ-भरी दृष्टि से पहिले राम की ओर देखा फिर अपना मुख नीचा कर लिया।

और राम ने हनुमान की उस दृष्टि का अर्थ भली भाँति समझ लेने के बाद तब कहा—'हे वीरो! आप मेरे शुभचिन्तक है और सदा मेरा कल्याण चाहते हैं—इसीलिये विभीषण के विषय मे जो कुछ भी आप सबने कहा—उसका मैं हृदय से स्वागत करता हूं। मगर विभीषण के विषय में अपने विचार भी आपके सम्मुख रखना चाहता हूँ। मैं मानता हूँ, बीरवर हनुमान को छोड़ कर आप सभी ने जो कुछ भी विभीषण के विषय में कहा है—उसमें नीति का समयानुकूल वर्णन है। मगर हनुमान का कथन शास्त्र की मर्यादा का विषय है। अनुकूल विचारों वाले भाई परस्पर नहीं लड़ा करते; मगर जिन भाइयों में परस्पर मतभेद रहता है—वे इसी प्रकार एक दूसरे से अलग होकर, फिर, उस दूसरे की अमंगल की कामना करने लगते हैं– और विभीषण भी अपने भाई रावण के प्रति ऐसे ही विचारों को अपने मन मे धारण कर मेरे पास चला आया है—इस विषय में, मेरी बुद्धि में भी यही बात आती है। फिर, ऐसी दशा में ऐसे विचारों

वाला यह विभीषण हमारे लिये बहुत ही काम का साबित होगा—इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।'

तब, राम के अहसान से दबा हुआ सुग्रीव विनम्रतापूर्वक राम से कहने लगा—'हे कृपासिन्धु राम! विभीषण अपने भाई रावण की आज्ञा पाकर ही यहाँ पर आया है—फिर यह भी निश्चय है कि यह हमारे पास रहता हुआ उस अवसर की ताक में रहेगा—जब यह सफलता पूर्वक मुझ पर, आप अथवा लक्ष्मण पर प्रहार कर सके—अतः हे महाभुज! इसको मन्त्रियों सहित मार डालना ही उचित होगा। जो अपने भाई का सगा न हुआ—वह हमारा अपना कैसे बन सकता है।

मगर राम, जिसने हनुमान की सहायता से विभीषण को अपने जाल में फाँसा था और अपने अच्छे भाग्य के कारण जिसे इस ओर बराबर सफलता भी मिली चली जा रही थी—सुग्रीव के ऐसे वचनों को सुन, कहने लगा—'हे सुग्रीव! यदि मैं चाहूँ तो अपनी उँगली के अग्रभाग से ही, पलक-मारते सारी पृथ्वी को मृत्यु के मुख में झोंक दूँ। फिर, विभीषण से मैं क्यों डरने लगा! यह चाहे दुष्ट हो अथवा शिष्ट मगर मेरा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकेगा। मैं जानता हूँ। तभी उसके मस्तिष्क ने उससे कहा—बस करो राम! अब अपने ज्ञान का सहारा लेकर उससे कुछ कहो—और तब विद्वान राम उससे बोला—'हे नीतिकुशल सुग्रीव! कपोत जैसे पक्षी ने शरण में आये हुये अपने शत्रु का स्वागत् अपने माँस से किया था—फिर; विभीषण के विषय में मैं भी उसी धर्म का पालन करना अपना कर्तव्य समझता हूँ। हे सुग्रीव! हमारा धर्म कहता है—क्षमा प्रार्थी बन शरण में आये हुये भयङ्कर से भयङ्कर शत्रु को भी क्षमा करना ही उचित है। इस

प्रकार शरण में आये हुये की रक्षा न करने से बड़ा भारी पाप लगता है।' क्षणभर रुककर त्यागी और तपस्वी राम फिर कहने लगा—'इसलिये हे धर्मज्ञ वीर! मैं विभीषण को क्षमा करता हूँ—साथ ही लंका का राज्य भी उसे प्रदान करता हूं। अब तुम स्वस्थ होकर उसे मेरे पास लिवा लाओ।'

चतुर राम के इन बचनों को सुन सुग्रीव पहिले तो कुछ ठिठका—फिर, यन्त्र-चलित की भाँति उठ विभीषण को राम के पास लिवा कर ले आया। इस प्रकार अपने चार अनुयायियों सहित राम के पास पहुंच, विभीषण विधिपूर्वक प्रणाम कर, विनीत भाव से राम से कहने लगा—'मैं रावण का छोटा भाई विभीषण हूँ। कारणवश मैं मित्र, धन, स्त्री-बच्चे और लंका को छोड़ कर आपकी शरण में आया हूँ—इसलिये, अब मेरा सुख, मेरा राज्य, मेरा जीवन सब आपही के ऊपर है।'

यह सुन तब राम ने विभीषण को सान्त्वना देते हुऐ उससे पूछा—'हे विभीषण! मैं तुमसे रावण के बल, उसकी सैन्य-शक्ति विषयक सभी बातें विस्तार पूर्वक सुनना चाहता हूं।' इतना कह तब राम विभीषण को कड़ी नजर से देखता हुआ वह उसे आँखों में ही पीने लगा।

और राम के इन बचनों को सुन विभीषण ने फिर सब कुछ कहा। रावण, कुंभकर्ण, इन्द्रजीत मेघनाथ, प्रहस्त आदि सभी योद्धाओं के विषय में उनके गुप्त भेदों को विभीषण ने इतने विस्तार के साथ कहा कि वास्तव में उसने इस प्रकार राम के प्रति अपनी सचाई का पूरा सबूत दे डाला—फिर वह, भाई का दुश्मन इस तरह भाई के विनाश का बीज बो, मीठी कल्पना में डूबने-उतराने लगा।

तभी विक्रमी राम ने उसकी कल्पना को साकार रूप देते हुये उसके

कहा—'हे विभीषण ! मैं तुम्हारे भाई दशकंधर को पुत्र और मन्त्रियों सहित मार तुम्हें लंका का राजा बना दूँगा—यह मैं तुमसे सत्य कहता हूँ। मैं अपने तीनों भाइयों की शपथ खाकर तुमसे कहता हूँ—रावण को मारे बिना मैं अयोध्या में प्रवेश नहीं करूँगा'

मन को प्रफुल्ल करने वाली राम की इस प्रतिज्ञा को सुन विभीषण ने अपने शीश को राम के चरणों में रख दिया। फिर; वह कहने लगा—'मेरे प्रभु ! रावण के वध और लंका को हस्तगत् करने में मैं आपकी यथाशक्ति सहायता करूँगा। आपकी ओर से मैं युद्ध भी करूँगा

विभीषण के इस प्रकार कहने के उपरान्त, तब, राम की आज्ञा से सुमित्रानन्दन लक्ष्मण ने सुग्रीव, हनुमान आदि सभी सेनानियों के बीच, विभीषण के माथे पर समुद्र के जल से तिलक कर उसे लंका का राजा घोषित किया और राम ने उसे हृदय से लगा लिया।

फिर, कई दिनों के उपरान्त, विश्वकर्मा के पुत्र नल की सहायता से समुद्र पर बनाये गये उस चार सौ कोस लम्बे और चालीस कोस चौड़े पुल पर चलती गई यह विराट् सेना, रावण की लंकापुरी में जा पहुँची। इन दिनों राम और उसकी सेना की गति-विधि के सम्बन्ध मे सभी सूचनाएँ उसके द्वारा नियुक्त किये गये दूतों के जरिये बराबर रावण के पास पहुँचती रही और वह युद्ध की तैयारियों मे रत रहकर इन खबरों को बड़े ही सतर्क भाव से ग्रहण करता रहा। उस समय उसने यह भी प्रयत्न किया कि वह राम की सेना को समुद्र के उस पार ही रोक दे, परन्तु विभीषण के विद्रोही बन जाने के कारण उसे अपने इस कार्य मे सफलता न मिली—मगर फिर भी वह निराश न हुआ।

राम के साथ युद्ध करने का निश्चय वह पहिले ही कर चुका था--और अब तो वह एक वीर पुरुष की भाँति अपने वचनों का पालन करना चाहता था।

: सोलहवाँ अध्याय :

: लंका पर प्रथम आक्रमण :

राम और रावण का यह युद्ध वास्तव में उन दो विपरीत धाराओं का प्रतीक है, जो उस समय इस देश में प्रचलित थी ' यहाँ पर यह हम स्पष्ट देखते हैं कि राम, दूर से इस देश में आकर विजय प्राप्त करने वाले, उन लोगों के विचारो का पोषक है, जो अपने उन विचारो की सहायता से विजित और इस प्रकार बुद्धि और बल-हीन उन मनुष्यों की आत्मा तक को कुचल डालना चाहते थे। जिन्हे, अपने एकाधिपत्य की रक्षा कर बनाये गये उन नियमो मे पूर्ण विश्वास था—मगर दूसरे उन लोगों की बातों मे जिन्हें सभी कुछ आकर्षण-हीन जान पड़ता था। वर्ण व्यवस्था को प्रचलित कर जो अपनी जाति के उन कमज़ोरों की भरी-पुरी दुनियाँ को भी मिटा डालना चाहते थे। सभ्यता की बाढ़ में जो, वास्तव मे, बहुत आगे थे—मगर जिनका केवल मस्तिष्क ही काम कर रहा था—और हृदय जिनका स्पन्दन-रहित-सा हो चुका था। जो स्वयं को तो देवता और ईश्वर तक कहलवाने का ढोंग रचते थे, मगर जिन्हे उन दूसरो को मनुष्य भी कहना अरुचिकर प्रतीत होता था—अपनी सभ्यता के वे पुजारी!

जो, स्वयं तो आदर्शमय जीवन व्यतीत कर, अपने व्यक्तित्व को कैलाश के शिखर तक पहुँचा देना चाहते थे; परन्तु उन दूसरो को इस प्रकार का कोई भी अधिकार नहीं देना चाहते थे। जो, अपनी तपस्या, विद्वत्ता, एकनिष्ठा और पशु-बल के सम्मुख उन सभी को नत मस्तक होते देखना

चाहते थे—जिनको उन्होंने एक प्रकार से मनुष्य भी मानने से इन्कार कर दिया था। पत्थर-युग और लोहे के युग का यह संधिकाल इस प्रकार कैसा-कुछ था—अध्यात्मवाद के प्रवर्तकों के मस्तिष्क में व्यक्तिवाद की कैसी गहरी छाप लगी थी—और उनका यह अध्यात्मवाद कितना महान्; मगर कितना सीमित था—वे कुछ, रुचि का गला घोट कर बनाई गई अपनी उस व्यवस्था को जबर्दस्ती सब पर लादने के लिये कैसे प्राण-प्रण से जुटे हुये थे—राम और रावण के युद्ध में यह सभी कुछ हमे दीख पड़ता है।

और अब हम बड़ी सरलता से यह कह सकते है कि इस उच्च आदर्शमयी और विभूति सम्पन्न संस्कृति के उसी रूप मे पोषक कर्मवीर राम के साथ युद्ध करने वाला रावण—वास्तव में, इन आदर्शों का दुश्मन नहीं अपितु, उनमे कुछ सुधारों का पक्षपाती और इस प्रकार उत्पन्न होने वाली क्रान्ति का जन्म-दाता और अग्रदूत था। दरअसल, वह अपनी इन्हीं क्रान्तिकारी भावनाओं को साथ मे लेकर जीवन मे आगे बढ़ा और अपने अन्तिम समय तक विचारो की पवित्रता की रक्षा के निमित्त बराबर लड़ता रहा। सुधार की इस भावना का आ... के लिये, समयानुसार, उसने भी उन्हीं साधनो का सहारा लिया, जो वास्तव में, उस समय की राजनीति, धर्मनीति और व्यवहार नीति के स्तम्भ बने हुये थे।

इसीलिये, उसके द्वारा हारे हुये उन सभी का अगुआ बन कर आने वाले राम का भी उसने धीरोचित्-रीति के अनुसार ही स्वागत करना ठीक समझा। कारण वश, उसके राज्य मे आकर रहने लगने वाले राम ने, उसके साथ छेड़छाड़ करने की गरज से, जब उसकी बहन का अपमान कर डाला—तो, उसने भी उसकी भार्या का हरणकर, अपनी बहिन के अपमान

के बदले के रूप में, इस प्रकार उसे समुचित उत्तर दे, समय की नीति के अनुसार उसके साथ व्यवहार किया।

फिर, यह बात इतनी आगे बढ़ी, जिसने राम और रावण के बीच होने वाले उस भयङ्कर युद्ध को जन्म दे डाला। रावण वीर था, उसने अपने भुजबल से अभी तक सभी को परास्त किया था। वह चक्रवर्ती राजा और इस प्रकार सभी का स्वामी—फिर भला, अपनी बहिन के अपमान को वह क्योंकर सहन कर सकता था—राम की भार्या सीता का हरण कर, उसे अपने यहाँ ले आने के बाद, वह उसे राम को सौंप देने का अपमान जनक कार्य किस प्रकार कर सकता था—और उसने किया भी नहीं। इसके विपरीत उसने वीर पुरुष की भाँति, वीरों की परम्परा के अनुसार, उसी मार्ग को अपनाया, जो उस जैसे किसी भी वीर के लिये शोभा की बात हो सकती थी।

इसीलिये, प्रथम उसने इस बात का प्रयत्न किया कि वह सीता को अपनी बना ले—जिससे उसका विरोधी राम, इस ग़म मे घुल घुलकर स्वयं ही मर जाये, परन्तु जब उसे अपने इस कार्य मे सफलता न मिली और राम, सीता का पता मिल जाने पर उसके द्वारा पराजित हुये नरेशों और उनकी सेना को साथ मे लेकर लङ्का मे घुस आया तो उसने वीरों की भाँति ही उसका स्वागत् किया। स्वभाव से ही युद्ध-प्रेमी रावण ने तलवार का उत्तर तलवार से ही देना उचित समझा। और वह राम के साथ युद्ध करने के लिये तैयार हो गया।

राम के दूत अंगद के उत्पात और सुबेल पर्वत पर ठहरी हुई राम की सेना की गति-विधि को जान लेने के बाद, उसने अपने मन्त्रियों को आज्ञा

दी कि वे समूची सेना को किसी भी क्षण युद्ध प्रारम्भ कर देने की उसकी आज्ञा को सुनने के लिये तैयार रक्खे। और इस आज्ञा के कुछ ही देर बाद उसकी दूसरी आज्ञा भयङ्कर शब्द करने वाले नगाड़ों को पीट पीट कर प्रचारित की गई—तब, सब ही ने देखा, महासागर की प्रलयंकर लहरों के समान, उसकी सेना के अगणित सिपाही राम की सेना के साथ युद्ध करने की अभिलाषा से, नगरी से बाहर निकल रहे हैं। महाघोष-करने वाले सैंकड़ों शंखों को बजाते हुये, अपने अनेक आयुधों को धारण कर पल-छिन मे वे राम की सेना के निकट और निकटतर होते जा रहे थे। दीप्तिमान उनके आयुध, उस समय, चढ़ते हुये सूर्य के प्रकाश में, चमचम कर चमकते हुये एक नवीन प्रकाश की सृष्टि कर रहे थे। आगे बढ़ते जाते उन सैनिकों का पद-चाप भयङ्कर और उनका उत्साह अखण्ड था। उस समय उन वीरों का सिंहनाद वन-पर्वत, समुद्र और आकाश. इस प्रकार वायु को भी विकम्पित कर रहा था। और वह ध्वनि अन्तरिक्ष को भेद कर, बहुत दूर तक फैल रही थी।

इस प्रकार आगे-बढ़ती-जाती यह सेना जब राम की सेना के समीप पहुंची तो व्यूहाकार खड़ी हुई उस सेना ने राम की जय के गम्भीर घोष के साथ तुरन्त ही युद्ध प्रारम्भ कर दिया। फिर उसी क्षण, हजारों-लाखों कण्ठों से निकली हुई रावण की जय की ध्वनि भी नीचे-ऊपर, दायें-बाएँ चारों ओर गूँजने लगी। और इस प्रकार रावण के वे सैनिक भिन्दिपाल और शूलों की सहायता ले राम के सैनिकों को विदीर्ण करने लगे। तब, हाथी चिंघाड़ उठे—घोड़े हींसने लगे। उन फुर्तीले योद्धाओं का सिंहनाद, शंख और दुन्दभियों का शब्द और रथों का निर्घोष, आकाश और पाताल

को भेद कर, ऊपर नीचे समाने लगा। दोनों ओर के वे वीर, तब, अपने अपने नाम का बखान कर, प्राणों के मोह को छोड़, परस्पर तुमुल युद्ध करने लगे—तो पृथ्वी काँप उठी। आकाश धूल से भर गया। वायु गूँजने लगी।

उस समय मनोरम कवच को धारण कर, स्वर्ण की माला से सुशोभित, सूर्य के समान उज्ज्वल रथ में बैठा हुआ रावणनन्दन मेघनाथ, बालि के पुत्र अंगद के साथ युद्ध कर रहा था। प्रजंघ रणदुर्जय सम्पाति के साथ, वीरवर जम्बु-माली वीर्यवान हनुमान के साथ और शत्रुघ्न नाम वाला रावण का एक सेनानी, भाई के दुश्मन विभीषण के साथ! और इस प्रकार वह युद्ध, क्षण-क्षण में महाभयङ्कर रूप धारण कर, अपनी सीमा को भी लाँघ-लेने का प्रयत्न कर रहा था। तभी, समुद्र पर पुल बाँध कर राम को इस पार ले आने वाला महातेजस्वी नील, दुर्जय वीर निकुंभ के साथ युद्ध करने लगा। फिर, सुग्रीव, प्रघस के साथ और लक्ष्मण, विरुपाक्ष के साथ भिड़ गया। और युद्ध जब और आगे बढ़ा तो राम महाबली अग्निकेतु रश्मिकेतु, यज्ञकोप आदि कई योद्धाओं के साथ अकेला ही युद्ध करने लगा। तब, युद्ध का रूप और भी भयंकर हो उठा और राम के सभी योद्धा रावण के असंख्य वीरो के साथ, फिर, प्रलयंकारी युद्ध करने लगे। पल-पल में अनेक योद्धा कट-कट कर, तब पृथ्वी पर गिरने लगे। उनके दारुण चीत्कार से वायु कपाँने लगी—लाशों से पृथ्वी पट-सी गई। खून की नदियाँ बह निकलीं।

तभी रण को और अधिक भयङ्कर बनाते हुये इन्द्रजीत ने अंगद के ऊपर अपनी गदा का प्रहार किया—मगर दूर से फैंक कर मारी गई उस

गदा को अपनी ओर आता हुआ देख वह कुछ पीछे की ओर हट गया—और जब वह गदा उसके सम्मुख पृथ्वी पर गिर कर शान्त हो गई तो उसने उसे उठा लिया—फिर, इन्द्रजीत की अपनी वही गदा अब उसी की ओर चली और क्षणभर में उसके स्वर्ण मंडित रथ पर गिर, तब, पृथ्वी पर लुढ़क गई। उसी क्षण दूसरी ओर प्रजंघ ने तीन बाण मारकर सम्पाति को घायल किया, तो सम्पाति ने प्रजंघ के अश्वकर्ण नामक अस्त्र मारा और तभी महाबली जम्बुमाली ने क्रोध मे भरकर हनुमान को रथशक्ति मारकर घायल किया। फिर, हनुमान के क्रोध की भी सीमा न रही। वह साक्षात् क्रोध का रूप धारण कर जम्बुमाली की ओर झपटा। नल भी उसकी सहायता के लिये वहाँ पर आ पहुंचा—तो प्रतपन भीषण गर्जना कर उसकी ओर दौड़ा। साक्षात् मृत्यु का रूप धारण कर प्रतपन को अपनी ओर आता हुआ देख, नल ने शीघ्रता से बाण मार कर उसकी दोनों आँखें फोड़ डाली—मगर फुर्ती से प्रतपन ने नेत्र हीन हो जाने पर भी नल की दिशा मे अनेक बाण मारे और इस प्रकार उन तीक्ष्ण बाणों से उसके सारे शरीर को बींध डाला। मगर उसी समय सुग्रीव ने वहाँ पहुँचकर, बाणवर्षा कर, प्रतपन को मृत्यु के मुख मे झोंक दिया। उसी समय, दूसरी ओर, लक्ष्मण ने एक ही बाण से विरूपाक्ष को मार डाला। और तभी राम ने अग्नि शिखा के समान भयङ्कर चार बाणों की सहायता से अग्निकेतु, रश्मिकेतु, सुप्तघ्न और यज्ञकोप के सिरों को एक साथ ही काट डाला।

कुछ ही क्षणों में अपने कई साथियों को इस प्रकार मरता हुआ देख निकुंभ क्रोध से पागल बन फिर भीषण युद्ध करने लगा। उसने बाणों की अनवरत् वर्षा से सामने पड़ गये नील को सहसा ही बींध डाला—फिर, वह

हँसने लगा। इस प्रकार व्यथित होते हुये भी, नील उसकी इस उपेक्षा की हँसी को सहन न कर सका—उसने टूटे रथ के सामने पड़े हुये पहिये को उठा उसके शीश पर दे मारा और निकुंभ का सिर सौ-टूक हो गया। अब निकुंभ भी, क्षण-भर में ही रण स्थल से बहुत दूर अपने साथियों से जा-मिला था। तभी, सबने देखा, बज्र के समान शरीर वाले द्विविद ने पत्थर की एक शिला को ऊँचा उठाकर अशनिप्रभ पर दे मारी। मगर वह कुछ पीछे की ओर हटकर इस दाँव को बिल्कुल बचा गया—तब उसने क्रोध में भर कर द्विविद पर अनेक बाण छोड़े—तो, द्विविद का क्रोध सीमा हीन हो आगे बढ़ा—तब उसने साल वृक्ष के एक बड़े भारी गुद्दे को अशनिप्रभ की ओर फैंका और अशनिप्रभ अपने रथ पर सहसा आ पड़ने वाले इस गुद्दे से फिर जीवित न रह सका। उसके रथ की छत और वह वृक्ष का एक टुकड़ा दोनों ही एक साथ उसके ऊपर गिरे और वह वहीं पर ढेर हो गया—चपेट में आकर उसका सारथि भी मारा गया। तभी, सुषेण के द्वारा फेंकी गई शिला ने विद्युन्माला के हृदय को कुचल डाला और वह भूमि पर गिर कुछ ही देर में बिल्कुल शान्त हो गया।

सूरज डूब रहा था—मगर युद्ध की विभीषिका बराबर बढ़ रही थी। सारे दिन लगातार युद्ध होता रहा, मगर वे वीर बिल्कुल भी न थके। अनेक लड़ाकू घोड़े, रथ, दोनों ओर के बहुत-से वीर और हाथी मर-कटकर पृथ्वी में गिर पड़े—मगर जीवित वीरों का साहस अक्षुण्ण बना था। अपने अपने उद्देश्य की पूर्ति के निमित्त, दोनों ओर के सैनिक जीवन की होड़ बदकर, अपने और परायों की लाशों को रौंदते, निरन्तर युद्ध कर रहे थे। रक्त की गंध वायु की सहायता से चारों ओर फैल रही थी। अन्धकार होते ही वह

रणस्थल भयङ्कर दीख पड़ने लगा। ऊपर की ओर उठकर फिर नीचे गिर-पड़े अथवा ऊपर की ओर ही उठे रह गये कंबधों के बीच में अब गीदड़ मौजों से विचर रहे थे। कटे-फटे अनगिनती शीश इधर-उधर बिखरे पड़े कुछ ही देर पहले वाले अपने जीवन की याद दिला रहे थे।

अब सूरज डूब चुका था। गहरी अँधियारी झुकी चली आ रही थी। अब प्रत्येक योद्धा के लिये अपने दुश्मन को पहिचानना कठिन हो रहा था। पल-पल में महाकठिन होते-जाते उस अँधेरे में 'मारो' 'काटो' आदि शब्दों का उच्चारण करते हुये वे आपस मे ही युद्ध करने लगे। घोड़ों के खुर और रथ के पहियों से उठी हुई धूल के कारण वह रात्रि और भी घनी हो उठी थी। मगर राम और लक्ष्मण अभी भी बड़ी सावधानी के साथ अपने दुश्मनों पर ही बाणों की वर्षा कर रहे थे। सर्प के समान महाभयङ्कर दीख-पड़ने वाले उनके वे बाण अभी भी केवल अपने दुश्मनो के कलेजों में ही घुसतें चले जा रहे थे।

तभी, भयङ्कर लोम-हर्षण युद्ध होने लगा। रावण के विक्रमी वे सैनिक असीम उत्साह के साथ, राम के सैनिकों को मार-मार कर भूमि में सुलाने लगे। अब शंख, भेरी और पणवों का विचित्र शब्द हो रहा था। रथ के पहियों की घड़घड़ाहट से मिलकर उठने वाला वह शब्द कुछ अजीब-सा जान पड़ता था। मर-कट कर गिर पड़ने वाले घोड़े और सैनिकों का चीत्कार उस शब्द को और भी अधिक विचित्र और भयङ्कर बना देता था। अविरल गति से बहने वाले रक्त ने रणभूमि की मिट्टी में मिलकर कठिन कीचड़ उत्पन्न करदी थी—जिससे उस भूमि में प्रवेश करना अब असम्भवों सा प्रतीत होने लगा था। रात्रि-युद्ध के अभ्यस्त; रावण के उन सैनिक

का हौसला बहुत अधिक बढ़ गया था। अब बहुत-से वे मिलकर, अपने सैनिकों से घिरकर खड़े हुये राम और लक्ष्मण की ओर बढ़े; परन्तु जैसे ही वे उसके समीप पहुँचे, राम ने निमिषभर में अग्निशिखा के समान तीक्ष्ण बाणों से उन सभी को बींध डाला। तब, कुछ उनमें से वहीं पर मरकर गिर पड़े और बाकी युद्ध स्थल से भाग खड़े हुये।

तब राम ने स्वर्ण की पूँछ वाले अनगिनती बाण दुश्मन की दिशा में फैंके और इस प्रकार अन्धकार मय वह दिशा उन चमकते हुये बाणरूपी अनगिनती पटबीजनों से जगमगाती-सी प्रतीत होने लगी। रावण के सैनिक चीख चिल्लाकर इधर-उधर भागने लगे—तभी भयङ्कर शब्द करने वाले नगाड़े बज उठे और भागते हुये वे सैनिक पल भर में उसी स्थान पर फिर इकट्ठा हो गये। उसी समय अंगद ने आगे बढ़कर रावणनन्दन के रथ को अपनी गदा के प्रहारों से तोड़ डाला, उसके अश्वों और सारथि को मार डाला। मगर युद्ध-कुशल मेघनाथ साफ बच गया। अब वह अपनी माया के बल पर अदृश्य रह, क्रोध के वशीभूत हो, बज्र के समान अपने कठिन बाणों की सहायता से सभी को बिद्ध करने लगा। फिर, परम क्रोध प्रदर्शित करते हुये उसने राम और लक्ष्मण को भीषण नागपाश द्वारा भेद डाला। अयोध्या के दोनों राजकुमारों को सर्प जैसे बाणों में बिंधे हुये देखकर सुग्रीव के सैनिकों के होश उड़ गये और वे आश्चर्य भरी दृष्टि से एक दूसरे को देखने लगे।

यह देख कर नील, अंगद, शरभ, द्विविद, हनुमान आदि सेनापतियों को बहुत अधिक क्षोभ हुआ और वे तुरन्त ही उस समय के अपने कर्तव्य को निर्धारित कर बलवान् मेघनाथ की खोज करने के लिये निकल पड़े।

उन सेनापतियों की इस कार्य क्षमता को देख-सुनकर दूसरे सैनिकों का साहस भी लौट आया और वे भी भागते-भागते रुककर खड़े हो गये। तभी इन्द्रजीत मेघनाथ ने जब यह देखा तो उसका क्रोध और अधिक बढ़ा और उसने तुरन्त ही उन सेनापतियों पर बाणों की वर्षा शुरू कर दी। ब्रह्मास्त्र से अभिमन्त्रित बाणों को मारकर उसने उन सभी की गति को अवरुद्ध कर दिया। उसने इस बार और भी बहुत-से बाण राम और लक्ष्मण के मारे—और इस प्रकार उसने उन दोनों राजकुमारों के सभी अंगों को बींध डाला। अब उनकी देह में एक भी स्थान अक्षत नहीं बचा था। उन घावों में से निकलता हुआ रक्त कुछ उनकी देह पर और कुछ भूमि पर गिर रहा था। उस समय वे दोनों बहुत पास-पास में उगे हुये, पुष्पों से आच्छादित दो पलाश-वृक्षों के समान दीख पड़ रहे थे।

तभी, वीर-शिरोमणि मेघनाथ उनके पास में आ, अदृश्य भाव से वहाँ खड़ा रहकर उनसे कहने लगा—'हे राघवो! अब तुम विश्वास करो—जिस समय मैं अन्तर्धान होकर युद्ध करने लगता हूँ, उस समय इन्द्र भी मेरा पार नहीं पा-सकता—फिर, तुम्हारी तो बिसात ही क्या है! अब हे राघवो! तुम दोनों ही मरने के लिये तैयार हो जाओ। मैं अभी अभी कंकपत्र वाले बाणों से बींध कर तुम्हें दूसरे लोक में भेजे देता हूँ।'

और इतना कह वह अपने बड़े भारी धनुष से उन काल स्वरूप बाणों को फेंक कर राम और लक्ष्मण को एक बार फिर बींधने लगा। श्यामवर्ण वाला वह वीर मेघनाथ उस समय उनके बहुत ही पास में खड़ा हुआ राम और लक्ष्मण के मर्मस्थानों को बड़ी निर्दयता के साथ छेद रहा था और तब कुछ ही देर में वे दोनो राजकुमार बहुत बुरी तरह काँपने लगे—फिर, उनके

रहने की शक्ति क्षीण हो जाने पर, वे दोनों ही भूमि पर गिर पड़े और मेघनाथ अट्टहास कर उठा।

उस समय उन दोनों वीर और पराक्रमी राजकुमारों के शरीर से रुधिर के अनेक झरने-से झर रहे थे। अंगों में नागबाणों के लिपटे रहने के कारण मर्मांतक पीड़ा हो रही थी। इन्द्र को भी युद्ध में परास्त कर देने वाले मेघनाथ ने स्वर्ण की पूँछ वाले, धून के समान शीघ्रगामी नाराच, अर्धनाराच, भल्ल, अञ्जलिक, वत्सदन्त, सिंहदंष्ट्र और क्षुर नाम वाले अनेक बाणों को राम और लक्ष्मण के मर्म स्थानों में मार कर, उन्हे पृथ्वी में सुला दिया था। राम का तीन स्थानो पर मुड़ा हुआ वह धनुष, इस समय प्रत्यञ्चाहीन होकर, अपने स्वामी के पास में पड़ा हुआ, उनका इस भारी दुख के समय में भी साथ दे रहा था। वे दोनो साहसी वीर, इस समय उस कठिन पीड़ा को सह न सकने के कारण अविरामगति से रो रहे थे। फिर, कुछ ही देर के बाद, वे बेहोश होकर, बिल्कुल निश्चल और शान्त हो गये—वास्तव में, उस समय वे जीवन से निराश हो चुके थे। तब, उन दोनों वीरो की ऐसी दशा देख कर, सुग्रीव, हनुमान, अंगद आदि सभी योद्धा उन्हें चारों ओर से घेर कर खड़े हो गये और शोक से आर्त्त होकर, भयङ्कर रूप से रोने लगे।

उन दोनों महाबली भाइयो को इस प्रकार निश्चेष्ट अवस्था में भूमि में पड़ा हुआ और राम की समूची सेना को रोता हुआ देख, मन में हर्षित होकर, तब, मेघनाथ अपने सैनिको से कहने लगा—'महाबली खर और दूषण को मार कर जन-स्थान को उजाड़ देने वाले राम और लक्ष्मण मेरे बाणों से नष्ट हो गये हैं। सैनिको! इन दोनो राघवों को मार कर, मैंने

अपने पिता को चिन्ता से मुक्त कर दिया है। अब मैं राम के इन सेनानियों को भी शक्ति-हीन किये देता हूँ।'

और इतना कह वह तुरन्त ही फिर बाणों की वर्षा करने लगा उस समय उस शत्रु संहारक इन्द्रजीत ने नल के नौ बाण मारे; मैंद और द्विविद को तीन तीन बाण मारकर सन्तप्त किया। फिर, महाधनुर्धारी उस इन्द्रजीत ने जाम्बवान् के हृदय को बींध डाला—तब, हनुमान के दस बाण मारकर उसने उसे घायल किया। गवाक्ष और शरभ के दो-दो बाण मारे और उसी समय उसने अंगद के अनेक बाण मारे।

इस प्रकार उन सभी वीरों को घायल कर, फिर, वह हँसने लगा। तब, वह भूमि मे चेष्टारहित होकर पड़े हुये राम और लक्ष्मण को मरा हुआ समझ कर नगर की ओर चला। आज वह अपने युद्ध-कौशल से बहुत अधिक प्रसन्न था। उसने एक बार फिर, अपने पिता को जयश्री से विभूषित किया था। लंका की उसने रक्षा की थी। वह ख़ुश था।

आनन्द से भरा हुआ जब वह अपनी सेनाओं के साथ में नगरी में घुसा तो पुरी के निवासियों ने उसका हृदय से स्वागत कर, बड़े ही प्रेम से उसकी ओर देखा। रावण के पास पहुँचकर उसने अपना शीश पिता के चरणों मे रख दिया—तब, वह हाथ जोड़कर बड़े ही विनीत भाव से उससे कहने लगा—'पिताजी! भगवान की दया और आपके आशीर्वाद से मैंने उन दोनों राघवों को मृत्यु की गोद में सुला दिया है। अब आप निश्चिन्त होकर अपने विचारों का प्रचार कीजिये।

पुत्र मेघनाथ से इस प्रिय वार्ता को सुन रावण उछल पड़ा। फिर, हर्ष से गद्गद् हो उसने मेघनाथ को अपने आलिंगन में कस लिया। उसके

जीवन का स्वरूप ही बदल गया था। तब, मेघनाथ से सबकुछ उसने बड़े धैर्य के साथ सुना---अब उसके मन से राम का भय जाता रहा था। इतने बड़े समुद्र को लाँघकर लंका पर बड़े-बड़े साहस के साथ चढ़ आने वाला राम प्रथम आक्रमण में ही उसके पुत्र के द्वारा मृत्यु को सौंप दिया गया—वास्तव में, यह बड़े ही आश्चर्य की बात थी—मगर यह सत्य बन सकी; वह फूला नहीं समा रहा था। फिर, वह प्रसन्न मन से गद्गद् वाणी में पुत्र का अभिनन्दन करने लगा।

:सत्रहवाँ अध्याय:

:नागपाश से मुक्ति:

रावण की विजय और राम की हार की यह खबर सारी लंका में बिजली की भाँति फैल गई। बारी-बारी से सभी ने इसे सुना और वे रावणनन्दन मेघनाथ के अपूर्व बल और उस की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। साथ ही वे सभी यह भी सोच-सोच हार रहे थे कि विभीषण इतना मूर्ख किस प्रकार बन सका, जो इतने कम बल वाले राम से जाकर मिल गया। उस दिन राज-सभा में वह क्यों इस प्रकार राम की बड़ाई कर रहा था। मगर आज अपने इन प्रश्नों का उत्तर उनकी समझ में नहीं आ रहा था। तब, वे स्वयं ही अपनी बात का प्रसंग बदल कर, मन्दोदरी की कोख की सराहना करने लगते थे—और फिर, मेघनाथ की!

तभी, यह खबर फिर सीता के कानों में भी पहुँची। राम के गम में घुल-घुल कर पीली पड़-गई सीता इस खबर को सुनकर अवाक् रह गई। उस समय उसने ऐसा अनुभव किया—मानो पृथ्वी उसके तले से खिसकती चली जा-रही थी। उसकी आँखें फट सी गईं। उसी समय उसने सुना—अभी-अभी रावण के पास से दौड़ कर चली आने वाली दासी वहाँ पहुँच कर उससे कह रही थी—'महाराज की आज्ञा है—आपको विश्वास हो सके—इसलिये आपको पुष्पक-विमान मे बैठकर, रण स्थल देखने के लिये जाना होगा।' और सीता इस आज्ञा को सुनते ही न जाने किस आशा के बल पर तुरन्त ही उठकर खड़ी हो गई। फिर, पुष्पक विमान में बैठ, वह

लंका के ऊपर वाले आकाश में उड़ने लगी। तभी, उसने सरकती नजरों से देखा—इस खुशी में लंका का रूप निखर गया है। चारों ओर हँसी के फव्वारे छूट रहे हैं। ध्वजा और पताकाओं से उसे सजाया जा रहा है। और उसने अपनी आँखें मूँद लीं। तब पल-भर के अन्तर से जब उसने अपने नेत्र खोले—तो, वह रणस्थल के ऊपर उड़ रही थी। तभी, उसने देखा-राम की समूची सेना रणस्थल में मरी सी पड़ी है। उस समय वे सभी सैनिक निर्जीव और हतप्रभ से जान पड़ रहे थे। उनका रूप विकृत और जीवन गति-हीन सा हो रहा था। और तभी उसने पथरायी-सी आँखों से देखा—उसके पति राम और देवर लक्ष्मण, बाणों से बिंधकर, चेतना हीन हो बाणशय्या पर शयन कर रहे हैं। रूप कुरूप हो रहा है। कठिन बाणों से क्षत-विक्षत उनका शरीर, धूल में सना हुआ, कैसा-कुछ हो गया है—सीता ने तो इस तरह की कभी कोई कल्पना भी न की थी। उनके कवचों के सौ-सौ टूक हो गये थे—ऐसा मालूम होता था। राम का महा प्रतापी वह धनुष उसके हाथों से छूटकर कितनी दूर जा-गिरा था—उफ़, वह इस दृश्य को और अधिक न देख सकी। अपनी आँखों को हाथों की सहायता से ढक वह फूट फूट कर रोने लगी।

तब विलाप करती-जाती वह कहने लगी—'बड़े-बड़े जोतिषियों ने मुझसे कहा था—मैं पुत्रवती हूगी। मेरा सुहाग अखण्ड है। मगर राम की मृत्यु हो जाने के कारण पंडितों के ये वचन झूठे हो गये। हे भगवान! उन्होंने तो मुझसे कहा था—मैं शुभ-लक्षणों वाली हूं। मेरे दोनों पैरों में कमल के चिह्न हैं—मैं निश्चय ही राजरानी और राजमाता बनूँगी; मगर भविष्य को जानने वाले उन पंडितों की बात किस प्रकार झूँठी हो गई। हे प्रभु! मुझे

वैधव्य का दुःख भोगना पड़ेगा—ऐसे तो कोई लक्षण मैं स्वयं में नहीं देखती। मेरे केश सूक्ष्म, इकसार और नीलवर्ण वाले हैं, भौंहें अलग-अलग और जँघाएं गोल, रोम शून्य फिर, परस्पर सटी हुई भी! दाँत सब अलग-अलग हैं। मेरी सब उगलियाँ मध्यभाग में समान, रूक्षतारहित और क्रम-पूर्वक गोल हैं। मेरे स्तन परस्पर मिले हुये नहीं हैं। मेरी कुचाएँ तो स्थूल, ऊँची और मग्न-स्वभाव वाली हैं। वक्ष स्थल विशाल है। नाभि के पास वाला स्थान ऊँचा और मध्य का स्थान गंभीर है। मेरा वर्ण उज्ज्वल और रोम कोमल हैं। पैरों की अँगुलियें और तलुए समतल! हाय! इन सभी शुभ लक्षणों के कारण पंडित मुझे महाभाग वाली कहते थे; मगर आज उनके ये वचन झूँठे हो गये।'

इतना कहकर सीता और भी ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी। तब राम को सम्बोधित कर कहने लगी—'हे नाथ! तुम्हारे अद्भुत पराक्रम में तो मुझे गहरा विश्वास था। तुमने खर, दूषण, जैसे महाबलियों का बध अनायास ही कर डाला था।' फिर, वह राम और लक्ष्मण—दोनों भाइयों को बारी-बारी से देखकर कहने लगी—'हे राघवो! तुम दोनों ही वारुणास्त्र, आग्नेयास्त्र, ऐन्द्रास्त्र, वायव्यास्त्र तथा ब्रह्मास्त्र का प्रयोग जानते थे। फिर, तुमको इन्द्रजीत ने किस प्रकार युद्ध में मार डाला। मैं सोच-सोच हार रही हूँ। आपका शत्रु मन के समान वेगवान् होने पर भी आपके सामने से जीता नहीं लौट सकता था—फिर आप इस प्रकार भूमि में पड़े हुये क्योंकर शयन कर रहे हैं—मैं सोच भी नहीं पाती।'

इतना कह सीता अचानक मूक हो फिर, उन दोनों भाइयों की ओर देखने लगी—तो, पास मे बैठी हुई त्रिजटा का हृदय भी द्रवीभूत हो गया।

तब, सीता की करुणा में भीग वह कहने लगी—हे देवि ! तुम्हारा विचार ग़लत है। राम और लक्ष्मण के मुखों को देखने से मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि दोनों भाई अभी जीवित हैं। तुम नहीं देख पातीं सीते ! दोनों के मुख की आकृति अभी भी नहीं बिगड़ी है। ये बाणों से आहत और पीड़ित होने के कारण ही भूमि पर पड़े हुये हैं, परन्तु इनके शरीर का लावण्य अभी तक ज्यों का त्यों बना है—राम की सेना के योद्धाओं के मुख भी क्रोध से प्रदीप्त और हर्ष से ओत-प्रोत है—इसीलिये, हे सीते ! मैं तुमसे कहती हूँ कि ये दोनों भाई जीवित हैं। तुम दुख और शोक को त्याग दो और स्वस्थ होकर अशोक-वाटिका में चल कर रहो। मैंने स्नेह और दया के वशीभूत होकर ही तुमसे ये बातें कही हैं। तुम विश्वास करो—वे दोनों भाई जीवित हैं।'

जैसे ही त्रिजटा ने अपना कथन समाप्त किया कि विमान अशोक-वाटिका की ओर मुड़ चला—और क्षण-भर मे ही सीता उस रम्य रूपवाली वाटिका में जा पहुँची। अब उसका मन कुछ शान्त था—वास्तव में, त्रिजटा की बातों ने उसके घाव पर मरहम का काम किया था और वह विचारों में तल्लीन हो, आशा को विश्वास मे बदल देने का उपक्रम करने लगी।

तभी, रणभूमि में राम और लक्ष्मण को घेर कर खड़े हुये सुग्रीव, हनुमान आदि सेना नायकों ने देखा—वीर्यवान राम शरीर की दृढ़ता और बल की अधिकता के कारण होश में आ गया है—और उन सभी के नेत्र चमक उठे। मगर उनकी यह खुशी अधिक देर तक न ठहर सकी। कुछ ही क्षणों के उपरान्त उन्होने देखा—राम की आँखों से अविरल अश्रुधारा बह

रही है और तभी उन सभी ने सुना—घोर बाणों में बिंधे हुये, अभी भी ज्ञान से शून्य लक्ष्मण को देख राम कह रहा था—'लक्ष्मण को इस प्रकार सोता हुआ देखकर अब मुझे सीता अथवा अपने जीवन का मोह नहीं सता रहा है। इस संसार मे सीता-जैसी स्त्री का मिलना तो कठिन नहीं; परन्तु लक्ष्मण जैसा भाई मिलना मुझे असम्भव सा जान पड़ता है। यदि लक्ष्मण को मृत्यु ने आ घेरा-तो मैं भी तुम सभी के सम्मुख अपने प्राणों को त्याग दूँगा। यदि मै लक्ष्मण के बिना अयोध्या पहुँचूँगा तो पुत्र के वियोग मे तड़पने वाली माता सुमित्रा को क्या कहकर समझाऊँगा।' तब बहुत ही विकल और कातर होकर वह कहने लगा—'हा लक्ष्मण! तुम्हारी यह दीन दशा मुझ अधम के कारण ही हुई है। खून से लथपथ होने के कारण इस समय तुम मुझे अस्ताचल गामी सूर्य के समान दीख पड़ रहे हो। हे भाई! दुख से जब जब भी मैं अधीर हो उठता था—तब, तुम ही मुझे धीर बंधाते थे; मगर आज तुम चुप क्यों हो? बोलो लक्ष्मण! मै तुम्हारे बिना जीवित नहीं रह सकता। हे भगवान! मुझ दुष्ट की दुर्नीतिवश ही लक्ष्मण की आज यह दशा हुई है। फिर भी, मेरे प्राण निकल क्यों नहीं जाते।'

तब, वह पास में खड़े हुये विभीषण को देखकर कहने लगा—'भाई विभीषण! मुझे दुख है, मै तुमको लंका का राजा न बना सका। इस समय रह-रह कर मेरा वह प्रलाप मुझे अपार कष्ट दे रहा है। मगर तुम मुझे क्षमा कर देना विभीषण!'

फिर, वह सुग्रीव को सम्बोधित कर रहने लगा—'हे सुग्रीव! मेरे न रहने पर रावण तुमको निर्बल जान तुम पर निश्चय ही आक्रमण करेगा—इसलिये तुम इसी मुहूर्त में यहाँ से अपने देश को लौट जाओ। अंगद को

आगे कर, सारी सेना के साथ तुम समुद्र के उस पार पहुँच जाओ। हे मित्र! हनुमान ने जो कठिन कार्य मेरे लिये किया—उसे संसार में कोई दूसरा नहीं कर सकता था। मैं बहुत सन्तुष्ट हूँ। तुम सभी ने मेरी खातिर अपने प्राणों की बाजी लगा कर भयङ्कर युद्ध किया है; परन्तु भाग्य की रेख किसी के मिटाये से नहीं मिटती। अब मेरी इच्छा है, तुम सभी अपने-अपने स्थानों को लौट जाओ।'

इतना कह वह चुप हो गया और फूट-फूट कर रोने लगा। राम की ऐसी दशा देख, उसके पास में खड़े हुये वे सब सेनानी भी रोने लगे। तब नदी के प्रवाह के समान अबाध-गति से रोता हुआ विभीषण कहने लगा—'हे राम! वास्तव में यह मेरा दुर्भाग्य है। मेरे खोटे भाग्य के कारण ही मेरे दुष्ट भतीजे के द्वारा आपकी यह दशा हुई; अन्यथा वह आपको युद्ध में नहीं हरा सकता था। आपके वीर्य का आश्रय लेकर मैंने संसार में प्रतिष्ठा पाने की कामना की थी; परन्तु आपकी ऐसी दशा हो जाने पर मैं भी भारी मुसीबत में पड़ गया—साथ ही, राज्य पाने का मेरा मनोरथ भी नष्ट हो गया। मेरे भाई, नीच रावण की प्रतिज्ञा सफल हो गई और मै कहीं का भी नहीं रह गया।'

विफल मनोरथ होने की आशंका से विलाप करता हुआ विभीषण यह कह कर चुप हुआ ही था कि सुग्रीव ने उसे अपने आलिंगन में कस लिया—फिर, वह उसे ढाढ़स देता हुआ कहने लगा—'हे वीर! तुम्हें लंका का राज्य निश्चय ही मिलेगा—इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। मैंने नागपाश के विष को दूर करने में पटु गरुड़जी को बुला भेजा है। वह शीघ्र ही यहाँ पर आ पहुंचेगे। उनके आने पर राघवों का दुख दूर हो जावेगा—तुम विश्वास करो।'

तब वह अपने श्वसुर सुषेण से कहने लगा—'तुम इन दोनों भाइयों को किष्किंधा में ले जाओ, जब तक ये होश में न आवें, तुम और बहुत से सैनिक मिलकर इनकी रक्षा करना। मै रावण को युद्ध में मार कर, विभीषण को लंका का राजा बना, सीता को साथ मे लेकर शीघ्र ही तुम्हारे पास जा पहुँचूँगा।

इतना कह कर वह व्यस्त-सा हुआ फिर, इधर-उधर देखने लगा—तभी, सुषेण बोला—मैंने इससे पहिले और भी अनेक युद्ध देखें हैं—साथ ही इस प्रकार के बाणों से घायल होने पर मनुष्यों को निर्जीव-सा होते हुये भी! और इस प्रकार प्राणहीन होने पर फिर उनको जीवित हुये भी मैंने देखा। गुरुवर बृहस्पति ने औषधियों को अभिमंत्रित कर, उन्हीं की सहायता से उनको ठीक किया था। क्षीर-सागर में चद्र और द्रोण नाम वाले दो पर्वत हैं, इन्हीं पर्वतों में संजीव करिणी और विशल्यकरिणी ये औषधियाँ उत्पन्न होती हैं। हनुमानजी बड़ी शीघ्रता से वहाँ पर जाये और इन.........।'

सुषेण यह शब्द कह ही रहा था कि उसी समय गरुड़ ने वहाँ पहुँच कर सबको जीवन दान-सा दे दिया। फिर, सबके देखते-देखते गरुड़ ने अति शीघ्र राम और लक्ष्मण को रोग मुक्त कर उन्हें पहले जैसा ही स्निग्ध और शोभा सम्पन्न बना दिया—और जब कुंदन जैसे शरीर वाले वे दोनों भाई भूमि में से उठकर खड़े हुये तो गरुड़ ने बारी-बारी से उनका आलिंगन कर उनकी वीरता को बहुत सराहा। तभी, सुग्रीव की समूची सेना में खुशी की एक लहर-सी दौड़ गई। राम और लक्ष्मण की जय-जयकार से आकाश गूँजने लगा। शंखों की ध्वनि से रणस्थल भर गया। राम और लक्ष्मण को जीवन-दान जो मिला था—साथ ही-अभूत-पूर्व बल भी! इसीलिये वे सभी खुश थे—बहुत खुश!

: अठारहवाँ अध्याय :

: और युद्ध आगे बढ़ा :

राम और लक्ष्मण को जीवित करने के लिये गरुड़ द्वारा प्रयोग में लाई गई उन करामाती औषधियों ने वास्तव में जादू-का-सा प्रभाव कर दिखाया—कहना न होगा, राम और लक्ष्मण के जीवन प्राप्त करते ही उसकी समूची सेना में भी नई जान-सी आ गई। जीवित जीवन का यह स्वर फिर इतनी जोर से हुआ कि जीत की खुशी में मदहोश हुये रावण ने भी इसे सुना—और वह सहसा आँखें मलता हुआ फिर तड़प कर उठ बैठा। जिस बात को उसने कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था—राम की सेना द्वारा किये जाने वाले उसके इस तुमुल शब्द ने उसके मन में ठीक उसी सन्देह को जन्म दिया और वह क्रोध के कारण काँपने लगा। तब, पास में बैठे हुये उन मन्त्रियों से कहने लगा—'अपार हर्ष में भर कर, गरजते हुये मेघों के समान, राम की सेना जो यह भारी नाद कर रही है, इसका वास्तविक अर्थ क्या है—मैं स्पष्ट रूप से उसे नहीं समझ पा-रहा हूँ। राम और लक्ष्मन तो तीक्ष्ण बाणों से बिंधे हुये, मृत्यु की कामना कर, अपने जीवन की अन्तिम घड़ियाँ गिन रहे हैं—इसीलिये सैनिकों का यह बड़ा भारी शब्द मुझे शंकित कर रहा है।' तब वह सेना में तत्पर उन दूतों से कहने लगा—'जरा तुम देखो तो, ऐसे शोक के समय में भी ये किस कारण से इतना हर्ष प्रकट कर रहे हैं ?

और रावण की आज्ञा को शिरोधार्य कर वे दूत तुरन्त ही इस भेद का

पता चलाने के लिये राजमहल से निकल कर उस ओर चल दिये। फिर, नगर के बाहरी परकोटे पर चढ़कर उन्होंने देखा बड़े भागों वाले राम और लक्ष्मण बली मेघनाथ द्वारा छोड़े गये उन बाणों से मुक्त होकर, अपनी सेना के बीच में स्वच्छन्द विचर रहे हैं और यह देखकर उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। तब, उन स्वामी-भक्त दूतों ने शीघ्रातिशीघ्र रावण के पास पहुँचकर, बड़े ही उदास स्वर में यह अप्रिय समाचार उसे कह सुनाया। और दूतों द्वारा कही गई इस बात को सुन, वह आशंका से काँप उठा। उसके लिये यह ऐसी अनोखी बात थी कि वह दूतों के मुखों की ओर देखता हुआ ठगा-सा रह गया। वह सोचने लगा—वीर पुत्र मेघनाथ के उन कठिन बाणों से वे दोनों राजकुमार किस प्रकार मुक्त हो गये—या ये दूत ही मुझे धोखा दे रहे हैं! तब वह क्रोध के कारण झल्ला उठा—फिर, गहरी निश्वास छोड़कर वह मन्त्री धूम्राक्ष से कहने लगा—'हे विक्रमी! तुम अपने साथ बड़ी भारी सेना लेकर राम और उसकी सेना का संहार करने के लिये तुरन्त ही उस ओर जाओ। अब मैं राम को एक क्षण भी जीवित नहीं देखना चाहता।'

और धूम्राक्ष उसकी इस आज्ञा को सुन तुरन्त ही उठ कर खड़ा हो गया। फिर, रावण की परिक्रमा कर वह उसी समय महल से बाहर निकल गया। तब, कुछ ही देर के पश्चात वह मृग और सिंह के मुखों के समान बने हुये अपने दृढ़ रथ में बैठा हुआ अपनी सेना के मध्य में रहकर रणस्थल की ओर बड़ी शीघ्रता से जा रहा था। शूल, मुगदर, गदा, पट्टिश, लोहे के बने हुये मूसल, परिघ, भिन्दिपाल आदि अनेक प्रकार के आयुधों को धारण करने वाले असंख्य सैनिक चारों ओर से उसे घेर कर चल रहे थे।

उनमें से कुछ सैनिक कवच धारण कर, स्वर्ण की जाली वाली पताकाओं को हवा मे बहुत ऊँची उड़ाते हुये, सेना के आगे-आगे जा रहे थे। बहुत-से हाथियो और घोड़ो पर चढ़े हुये युद्ध की अभिलाषा से मन में एक अनोखे आनन्द का अनुभव कर, शीघ्रता से वहाँ पहुँचने की कोशिश कर रहे थे। महावीर्यवान् धूम्राक्ष को विश्वास था कि वह आज ही युद्ध में राम को निश्चय ही मार डालेगा—और वह हँसता हुआ युद्ध भूमि की ओर चला जा रहा था।

लंका के पश्चिम द्वार से निकल कर जब वह विराट सैन्यदल राम की सेना के समीप पहुँचा तो दोनो ओर के सैनिक युद्ध मे अनायास ही प्राप्त होने वाले उस आनन्द से भर उठे। और वे विविध प्रकार के गंभीर घोष के रूप मे अपने उस आनन्द को प्रगट करने लगे। फिर, तुरन्त ही दोनों ओर से युद्ध का बाजा बजने लगा। तरह-तरह के शंखो की यह भयंकर ध्वनि आकाश मे ऊँची उठने लगी। तब, पृथ्वी पर युद्ध के आनन्द का स्त्रोत उमड़ने लगा। फिर, वृक्ष, भयकर शूल, पट्टिश, गदा आदि अनेक प्रकार के भयंकर आयुधो की सहायता से दोनों ओर के वे सैनिक परस्पर तुमुल युद्ध करने लगे। क्षण-क्षण मे वह युद्ध बड़ा ही वीभत्स रूप धारण करने लगा। दोनों ओर के सैनिक कट कट कर भूमि पर गिरने लगे—तो धूम्राक्ष के सैनिको के क्रोध का पारावार न रहा। फिर, उनमे से अनेक, सरलता से छोड़े जाने वाले; मगर बहुत ही तीक्ष्ण और महा घातक उन कंकपत्र विभूषित बाणों को छोड़ते हुये राम के सैनिको को सहसा ही मृत्यु के निकट पहुँचाने लगे। साथ ही बाक़ी बचे वे बहुत से गदा, पट्टिश, विचित्र परिघो और मुगदूरों की सहायता से अभी भी राम के उन सैनिकों का

बुरा हाल कर रहे थे। तब असहनशीलता से उत्पन्न हुये क्रोध मे भर राम के सैनिक भी अपने शत्रुओं स निर्भयता पूर्वक युद्ध करने लगे। वाणों और शूलों से भिदे रहने पर भी वे अब दुश्मनों पर पत्थरों और वृक्षों की अनवरत् वर्षा कर रहे थे। तदन्तर वे अपना नाम ले-लेकर, साथ ही भीषण गर्जना करके फिर, विकट युद्ध करने लगे। उन्होंने धूम्राक्ष के सैनिकों को बड़ी निर्भयता से मारना शुरू कर दिया। और कुछ ही समय के उपरान्त, फिर धूम्राक्ष के वे सैनिक टूटी हुई अपनी पसलियों के कारण, मुँह से खून ओकने की वजह से, पेट से आँतो के बाहर निकल आने के कारण बड़ी ही हीन दशा को प्राप्त हो गये। मसली हुई और टूटी हुई ध्वजा, टुकड़े-टुकड़े हुये खड्ग, चूर-चूर हुये रथों और कट-कट कर गिर पड़ने वाले सैनिकों से समूचा रण-स्थल भर गया। रक्त की गन्ध से वायु सन-सी गई। तब, धूम्राक्ष के बाक़ी बचे सैनिक रण क्षेत्र से भाग खड़े हुये। और भागते हुये उन सैनिकों की चपेट में आकर राम के बहुत से योद्धा भूमि में गिर पड़े।

खून से लथपथ हुये अपने सैनिकों को रणक्षेत्र से इस प्रकार भागते देखकर धूम्राक्ष गंभीर गर्जना कर, तब युद्धक्षेत्र मे आगे आया। क्षण-भर में ही उसने वाणों की अविरल वर्षा कर चारो दिशाओं को भर दिया। फिर, वह हँसता हुआ और आगे बढ़ा। अब वह तीक्ष्ण वाणों को छोड़ता हुआ राम के सैनिकों को भीषण यातना दे-देकर मारने लगा। पहिले वह उनकी आँखे फोड़ देता था—फिर, भुजाओं को काट डालता था—और अन्त में इस प्रकार उन्हें तड़पा कर उनके प्राणों का हरण कर लेता था। तब, वह हँसता था, बड़ी वीभत्स हँसी—जिसका कोई ओर छोर न था। तो,

हनुमान से यह न देखा गया वह क्रोध मे भर कर बड़ी भारी शिला को अपने मजबूत हाथों पर उठाये, तब धूम्राक्ष की ओर झपटा। उस समय कठिन क्रोध के कारण महाबली हनुमान के नेत्र धक्-धक् कर जल रहे थे। शिला रूपी त्रिशूल उठाये, हनुमान के रूप मे साक्षात रुद्र को अपनी ओर आते देख एक बारगी तो धूम्राक्ष का मन भी काँप उठा। मगर वह क्षण-भर के बाद के भविष्य की कल्पना कर वेगपूर्वक रथ में से कूद कर पृथ्वी पर खड़ा हो गया और तभी उसने देखा, उस शिला के भीषण प्रहार से उसका रथ चूर-चूर हो गया है। रथ के घोड़े कुचल गये हैं। फिर, उसने देखा--वृक्षों के बड़े-बड़े तुद्दों की सहायता से हनुमान उसको घेर कर चलने वाले रणकुशल उन सैनिकों को मारने मे व्यस्त हो गया--और सिर फूट पड़ने के कारण उनमे से कितने ही लोहुलुहान हो पृथ्वी पर गिर पड़े हैं यह देखकर वीर्यवान धूम्राक्ष गदा को ऊपर उठा हनुमान की ओर दौड़ा-उसने उसके समीप पहुंचते ही बहुत से कंगूरों वाली अपनी उस गदा को फिर हनुमान के सिर पर दे मारी—मगर हनुमान के दो कदम पीछे हट जाने के कारण उसका वह वार भरपूर उसके शीश पर न बैठा—और झपट के कारण लग जाने वाली उस थोड़ी-सी चोट की हनुमान ने कुछ भी पर्वाह न कर, अपने हाथों मे थमी हुई उस शिला को पूरे वेग के साथ उसके सिर पर पटक दी। और तभी, हनुमान ने देखा, उस बड़ी भारी शिला के प्रहार से धूम्राक्ष के सभी अंग फैल गये हैं और वह विदीर्ण हुये पर्वत के समान सहसा ही भूमि मे गिर कर हमेशा के लिए शान्त हो गया है।

धूम्राक्ष को इस प्रकार मरा हुआ देख कर उसके बाकी बचे सैनिक भी शीघ्रता से लङ्का की ओर दौड़े, मगर वीरवर हनुमान श्रम से क्लान्त होने

पर भी, अपने सैनिकों से सत्कार पाने के कारण स्वयं को थका हुआ महसूस नहीं कर रहा था। वह अभी भी निरुत्साहित हुये धूम्राक्ष के उन सैनिकों को बीन-बीन कर मार रहा था। तभी, रणक्षेत्र से किसी प्रकार बचकर भागे हुये सैनिको ने महाराजाधिराज रावण को धूम्राक्ष की मृत्यु के विषय में सब कुछ कह सुनाया। और इस समाचार को सुनते ही वह क्रोध से वशीभूत हो विषधर सर्प के समान निश्वास छोड़ने लगा। तब, क्रोध से अधीर हो, वह गरम-गरम साँस छोड़ कर, सामने खड़े हुये क्रूर स्वभाव वाले महाबली वज्रदंष्ट्र से कहने लगा—'हे वीर ; तुम अपने साथ बहुत से श्रेष्ठ सैनिकों को लेकर इसी समय वहाँ जाओ—और दशरथनन्दन राम, हनुमान, सुग्रीव आदि सभी को मारकर, शीघ्रता से मेरे पास लौटो।' इतना कह कर वह चुप हो गया और अपलक नेत्रों से उसवीर की ओर देखने लगा।

तब, वज्रदंष्ट्र 'जो आज्ञा प्रभु की' ऐसा कह और उसके सम्मुख नतमस्तक हो शीघ्रता से राजभवन से बाहर निकल आया। रावण से इस सम्मान को प्राप्त कर आज वह फूला नहीं समा रहा था। वह सोच रहा था आज उसके प्रभु ने उसे इस लायक समझा है कि वह अकेला ही इतने बली योद्धाओं को मार कर उसके विचारों को फैलने देने के लिये मार्ग प्रशस्त कर सकता है। फिर, वह स्वयं ही अपनी सराहना करने लगा। तब, उसने केयूर मुकुट और कवच को धारण कर स्वयं को वीरों के वेश में ख़ूब ही सजाया। और जब वह स्वर्ण विभूषित, उज्ज्वल और पताकाओं से सुशोभित रथ की परिक्रमा कर उसमें बैठने लगा तो उसने देखा—असंख्य अश्वारोही, उष्ट्र और हाथियों पर सवार तथा रथों में बैठे हुये बाँके सिपाही उसके साथ चल रहे हैं—और उसने तुरन्त ही इस विराट् सेना को कूँच

का हुक्म दे दे दिया । तब, वीरों में श्रेष्ठ वे वीर हँस पड़े और उमंग से आगे बढ़े । पदाति सेना, ऋष्टि, तोमर, विचित्र और चिकने मूसल, तीक्ष्ण कुठार, भिन्दिपाल, चाप, शक्ति आदि अनेक प्रकार के आयुधों को लेकर उसके रथ के पीछे-पीछे चलने लगी । वे सभी सैनिक तरह-तरह के आभूषण और सुन्दरऔर कीमती वस्त्र पहने हुये थे ।

वे मस्त होकर मार्ग में बढ रहें थे । वज्रदंष्ट्र को विश्वास था आज वह निश्चय ही राम लक्ष्मण, सुग्रीव हनुमान आदि सभी बलवान, दुश्मनों को मार कर अपने स्वामी रावण को सर्वदा के लिये चिन्ता से मुक्त कर देगा । और यही सब कुछ सोचता विचारता जब वह रणस्थल के निकट पहुँचा तो राम के उन विजयी सैनिकों का हर्षनाद सुन, एक अनोखे उत्साह में भर पुलकित हो नाच सा उठा । युद्ध के आनन्द में मग्न हो उसने अपने सैनिकों को तुरन्त ही युद्ध करने की आज्ञा देदी । तब, दोनों ओर के सैनिकों में तुमुल युद्ध होने लगा । उस समय दोनो ओर के उत्साह सम्पन्न अनेक वीर देह और सिर के अलग-अलग-होने पर, लोहुलुहान हो, तड़फड़ाते हुये युद्ध भूमि में गिरने लगे । तब, वृक्षों, शिलाओं और अनेक प्रकार के आयुधों का महाभयङ्कर शब्द होने लगा । रथो का नेमिघोष, धनुषों की टङ्कार और रणवाद्यों का तुमुल शब्द उस समय हृदय को फाड़ने लगा । फिर, कुछ योद्धा शस्त्रों का त्याग कर परस्पर बाहुयुद्ध करने लगे ।

तब, रण के मद में चूर हुआ वीर-शिरोमणि बज्रदंष्ट्र राम के सैनिकों को त्रस्त करता हुआ रणस्थल में चारो ओर घूमने लगा । अपने स्वामी के युद्ध-कौशल से प्रभावित हो फिर, उसके सैनिक भी दूने वेग से राम के सैनिकों का संहार करने लगे । उस समय मर-कटकर गिर-पड़ने वाले राम

के सैनिकों से युद्ध-भूमि पट-सी गई। यह देख अगंद के क्रोध की सीमा न रही और वह अपने नेत्रों को लाल-लाल कर उन कालरूप दुश्मनों का बड़ी फुर्ती के साथ संहार करने लगा। फिर, थोड़ी ही देर में, वज्रदंष्ट्र के सैनिकों की लाशों, टूटे हुये रथो, तरह-तरह के आभूषणों, हवा मे ऊँची उड़ने वाली पताकाओं और कीमती वस्त्रो से राम के सैनिकों के मृत-शरीर पूर्णतया ढक गये। खून में लथपथ हुये वे कबंध और कुचले हुये शीश उस समय बड़ा ही भयंकर दृश्य उपस्थित कर रहे थे।

अगंद के इस युद्ध-चातुर्य को देख वज्रदंष्ट्र ने वज्र के समान भयंकर धनुष को तान पराये सैनिकों पर कठिन बाणों की वर्षा प्रारम्भ कर दी। उसी समय उसकी रथवाहिनी ने भी उसका पूरा-पूरा साथ देना शुरू कर दिया। रथों में बैठे हुये वे सैनिक विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों की बौछार कर रहे थे। यह देख अगंद की ओर के अनेक रणकुशल सैनिक भी इकट्ठे हो शिलाओं को फैंक-फैंक कर युद्ध करने लगे। तब बड़ी भयंकर मार-काट मची। युद्ध में पराङ्मुख न होने वाले और युद्ध के अभिलाषी वे वीर परस्पर एक-दूसरे को काट काट कर खुश होने लगे। तब, किसी का माथा फूटा, अनेकों के हाथ-पैर कट गये और इस प्रकार लोहुलुहान हो वे भूमि में गिरने लगे। इस प्रकार थोड़ी ही देर में दोनों ओर के सैनिकों की लाशो का वहाँ एक बड़ा भारी ढेर सा लग गया। यह देख कर राम की सेना दूने वेग से युद्ध करने लगी और वज्रदंष्ट्र की सेना फिर युद्ध-क्षेत्र से भाग खड़ी हुई।

तो वज्रदंष्ट्र का खून खौल उठा। सब बातो का ध्यान छोड़ अब वह केवल युद्ध करने लगा। वह अपने हाथो में धनुष धारण कर दुश्मनों मे बहुत दूर तक घुस गया। क्षण भर के बाद ही फिर उसने कंकपत्र युक्त

बाणों की मार से अगंद की सेना को विदीर्ण करना आरम्भ कर दिया। वह युद्ध में अपना पराक्रम प्रदर्शित करता हुआ, तब, अपने एक ही बाण से सात-सात, आठ-आठ और कभी नौ-नौ योद्धाओं को एक साथ ही मार कर युद्ध-भूमि में सुलाने लगा। तब, प्राणों का मोह कर, सुग्रीव की सेना युद्ध-क्षेत्र से भागने लगी। उसी समय अगंद, रणस्थल में नृत्य-सा करते हुये वज्रदंष्ट्र के सम्मुख आ उसकी ओर बड़ी कड़ी नजर से देखने लगा—और कुछ ही क्षणों के उपरान्त उन दोनों वीरों में परस्पर फिर महाभयंकर युद्ध होने लगा। सिंह और उन्मत्त हाथी में जिस प्रकार युद्ध होता है—वे दोनों अब इसी प्रकार युद्ध कर रहे थे। और उसी समय वज्रदंष्ट्र ने अनेक तीखे बाण मार कर बालिपुत्र अगंद के मर्मस्थानों को छेद डाला--तब, वह खून से नहा-सा गया, मगर तब भी भयंकर पराक्रमी अगद ने वज्रदंष्ट्र के ऊपर एक वृक्ष फेंका। उस वृक्ष को अपनी ओर आता हुआ देख, युद्ध में सावधान रहने वाले वज्रदंष्ट्र ने मार्ग ही में उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये—तब, वह वृक्ष पृथ्वी मे गिर पड़ा। और अगंद अपने दुश्मन के इस पराक्रम को देख कर, मन ही मन, उसकी वीरता की सराहना करने लगा। मगर उसी समय उसने भयंकर रूप से क्रोधित हो. फिर, एक शिला उसकी ओर फेंक कर मारी--जिसने वज्रदंष्ट्र के रथ के ऊपर गिरते ही अश्व-सहित उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले, परन्तु युद्ध करते समय सदाँ सतर्क रहने वाला वज्रदंष्ट्र रथ मे से कूद कर पहिले ही पृथ्वी पर खड़ा हो गया था। मगर तभी, एक दूसरा शिला उसके शीश पर आकर गिरी और वह रक्त ओकने लगा। फिर, मूर्छा आ जाने के कारण भूमि मे लुढ़क गया। तदन्तर मुहूर्तभर तक मूर्छित रहने के उपरान्त वह सँभल कर उठा और

क्रोध में भर कर अंगद के साथ मुष्टि-युद्ध करने लगा। तब, इन दोनों वीरों के युद्ध-कौशल को देखने के लिये ठगे-से खडे रह गये उन वीरों ने भी उत्साहित होकर, परस्पर फिर युद्ध प्रारम्भ कर दिया। वे कभी पृथ्वी में घुटनों के बल बैठकर, कभी फिर खड़े होकर, गंभीर गर्जना करते हुये, पैंतरा बदल कर, इस प्रकार तरह-तरह से युद्ध करने लगे। लगे हुये घावों के कारण वे सभी वीर उस समय टेसू के फूलों के समान शोभा पा रहे थे।

उसी समय बालिपुत्र अंगद ने मुष्टि युद्ध से थक कर, दो कदम पीछे हट; कमर में बँधी हुई खड्ग को अपने हाथ में सँभाला और उसकी ओर झपटा; मगर उसकी खड्ग का पहिला वार वज्रदंष्ट्र ने बढ़िया खाल से मढ़ी हुई अपनी ढाल पर लिया और साफ बच गया। फिर, उसने चाहा कि वह भी अपनी खड्ग का वार अंगद पर करे--और उसने किया भी; परन्तु हाथ ओछा पड़ा—और तभी, अंगद ने दूसरे वार में उसके बड़े भारी शीश को काटकर पृथ्वी पर गिरा दिया। गिर-पड़ने के लिये तत्पर उसके कवंध के ऊपरी भाग से रक्त की अनेक फुहारें ऊपर उठीं और गिर-पड़े उसके शरीर पर गिर कर फिर पृथ्वी में समा गई। यह देखकर उसके सैनिक भौंचक्के हो गये--तब वे भागे—लंका की ओर—और राम की सेना में ख़ुशी की एक लहर-सी दौड़ गई। वे सब अंगद को घेर कर खड़े हो गये और आकाश तक ऊपर उठने वाले स्वर में उसकी जय-जयकार करने लगे।

मगर तभी, उनकी हँसी ने अचम्भे से देखा—महामेघ के समान शब्द करती हुई रावण की सेना उन्हीं की ओर बढ़ी चली आ रही है और यह देखकर उनकी हँसी सिहर उठी। मगर साहसी राम के वे सैनिक, एक क्षण के उपरान्त ही, दुश्मन से मोर्चा लेने के लिये फिर, व्यूहाकार खड़े हो

गये। तभी, उसी ओर बढती जाती रावण की वह सेना, सिंह के समान ऊँचे कंधों वाले, वीर शिरोमणि अकम्पन के सेनापतित्व में उनके सम्मुख जा-पहुँची। अपने दुर्धर्ष वीरों के बीच मे, तपे हुये स्वर्ण से अलंकृत बड़े भारी रथ मे बैठा हुआ अकम्पन, उस समय, तेजोमय सूर्य के समान शोभा पा-रहा था। तभी दोनों ओर के शखों की ध्वनि से आकाश गूँज उठा और रावण और राम के लिये अपने-अपने शरीरों को त्यागने वाले उन वीरों के बीच फिर ख़ून की होली खेली जाने लगी। तब रण-क्षेत्र में युद्ध करते जाते गर्जना करते और दौड़ते हुये उन योद्धाओं का बड़ा भारी शब्द होने लगा। रक्तवर्ण की उस धूल के कारण सभी दिशाएँ भर उठीं। उस समय दोस्त और दुश्मन को पहचान लेना बहुत मुश्किल हो गया। जो कोई भी किसी के सामने पड़ जाता, वह उसी को मार डालता था। फिर, वीरों के रक्त के छिड़काव से, धूल-भरी पृथ्वी बहुत अधिक गीली हो जाने के कारण, कीचड़ भरी दलदल-सी बन कर रह गई। उठी हुई धूल जहाँ तहाँ जाकर समा गई। अब मित्र और शत्रु एक दूसरे को स्पष्ट दीख पड़ते थे। उसी समय अपने शत्रुओं को प्रबल होता हुआ देख, अकम्पन का क्रोध भड़क उठा। इस प्रकार तब वह क्रोध से अधीर हो अपना बड़ा भारी धनुष अपने हाथों में संभाल, सारथि से कहने लगा—'हे सारथि! अब मै और अधिक अपनी सेना का विनाश नहीं देख सकता—तू मेरे रथ को शीघ्राति-शीघ्र आगे बढ़ा। प्रबल वेग से आगे बढ़ते हुये मै अपने दुश्मनो को शीघ्र ही अपने बाणों से बींध डालूँगा।'

और जैसे ही उसका रथ शत्रु-सेना के समीप पहुँचा—उसने बाणों की वर्षा कर सभी के मुँह फेर दिये। उस समय उससे युद्ध करना तो बहुत

राजा होकर भी हमारे साथ सर्वदा समानता का व्यवहार किया है। फिर, जिन अमूल्य विचारों की हमने अब तक रक्षा की है—क्या हम उन्हें इस प्रकार मिटता हुआ देख सकेंगे! आप चिन्ता को छोड़ कर स्वस्थ हो जाइये। मुझे स्त्री, पुत्र धन किसी का भी मोह नहीं सता रहा है। अपने उद्देश्य की पूर्ति के निमित्त मैं जीवन की बाजी लगा देना अपना परम कर्त्तव्य समझता हूँ।' रावण से इस प्रकार कहने के उपरान्त फिर उसने फौजदारों को कूँच करने के लिये तैयार रहने की आज्ञा दी।

और मुहूर्त-भर में ही समूची लंका शस्त्रों की झंकार से झंकृत हो उठी। क्षण-भर पहिले की उदासी न जाने कहाँ, किस ओर जाकर समा गई। वेद पाठी ब्राह्मण मन्त्रों का उच्चारण कर, घृत की आहुति से, हव्य की अग्नि को तृप्त करने लगे—और तभी, सुगन्धित पवन अठखेलियाँ! तब, रण-सज्जा से सजा हुआ जीवन, मन्त्रों के द्वारा अभिमन्त्रित मालाओं को धारण कर, आगे बढ़ा—तो महाशब्द करने वाले नगाड़े बज उठे—और उसी समय प्रहस्त अपने दिव्य रथ मे चढ बहुत ही शोभायमान प्रतीत होने लगा। उसका वह रथ सूर्य के समान उज्ज्वल, वरुथ और स्वर्ण की जाली से सुशोभित और सुन्दरता मे अपनी उपमा वह स्वय ही था। मेघों के समान गभीर ध्वनि कर चलने वाला, वेगवान घोड़े जिसमे जुते हुये थे, बुद्धिमान सारथी के द्वारा संचालित, सभी प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों से परिपूर्ण—इस प्रकार यह रथ कितना अनोखा था, उसका वर्णन करना कठिन है

और अपने ऐसे अनोखे रथ मे बैठकर, नरान्तक, कुम्भहनु, महानाद और समुन्नत नाम के चार मन्त्रियों से घिरा हुआ, जब सेनापति प्रहस्त आगे बढ़ा—तो दुन्दभियों और शंखों का भारी शब्द चारों ओर गूँज

उठा। अनेक महाबली योद्धा, विविध प्रकार के रण-वाद्यों को बजाते हुये उसके आगे-आगे जा रहे थे। भयकर युद्ध कर राम के पराजित कर देने के स्वप्न देखते, फिर, ओज में भरकर बाणो से बाणो को बजाते हुये अनगिनती वीर उसके दाँये, बाँये और पीछे की ओर चल रहे थे। और हाथियों के झुंड के समान इस बड़ी भारी सेना से घिरकर वह लका के पूर्व द्वार से बाहर निकला। फिर, कुछ ही क्षणों के उपरान्त, जब अपार शक्ति वाला सेनापति प्रहस्त, राम की सेना के समीप पहुँचा तो हर्ष मे भरकर गभीर घोष करने लगा। उस समय दोनो ओर की सेनाएँ, अपनी-अपनी कल्पना में रत हो, अपार हर्ष में भर गई। तभी, महाबली प्रहस्त अपनी शक्ति का भरोसा कर, शत्रु-सेना के बीच में जा पहुँचा। उस समय राम के पास में खड़े हुये विभीषण ने राम से कहा—'अपने गंभीर और भयकर घोष से वायु को विकपित कर देने वाला यह वीर, सेनापति प्रहस्त है—रावण का प्रधान सेनापति ! यह अतुल विक्रमी, अनोखा युद्ध-विशारद तभी, देखो, हमारी सेना मे बे रोक-टोक घुमा चला आ रहा है। भय-रहित होने के कारण इसे किसी भी प्रकार का डर नहीं सताता। युद्ध मे वह निश्चय ही विजय प्राप्त करेगा—ऐसा सोच कर ही यह युद्ध में अग्रसर होता है ।'

महाबली, अस्त्रज्ञ और वीर्यवान सेनापति प्रहस्त के विषय मे राम से विभीषण यह सब कुछ कह ही रहा था कि दोनो ओर की सेनाओं ने युद्ध प्रारम्भ कर दिया। दोनो ओर के वीरों का सिंहनाद, शस्त्रों की झंकार, शंखो का रव और कटकर मरने वाले सैनिकों का चीत्कार आदि सब कुछ तब एक-साथ ही सुनाई देने लगा। विजयाभिलाषी प्रहस्त के सैनिकों के हाथों में रमणीय धनुष, अनेक प्रकार के फरसे, खड्ग, शक्ति, ऋष्टि, मूसल,

बाण, गदा, परिघ और प्रास शोभायमान हो रहे थे और उनकी सहायता से वे अपने दुश्मनों पर करारी चोट कर रहे थे। तब कुछ ही क्षणों के उपरान्त, राम के बहुत-से सैनिक शूल और चक्र से कुचल गये, कुछ परिघ से घायल हुये, कतिपय फरसे से कट गये। कुछों का हृदय वाणों ने फाड़ डाला, कुछ, दूसरों को कटता हुआ देख कर ही सुन्न हो गये और अनेक श्वास-रहित होकर भूमि में गिर पड़े। कोई खड्ग के वार से दो-टूक होकर तड़फड़ाने लगे। उन वीरों ने बहुत से दुश्मनों की कोख ही फाड़ डाली।

तब, अपने साथियों की ऐसी हीन दशा को देखकर राम के दूसरे सैनिकों का क्रोध भभक उठा। वे पागल-से बन युद्ध करने लगे और कुछ ही देर में उन्होंने बहुत-से दुश्मनों को कुचल डाला। प्रहस्त के अनेक सैनिक तब भीतरी चोट खाकर रक्त ओकने लगे और सिर पकड़ कर जमीन पर बैठ गये। वे फिर उठे और आर्त-स्वर में कुछ कहते हुये युद्ध करने लगे। प्रहस्त के मन्त्रियों से यह न देखा गया तो वे आगे बढ़कर, शीघ्रता से आक्रमण कर, राम के सैनिकों की बुरी दशा करने लगे। तब द्विविद ने यह देख, शिला का प्रहार कर, नरान्तक को मार डाला। और उसी समय दुर्मुख नाम वाले राम के एक सैनिक ने एक बड़े भारी वृक्ष को समुन्नत के ऊपर गिराकर उसे भी संसार से विदा कर दिया। तेजस्वी जाम्बवान् उस समय बौखलाया-सा होकर युद्ध कर रहा था—तभी, महानाद ने उसका मार्ग अवरुद्ध करना चाहा—तो, उसका क्रोध और आगे बढ़ा। और उसने अग्नि के समान धधकते हुये क्रोध के वशीभूत हो महानाद के वक्षस्थल पर शिला का प्रहार कर उसे अपने मार्ग से दूर हटा दिया तभी, कुंभहनु भी हृदय में गहरा आघात पहुँचने के कारण इस संसार से चल बसा

यह देखकर प्रहस्त तेज आग पर रक्खे हुये पानी के समान खौल उठा। फिर, उसने चारों दिशाओं में वाणों की वर्षा कर रण-स्थल को ढक-सा दिया। राम के सैनिक उन प्राण घातक वाणों से बिंध-छिद कर अनायास ही भूमि पर गिरने लगे। उनके शरीर से अविराम गति के निकलने वाले रक्त में पृथ्वी नहा-सी उठी। यह देखकर नील का क्षोभ जाग उठा और वह वेगपूर्वक प्रहस्त की ओर दौड़ा। नील को बड़ी तेजी के साथ अपनी ओर आता हुआ देख सेनापति प्रहस्त ने भी अपना रथ उसी ओर बढ़ाया। तब, वह अपने बड़े भारी धनुष को कान तक खींच नील के ऊपर वाणों की वर्षा करने लगा। और प्रहस्त के वे तीक्ष्ण और वेगवान् वाण सावधानी के साथ नील के शरीर में प्रवेश कर, फिर दूसरी ओर निकल, पृथ्वी में समाने लगे। तभी, नील ने एक बड़े भारी वृक्ष का प्रहार प्रहस्त पर कर उसे घायल कर दिया, मगर अपनी उस चोट की बिल्कुल भी परवा न कर तब प्रहस्त दूने वेग से उस पर कठिन कठोर वाणों की बौछार करने लगा। तब, बड़े भारी सन्तोष के साथ नील, वाणों के उस प्रहार को सहन करता हुआ, प्रहस्त को मार डालने की युक्ति पर विचार करने लगा। फिर, गहरे और कठिन क्रोध के वशीभूत हो उसने शाल को उठा प्रहस्त के ऊपर उसे फेंका, जिसके प्रहार को सह न सकने के कारण उसके रथ में जुते हुये चारों घोड़े तत्काल मर कर पृथ्वी पर गिर पड़े! उसकी झपट में आ जाने के कारण प्रहस्त का धनुष-भी-दो टूक हो उसके हाथों से छूट दूर जा गिरा। और प्रहस्त एक भीषण मूसल को अपने हाथ में लेकर रथ से कूद पड़ा। तब, वे दोनों वीर, भीम काय दो रेल के इंजिनों के समान टकरा कर टूट-जाने के लिये, आपस में भिड़ गये और भयङ्कर रूप से एक दूसरे पर प्रहार करने लगे।

फिर, कुछ काल-पर्य्यन्त, प्रचण्ड बली प्रहस्त ने नील के ललाट पर अपने मूसल से गहरा घाव कर उसको उसी के रक्त में भिगों-सा दिया। चक्कर खाकर वह गिरना ही चाहता था कि वह सँभल गया और तभी एक भारी वृक्ष अपने दोनों हाथों मे उठा उसने प्रहस्त की ओर फैका—और प्रहस्त के विशाल वक्ष-स्थल को विदीर्ण कर तब वह वृक्ष पृथ्वी पर गिर पड़ा। इतने ही कि प्रहस्त अपने मूसल से नील पर प्रहार करे नील ने एक बड़ी भारी शिला उसके ऊपर फैंक उसके सिर के सौ-टूक कर बड़ा भारी बल प्रदर्शित किया। और प्रहस्त क्षण-भर में ही प्राण-रहित होकर जड़-कटे वृक्ष के समान भूमि में गिर पड़ा। उसके शरीर में से अबाध-गति से बहने वाले रक्त ने क्षण-भर में ही अपने चारों ओर की पृथ्वी को भर-सा दिया। यह देखकर उसके सभी सैनिकों का साहस उनसे बहुत दूर जाकर खड़ा हो गया और वे ध्यानमग्न व्यक्तियों के समान, रावण के समक्ष पहुँच, चुपचाप खड़े रह गये।

तब, मौन रहकर उन्होंने उससे सभी कुछ कहा और सिंहासन पर बैठा हुआ रावण वास्तव में प्रहस्त की मृत्यु की बात सुन कर, हिल-सा गया। उस समय उसका क्रोध वर्षा में उमड़ कर बह-चलने वाली नदी के समान उफन कर चारों ओर फैलने लगा। तब पास मे खड़े हुये अपने सेनानियों से वह कहने लगा—'अपने प्यारे सेनापतियों की मृत्यु को चुपचाप सहन कर-सकने में मैं असमर्थ हूं। अपने विरोधियों से मैं आज ही युद्ध करने के लिये जाऊँगा। आज मैं अपने बाणों की सहायता से राम, लक्ष्मण और उनकी समूची सेना को भस्म कर डालूंगा। वीरो! सेना को तैयार रक्खो।' वह तुरन्त ही उठकर खड़ा होगया और तब मन्दोदरी के महलों की ओर चला।

: उन्नीसवाँ अध्याय :

: राम के साथ प्रथम युद्ध :

अपनी बड़ी-बड़ी आँखों में युद्ध का गहरा नशा बसाये, सज सँभल कर जब वह मन्दोदरी के महलोंसे बाहर आया तो सिंहद्वार से शुरू होकर दूर तक फैली हुई उसकी सेना एक स्वर से उसकी जय जयकार कर उठी। फिर, स्वस्ति वाचन से पूजित होकर, उत्तमोत्तम घोड़ों के द्वारा खींचे जाने वाले रथ में बैठ जब वह लंका से बाहर चला, तब समूची लंका उसके पथ में पलकें बिछाये उसको विदा दे रही थी। अग्नि के से रंग वाले उसके रथ से आभा फूटी-सी पड़ती थी। साथ में चलने वाले सैनिकों का सिंहनाद, शंख, भेरी तथा पणवों का शब्द बहुत ऊँचा उठकर आकाश को छू रहा था। मगर वह एक दर्द दिल में छिपाये, क्रोध के कारण दमकता हुआ, राज-मार्ग के दोनों ओर खड़ी हुई प्रजा का अभिवादन स्वीकार करता रथ में चुपचाप बैठा हुआ चला जा रहा था। धूम्राक्ष, वज्रदंष्ट्र, अकम्पन और प्रहस्त की मृत्यु का बदला वह अवश्य लेगा—उसने निश्चय कर लिया था।

और जब इस विराट् सैन्य-दल से घिरा हुआ वह उस रण-मुहाने पर जा पहुँचा तो उसने देखा, युद्ध करने के लिये तैयार खड़ी हुई राम की सेना में अनेक ऐसे अनोखे वीर भी हैं, जिनका चमकता हुआ मुख मण्डल, वज्र सरीखे हाथ-पैर और भीषण आकृति इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि उन्हें मृत्यु का भय नहीं सताता। और वह रण-स्थल में और आगे बढ़ा। तभी, पास में खड़े हुये विभीषण से राम पूछने लगा—'अनेक वर्ण की ध्वजा और

पताकाओं से सुशोभितमत्त हाथियों, घोड़ों, रथों से परिपूर्ण और प्रास, तलवार, शूल, मूसल आदि अनेक प्रकार के आयुधों को धारण करने वाले बली सैनिकों से भरी पुरी यह विराट् सेना किसकी है ?'

राम के इस प्रश्न को सुन तब विभीषण कहने लगा—'धूल के बादलों की ओट किये हमारी ओर बढ़ती आती यह सेना, मुझे प्रतीत होता है, रावण की है। पर्वत के-से शरीर वाले बली अतिकाय, क्रोध के कारण अग्नि के समान दहकते हुये नेत्रों वाले महाबली महोदर, तड़ित-वेग से आगे बढ़ने वाले दुर्जय पिशाच, वज्र के समान दृढ, तीक्ष्ण स्वभाव वाले यशस्वी त्रिशिरा, एकाग्रचित होकर धनुष की सहायता से युद्ध करने वाले कुंभ, अद्भुत कर्म करने वाले निकुंभ, सूर्य के समान प्रदीप्त, रथ में बैठे हुए नरांतक को मैं स्पष्ट देख पा रहा हूँ। हे महाराज! ये सभी योद्धा स्वभाव से ही युद्ध प्रेमी हैं। इनका स्वभाव है कुछ दिनों तक युद्ध न होने पर अपनी भुजाओं की खुजली मिटाने के लिये पत्थरों से जूझ पड़ते हैं।' इतना कह तब वह सामने की ओर कुछ देखने-सा लगा और पल भर के अन्तर से वह फिर कहने लगा—'दमदम कर दमकते हुये रथ पर चढ़ कर आज मेरा वह बली भ्राता आपसे युद्ध करने के लिये यहाँ पर स्वयं ही आ पहुँचा है। यह जो सूक्ष्म कांगों वाला, चन्द्रमा के समान निर्मल प्रकाश वाला उत्तम छत्र दीख पड़ रहा है, लकाधिपति रावण यहीं पर है।' इतना कह तब वह राम के मुख की ओर देखने लगा। और उसी क्षण राम ने सूर्य के समान दमकते हुये रावण को बहुत दूर पर देखा। तब, उसके तेज से प्रभावित हो वह विभीषण से कहने लगा—'ग्रीष्म कालीन दोपहर के सूर्य के समान अपने अंगों से प्रखर किरणों को प्रस्फुटित कर चारों दिशाओं को आलोकित करने वाले रावण नाम

के इस दिनकर की ओर मैं देख सकने में भी असमर्थ हूँ। मगर युद्ध की अभिलाषा से यहाँ पर आये हुये इस रावण से मै निश्चय ही युद्ध करूँगा। तुम देखोगे विभीषण, मेरे तीक्ष्ण बाण रावण के शरीर में प्रवेश कर उसे शीघ्र ही श्री से हीन कर देंगे।'

और तभी, विचारो में लीन विभीषण ने देखा—इस प्रकार कहने के उपरान्त क्रोध के वशीभूत हुये राम ने दो कदम आगे बढ़कर अपने धनुष को धारण कर लिया है। जीवन-मरण के इस युद्ध में भाई का साथ देने के लिये लक्ष्मण भी आगे बढ़ गया है। फिर, उसने सुना, सेना की अग्रिम पंक्ति के वीर गगन-भेदी नारे लगा कर राम की जय-जयकार कर रहे है—और तभी, रावण की जय की कर्ण-भेदी आवाज भी उसे सुनाई दी। फिर, उसने युद्ध के समय बजने वाले बाजों का शोर भी सुना और उसी क्षण उसने देखा--राम के सैनिको को त्रस्त करता हुआ रावण बड़ी तेजी से सेना के बीच मे घुसा चला आ रहा है।

तभी, रावण को सहसा युद्ध क्षेत्र में आया हुआ देख कर सुग्रीव को बहुत ही आश्चर्य हुआ और वह एक बड़ी भारी शिला को अपने हाथों पर उठाये उसकी ओर झपटा—फिर, पास में पहुँच कर उसने वह शिला उसके ऊपर फैंकी; मगर रावण ने प्रदीप्त पूँछ वाले बाणों की सहायता से उस शिला के टुकड़े-टुकड़े कर पृथ्वी में गिरा दिया। फिर क्रोध में भर कर विशाल सर्प के समान भयंकर और वज्र के समान वेगवान तथा अग्नि के समान दहकता हुआ एक बाण, सुग्रीव को नष्ट करने की इच्छा से उसकी ओर छोड़ा। और उस बाण के लगते ही सुग्रीव अचेत हो पृथ्वी पर गिर पड़ा। यह देख गवाक्ष, सुषेण, ऋषभ, ज्योतिर्मुख और नल आदि अनेक वीर अपने-अपने

हाथों में भारी-भारी पत्थरों को सँभाले उसकी ओर दौड़े, मगर उसने सौ तीखे बाण मार उन पत्थरो को इनके हाथों में ही टुकड़े-टुकड़े कर पृथ्वी में गिरा दिया—फिर, पल भर के अन्तर से स्वर्ण की पूँछ वाले बाणों की सहायता से उन वीरों को भी उसने बींध डाला। वे सभी वीर इस प्रकार आहत हो पृथ्वी में गिर कर तब सिसक-सिसक कर रोने लगे और रावण अट्टहास कर उठा।

फिर, वह समूची सेना को अपने बाणों से पीड़ित कर रण-स्थल में चारों ओर घूमने लगा। यह देख धनुर्धारियों में श्रेष्ठ राम का रक्त खौल उठा, मगर तभी लक्ष्मण उसके सम्मुख पहुँच कहने लगा—'हे विभो! तेज के पुंज इस रावण का वध करने में मैं पूर्ण समर्थ हूं। अपने तीक्ष्ण बाणों की सहायता से मैं इसे शीघ्र ही बींध डालूँगा। हे आर्य! आप मुझे आज्ञा दीजिये।'

लक्ष्मण के ऐसे वचन सुन तब तेजस्वी राम कहने लगा—'हे लक्ष्मण! तुम जाओ। मगर बहुत ही सावधान रह कर युद्ध करना। महावीर रावण युद्ध में अद्भुत पराक्रम प्रदर्शित कर सकता है और उसके क्रुद्ध होने पर फिर संसार में कोई बिरला ही उसके पराक्रम को सहन करने में समर्थ हो सकता है। मेरे इस कथन में तनिक भी सन्देह न कर तुम उसके साथ युद्ध करना।'

राम की इस बात को सुन तब सुमित्रानन्दन लक्ष्मण उसे प्रणाम कर रावण के साथ युद्ध करने के लिये युद्ध-क्षेत्र में आगे आया। और तभी, उसने देखा—हाथी की सूँड के समान विशाल भुजाओं वाला रावण अपने भीषण धनुष को तान कर सैनिकों पर निरन्तर बाणों की वर्षा कर रहा है।

और वह और आगे बढ़ा मगर तभी, वीर्यवान हनुमान ने वहाँ पहुँच कर लक्ष्मण को पीछे हटा दिया और तब स्वयं ही रावण के वाण जाल को हटाता हुआ उसकी ओर चला। तब, इस प्रकार निडरता के साथ अपनी ओर आते हुये हनुमान को देख कर रावण भी आश्चर्य में भर, वाण बरसाना भूल, उसकी ओर एक टक देखता रह गया। वास्तव में, उस समय वह उसके साहस की मन हीं मन प्रशंसा कर रहा था—और तभी हनुमान ने उसके समीप पहुँच कर उससे कहा—'अरे रावण! तेरा काल रूप मैं हनुमान तेरे समक्ष आ पहुँचा हूँ। अब तू सबका ध्यान छोड़ केवल मुझसे युद्ध कर और देख मैं कितनी शीघ्रता से तुझे मृत्यु के हाथों में सौंपता हूँ।

वीरवर हनुमान के इन शब्दों को सुन तब रावण जल-सा उठा और उसने लपक कर हनुमान के वक्षः स्थल में तुरन्त ही एक घूँसा मारा—तब, उस प्रहार को सह न सकने के कारण हनुमान थर-थर काँपने लगा। मगर मुहूर्त भर में धैर्य धारण कर हनुमान ने भी उस पर वार किया और रावण का समूचा शरीर डोलने-सा लगा। परन्तु क्षण-भर में ही स्वस्थ हो उसने अपनी दाहिनी मुट्ठी उठाकर अबकी वार हनुमान के वक्षःस्थल पर और भी कठिन प्रहार किया—फिर उसे रह-रह कर काँपता हुआ छोड़- वह अपने रथ में बैठकर शीघ्रता से नील की ओर बढ़ा। वीर दशकंधर को क्रोध मे भर कर अपनी ओर आता हुआ देख, तब, एक शिला को अपने हाथो में उठाकर नील भी संभल कर खड़ा हो गया। और भयंकर वाणों को बरसाता हुआ जैसे ही वह उसके समीप पहुँचा उसने उस बड़ी भारी शिला को उसके ऊपर फैंका, परन्तु उसने सात वाण मार कर उस पर्वत शिखर के मार्ग ही

में टुकड़े-टुकड़े कर कर उसे भूमि में गिरा दिया। तब तो, नील के आश्चर्य का ठिकाना न रहा और वह क्रोध में पागल-सा बन, फिर, बड़ी फुर्ती के साथ अश्वकर्ण, धव और शिला बरसाता हुआ रावण के साथ युद्ध करने लगा। यह देख रावण का क्रोध फिर अपनी चरम-सीमा पर जा पहुँचा। तुरन्त ही उसने आग्नेयास्त्र का प्रहार कर नील को सहसा ही पृथ्वी में गिरा दिया। फिर इस प्रकार नील को मृतप्राय कर वह गर्जना करता हुआ शीघ्रता से लक्ष्मण की ओर चला। और सुमित्रानन्दन लक्ष्मण के समीप पहुँच क्रोध के कारण वह दमक-सा उठा। अपने बड़े भारी धनुष पर वाण चढाता हुआ वह कहने लगा—'अरे राघव! तेरा काल आ पहुंचा है—अब तू सावधान होकर युद्ध कर और देख, कितनी शीघ्रता से मैं तुझे मृत्यु को सौंपे देता हूँ।'

धीर, वीर और विक्रमी लक्ष्मण से इस प्रकार कहने के उपरान्त तब महा बली दशकंधर ने कुपित होकर उसकी ओर सुन्दर पूँछ वाले सात वाण छोड़कर विस्मय से देखा कि उसके उन वाणों को लक्ष्मण ने तीक्ष्ण धार वाले वाणों की सहायता से मार्ग ही में काट डाला है और अपनी इस सफलता को देख वह खड़ा-खड़ा मुस्करा रहा है। यह देख उसका क्रोध फिर और आगे बढ़ा और वह लक्ष्मण पर तीक्ष्ण वाणों की वर्षा-सी करने लगा, परन्तु लक्ष्मण किसी भी प्रकार से क्षुब्ध हुये बिना उसके धनुष से छूटे हुये वाणों को क्षुर, अर्द्धचन्द्र, उत्तम कर्णी और भल्ल नामक वाणों की सहायता से बराबर निष्फल करता रहा। यह देख धनुर्धारियों में श्रेष्ठ रावण के आश्चर्य की सीमा न रही और वह उस राजकुमार की ओर फिर और भी कठिन वाण बरसाने लगा। मगर लक्ष्मण ने उसके सभी वाणों को मार्ग ही में काट-काट कर भूमि में गिरा दिये—तब तो, रावण का पौरुष जैसे उसे धिक्कारने लगा

और उसने काल और अग्नि के समान प्रभाववाला एक बाण फिर लक्ष्मण के ललाट को लक्ष्य कर छोड़ा और क्षण-भर बाद ही उसने देखा—उसके उस कठिन-कठोर बाण ने लक्ष्मण के माथे को छेद डाला है और वह बेहोश होकर भूमि में गिरना ही चाहता है—मगर उसी क्षण उसने यह भी देखा कि लक्ष्मण ने शीघ्र ही प्रकृतिस्थ होकर अपने धनुष को उसकी ओर तान लिया है और तभी उसने अनुभव किया कि उसका धनुष कट गया है। उसका शरीर छिद गया है और वह बेहोश हुआ जा रहा है। मगर वह सँभल गया और तब उसने पहिले पास मे रक्खी हुई शक्ति की ओर देखा और फिर लक्ष्मण की ओर! फिर उसने ब्रह्मा जी द्वारा दी गई उस शक्ति को अपने हाथों में उठा लिया और क्षण-भर बाद ही वह शक्ति फिर, धुँआ और आग उगलती, दमकती भरत के छोटे भाई लक्ष्मण की ओर चली। उस समय लक्ष्मण ने कितना चाहा कि वह अपने तीक्ष्ण बाणों की सहायता से उस शक्ति को बीच ही मे काट डाले, परन्तु यह न हो सका और अतुल बलशालिनी वह शक्ति लक्ष्मण के वक्ष स्थल में घुसी ही चली गई। फिर, सभी ने देखा—लक्ष्मण अचेत होकर पृथ्वी में गिर गिर पड़ा है—और तभी रावण रथ मे से कूद पड़ा। वह अपनी भुजाओं में लक्ष्मण को कस उसे उठाना ही चाहता था कि वीरवर हनुमान के वज्र सरीखे घूँसे के भीषण प्रहार ने उसे मुँह के बल पृथ्वी मे गिरा दिया—तब, रावण की नाक से बहुत सा ख़ून निकल कर पृथ्वी में समा गया। और कुछ क्षणों के उपरान्त जब वह उठकर खड़ा हुआ तो उसने देखा—लक्ष्मण को अपनी भुजाओं पर रक्खे हनुमान दौड़कर उससे बहुत दूर निकल गया है।

और यह देख वह अपने रथ पर चढ़ गया—फिर वह राम की ओर चला। तभी, लक्ष्मण की ऐसी दशा देख राम का क्रोध भड़क उठा और उसी क्षण उसने देखा—अपने हाथों में बड़े भारी धनुष को उठाये रावण उसी की ओर बढ़ा चला आरहा है—और राम के नेत्र जल उठे। फिर महातेजस्वी राम उसी ओर चला और रावण के समीप पहुँच कहने लगा—'हे रावण! आज मैं तुझे मार-डालने का निश्चय करके ही युद्ध-क्षेत्र में तेरे सामने आया हूँ। तू सँभल कर युद्ध कर!'

राम के ऐसे कठोर वचनों को सुन तब रावण क्रोध में भर राम के ऊपर कठिन बाणों की वर्षा-सी करने लगा। यह देख कर महातेजस्वी राम का क्रोध फिर और आगे बढ़ा और उसने अपने तीक्ष्ण फल वाले बाणों के द्वारा, थके हुये, घायल, मगर युद्ध कर रहे रावण के अश्व, चक्र, ध्वजा, सारथि सहित रथ के टुकड़े-टुकड़े कर डाले—और क्षण-भर के उपरान्त ही फिर उसने उसके घायल वक्षः स्थल को भी बींध डाला—तब तो रावण कराह उठा। वह थर थर कर काँपने लगा। काँपते हुये हाथों से वह विशाल धनुष छूट कर नीचे गिर पड़ा। उसकी ऐसी दशा देख कर तब राम ने एक अर्धचन्द्राकार बाण के द्वारा उसके दमकते हुये मुकुट को सहसा ही काट डाला। और इस प्रकार श्रीहीन हुआ रावण फिर, लज्जा से झुक-सा गया। तभी, राम उससे कहने लगा—'हे रावण! वीरों की मर्यादा की रक्षा करना मेरा परम कर्तव्य है—इसी लिये तुझ-जैसे वीर को मैं इस समय मारना उचित नहीं समझता। मैं जानता हूँ, तू अपनी तरह का केवल एक ही वीर है। मैं तेरी वीरता की मुक्त-कंठ से प्रशंसा करता हूँ। नील, हनुमान, लक्ष्मण आदि अनेक योद्धाओं के साथ मैंने तुझे युद्ध करते हुये देखा है—तूने भीषण

पराक्रम प्रदर्शित कर मेरे बली योद्धाओं को मार भी डाला है; मगर इस समय तू थक गया है—इसलिये हे महावीर! आज तू लंका को लौट जा और वहा पहुँच कर आराम कर—स्वस्थ होने पर तू मेरे साथ युद्ध करने के लिये फिर आना और तभी मेरा बल भी देखना।'

हारे हुये रावण से इस प्रकार कहने के उपरान्त तब राम मन्द-मन्द मुस्करा कर अपने योद्धाओं की ओर देखने लगा और अपनी हार से दुखी होता हुआ रावण फिर लंका की ओर लौटा। आज उसके बल ने उसे अचानक ही धोखा दिया था—वह सोच-सोच हार हार था।

———

बीसवाँ अध्याय

: चिन्ताग्रस्त रावण :

राम के साथ प्रथम युद्ध मे हार जाने का रावण को इतना दुख नहीं था, जितना कि वह यह सोच-सोच हार रहा था कि वह राम को अपने इतने पास मे पाकर भी उसका कुछ न बिगाड़ सका—उल्टा वह वहाँ से अपमानित होकर लौटा। उसका बल उस समय न जाने कहाँ जाकर विलीन हो गया। वह इधर-उधर तो बाणों की वर्षा करता रहा, परन्तु अपने विरोधी राम को न बींध सका। वह नील, हनुमान, लक्ष्मण को तो घायल करने में समर्थ हुआ, लेकिन राम के शरीर में से एक बूँद भी रक्त न बहा सका। वह सोच रहा था—उस समय उसे कितनी प्रसन्नता होती, जब वह राम को मार कर अथवा घायल कर ही युद्ध-स्थल से अपने महलों को लौटता—और उसने तब एक बार सामने रक्खे हुये अपने आयुधों की ओर देखा—फिर, अपने पिछले जीवन की ओर, और वह क्षुब्ध हो उठा।

और दूसरे दिन जब वह अपने स्वर्ण के बने हुये पलंग पर पड़ा हुआ इसी चिन्ता में निमग्न था—तब, महाबली कुंभकर्ण, भाई का साथी बन कर, बड़े भाई का अपमान सह-न-सकने के कारण, राम के साथ भयंकर युद्ध कर अपने युद्ध-कौशल का अभूतपूर्व परिचय दे रहा था। सुग्रीव, हनुमान, लक्ष्मण सहित राम की समूची सेना उसकी तीव्र गति को रोक-सकने में असमर्थ-सी हो रही थी और वह भयंकर मार-काट करता हुआ सारे युद्ध-स्थल में

विचर रहा था। और जब उसने राम की बहुत-सी सेना को मार कर पृथ्वी में सुला अट्टहास किया तो रावण ने भी उसकी इस आवाज़ को सुना और वह प्रसन्नता से उछल पड़ा। उसे कुंभकर्ण के अडिग बल, उसके भयंकर पराक्रम और अपने प्रति उसकी गहरी श्रद्धा में पूर्ण विश्वास था। उसने कुंभकर्ण के रण-कौशल को अबतक अनेक युद्धों में देखा था। वह जानता था—युद्ध करने की अभिलाषा से उसके सामने खड़ा होने वाला कोई भी वीर अब तक जीवित नहीं लौटा था—और यह विचार कर उसका मन आनन्द से भर उठा।

मगर जब वह अपने छोटे भाई कुंभकर्ण की वीरता में विश्वास कर, उसके जीतने की आशा को विश्वास में बदले सुख के हिंडोले पर झूल रहा था—तभी, उसने सुना, युद्ध-क्षेत्र से भाग कर वहाँ पहुँचने वाले सैनिक उसके सम्मुख नत-मस्तक हो, उससे कह रहे थे—'हे महाराज! सेनापति प्रहस्त की भाँति महाबली कुंभकर्ण भी युद्ध करते हुये वीर-गति को प्राप्त हुये। उन्होंने अपना अनोखा बल प्रदर्शित कर राम की समूची सेना को मथ डाला, परन्तु राम के तेज के सम्मुख उनका तेज फीका पड़ गया।'

और इस खबर को सुनते ही वह मर्मांतक पीड़ा का अनुभव कर रोने लगा। फिर, वह शोक से सन्तप्त हो, मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसके पुत्र देवान्तक, नरान्तक, त्रिशिरा और अतिकाय अपने चाचा को मरा हुआ सुन, शोक से पीड़ित हो ज़ोर से रोने लगे। अपने सौतेले भाई कुंभकर्ण की मृत्यु का यह समाचार महोदर तथा महापार्श्व को भी बहुत बुरा लगा और वे आँखें फाड़े हुये पृथ्वी की ओर एक टक देखते रह गये। तभी, रावण होश में आने के कारण विलाप कर रोने लगा—हा शत्रुओं के दर्प

का चूर करने वाले महाबली कुंभकर्ण ! मेरे बुरे भाग्य के कारण ही तुम मुझे छोड़ कर चले गये। राम को मारे बिना तुमने मुझे अकेला क्यों छोड़ दिया। भय्या ! तुम्हारे रहते हुये मुझे किसी का भी डर नहीं सताता था। कुंभकर्ण ! तुम्हारे बिना अब मुझे कुछ भी अच्छा नही लगता। तुम्हारे न रहने से अब मैं जीवित भी नहीं रहना चाहता। मैं इसी क्षण अपने प्राणों••• • ••• •।

तभी, त्रिशिरा कहने लगा—'हे राजन ! महा वीर्यवान् चाचा की मृत्यु की बात सुनकर आप इतने अधीर क्यों हो रहे है। हे प्रभो ! आप तो सारे संसार के लिये भी समर्थ हैं, फिर, आप साधारण व्यक्ति की भाँति विलाप क्यों कर रहे हैं। हे महाराज ! आप धैर्य धारण करें ! मुझे आज्ञा दें, मैं युद्ध करने के लिये अभी रण-स्थल को जाता हूँ।'

तो, मानो रावण जी उठा। तभी, त्रिशिरा की बात को सुन कर देवान्तक, नरान्तक और अतिकाय भी युद्ध में जाने के लिये हर्ष प्रकाशित करने लगे। तब, माया विशारद, महाबली, दुर्जय और शत्रु-बल मर्दक उन पुत्रों की यह इच्छा देख कर रावण का रोम-रोम हँस पड़ा। फिर, उसने पुत्रों का आलिंगन कर, आशीर्वाद दे उन्हे रण के लिये विदा किया। महोदर तथा महापार्श्व को कुमारो की रक्षा के लिये उनके साथ में भेजा। और रण-सज्जा से सज कर जब ये वीर लंका से बाहर युद्ध-स्थल की ओर बढ़े तब वह अपने ऊपर वाले कमरे के बड़े झरोखे के उस पार उन्हे जाता हुआ देख सोच रहा था—हे ईश्वर ! कुमारों की रक्षा का भार अब तेरे ऊपर है। धूम्राक्ष, वज्रदंष्ट्र, अकम्पन, प्रहस्त और भाई कुंभकर्ण को तूने मुझसे छीन लिया, मगर तू विश्वास कर, अपने विचारों की रक्षा के निमित्त मे अपना

सब कुछ बलिदान कर दूँगा। फिर भी कुंभकर्ण की याद मुझे रह-रह कर सता रही है। उसके बिना आज मैं स्वयं को बहुत ही निर्बल अनुभव कर रहा हूँ।

और तभी, वह आर्द्र हो रोने-सा लगा। फिर, उसी क्षण उसने सुना—अपने वीरों के सिंहनाद को, और वह कठोर बन कह उठा—महामेघ के समान कुमारो का यह गंभीर गर्जन मुझ से कह रहा है, राम तुझे मिटना ही होगा। कुंभकर्ण को मार कर तूने अपने बल का परिचय दिया है, परन्तु मैं कह रहा हूँ—आज सन्ध्या से पहले ही तुझे इस संसार को छोड़ कुभंकर्ण के देश को जाना होगा। और तभी, उसका कलेजा धक-से रह गया। अगर राजकुमारों का कुछ अनिष्ट हो गया तो? वह कराह उठा। उसके नेत्रों के सम्मुख जैसे सारा भवन घूम रहा हो। मगर एक क्षण के उपरान्त फिर स्वस्थ हो वह सोचने लगा—किसी भी प्रकार हो, विचारों की रक्षा के निमित्त राम को हराना अनिवार्य है—मगर कैसे? आज तक वह यही तो निश्चय नहीं कर सका है। राम की पत्नि सीता का हरण कर उसने समझा था—राम की मृत्यु निश्चित है, परन्तु हनुमान की सहायता ने उसे इस तरह पूरा न होने दिया—साथ ही उसने विभीषण को भी राम का साथी बना दिया। विभीषण! उसके कलेजे मे एक तूफान-सा उठा और उसके नेत्रों में आकर अटक गया। भाई का दुश्मन—कुंभकर्ण का घातक! ओ विभीषण! मै तुझे शीघ्र ही मृत्यु के मुख में झोंक दूँगा।

तभी, उसने सुना—हनुमान के उस गर्जन को; अपनी मुट्ठी के प्रहार से देवान्तक को पृथ्वी पर सुला देने के बाद जो वह सहसा ही कर उठा था। और उस गर्जन से शंकित हो वह काँप उठा। क्षण-भर पहिले वाला वह

भाव न जाने कहाँ जाकर विलीन हो गया। और फिर, अस्थिर स्वर में वह चीख-सा उठा। तभी दूत ने पहुँच कर कहा—'महात्मा अतिकाय अब इस संसार में नहीं हैं। लक्ष्मण ने उन्हें मार डाला। और हे महाराज! देवान्तक त्रिशिरा आदि सभी कुमार मारे गये।' इतना कह वह दूत सहसा ही बड़ी ज़ोर से रो पड़ा। और रावण, कुंभकर्ण की मृत्यु से अधीर हुआ रावण मूर्छित हो पृथ्वी पर लुढ़क गया। तभी, मेघनाथ ने दौड़ कर उसे सँभाला—और कुछ काल पर्यन्त होश में आने के बाद जब उसने पुत्र की ओर देखा तो मेघनाथ कहने लगा—'हे तात! जब तक मैं जीवित हूँ, तब तक आपको दुख नहीं करना चाहिये। हे महाराज! आपको ज्ञात है, मेरे बाणों से घायल होने पर कोई भी वीर फिर जीवन का स्वप्न नहीं देखता। आज मैं आपसे शपथ-पूर्वक कहता हूँ, कुछ ही देर के बाद आप देखेंगे—राम और लक्ष्मण दोनों ही मेरे बाणों से बिंध कर पृथ्वी पर सो रहे हैं। उनके मृत सैनिकों से सारा रण-स्थल पटा हुआ है। चाचा विभीषण का रूप कुरूप हो गया है। मैं सत्य कहता हूँ, भेद देकर इन वीरों को मरवा डालने वाले मेरे उस चचा को मृतावस्था में आप पहिचान सकने में भी असमर्थ होंगे। अब आप स्वस्थ होकर मुझे आशीर्वाद दीजिये।'

अपने पुत्र के इन शब्दों को सुन रावण के प्राण मानो लौट आये हों। वह उठकर खड़ा हो, पुत्र को अपने आलिंगन में कस, उसके माथे को चूम उससे कहने लगा—'तुम्हारी वीरता में मेरा अडिग विश्वास है। मगर अपने वीरों का इस प्रकार समाप्त होते जाना मुझे अच्छा नहीं लगता। निराशा, न जाने क्यों मेरे मन में अपना घर बनाती जा रही है। मैं राम का जीवित रहना अब और अधिक सहन करने में असमर्थ हूँ। तुम जाओ,

बेटे ! मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है।' इतना कह उसने पुत्र के माथे को एक बार फिर चूमा और तब प्रणाम कर युद्ध-स्थल को जाते हुये मेघनाथ की पीठ को वह अपलक नेत्रों से देखने लगा।

और जब अरिंदमन, महातेजस्वी इन्द्रजीत युद्ध-स्थल में पहुँच अपने महामूल्यवान रथ में बैठा हुआ अपने सैनिकों से कह रहा था—'हे वीरो ! राम के सैनिकों का आज तुम हर्ष के साथ वध करो।' और उसके इतना कहते ही जब उसके सैनिकों ने तीक्ष्ण वाणों, तोमर और अकुंशों से राम के सैनिकों को मारना शुरू कर दिया—तब, वह अपने सिंहासन पर बैठा हुआ सोच रहा था—मेरे पुत्र इन्द्रजीत ने जब राघवों को नागपाश में बाँध लिया था—उस नागपाश में, जिसमें बँधा हुआ कोई भी प्राणी कभी मुक्त न हो सका, परन्तु मेरी समझ से यह परे की वस्तु है कि राम और लक्ष्मण किस माया अथवा मोहिनी के प्रभाव से बन्धन-मुक्त हो सके। मेरी आज्ञा से जो भी वीर अब तक राम के साथ युद्ध करने के लिये गया, वही सुग्रीव, विभीषण, हनुमान की सहायता से राम और लक्ष्मण के द्वारा मार डाला गया—आखिर, ऐसा क्यों ? फिर, कुंभकर्ण की मृत्यु मुझे एक दम निराश किये दे रही है। बहुत से युद्धों का विजेता कुंभकर्ण—जिसके सम्मुख कभी कोई ठहर भी न सका—फिर, राम द्वारा वह मार डाला गया। और वह तड़प उठा। फिर, अपने सामने खड़े हुये सैनिकों से कहने लगा—'वीरो! अशोक-वाटिका और पुरी की रक्षा बड़ी सावधानी के साथ करो। गमनागमन के मार्गों की भी भली प्रकार से देख-रेख रखने की जरूरत है। पहरे पर तैनात प्रत्येक सैनिक से मेरी इस आज्ञा को कहो—अब तुम जा सकते हो।'

इस प्रकार उन सैनिकों को आज्ञा दे, चिन्ता के दहकते हुये समुद्र में गोता खाता हुआ वह सोचने लगा--मेघनाथ के रूप में मेरा यह पुत्र, वास्तव में, मेरे लिये वरदान बन कर मेरे यहाँ उत्पन्न हुआ है। मेघनाथ ने ही मुझे इन्द्र के चंगुल से मुक्त कर उसे उसी क्षण बाँध लिया था। और वह हारी हुई बाजी दरअसल मैं मेघनाथ की बदौलत ही जीत सका था। फिर, राम को हरा देने का श्रेय भी मेघनाथ को ही मिलना है, मुझे यही जान पड़ता है। और वह आनन्द मे भर नाच उठा। फिर कुछ ही क्षणों के उपरान्त, सुग्रीव, अंगद, नील, शरभ, सुषेण मैन्द, नल, ज्योतिर्मुख, गन्धमादन और द्विविद को मार, राम की समूची सेना को मृत्यु के मुख में झोंक—साथ ही राम और लक्ष्मण को भी पृथ्वी पर सुला, जब, अरिंदमन मेघनाथ ने पिता के समीप पहुँच यह वृतान्त कहा तो उस समय वह अपार खुशी में भर कैसा कुछ हो गया—क्या कुछ सोचने लगा, वह स्वयं भी नहीं जानता था।

और जब मृतप्राय: जाम्बवान रण स्थल में पड़ा हुआ हनुमान से मृत-संजीवनी, विशल्यकरणी, सुवर्णकरणी और सन्धानी नाम वाली औषधियों के विषय में कह रहा था, उस समय रावण आज बहुत दिनों के बाद मन्दोदरी को अपने आलिंगन में कस मीठे स्वप्न देख रहा था। और जब हनुमान के द्वारा लाई गई उन औषधियों से मरे हुये और अध-मरे राम के सभी सैनिक राम, लक्ष्मण सहित जीवित हो उठे, उस समय उसके बन्धन भी ढीले पड़ गये मगर अभी भी वह सो रहा था, मीठी नींद में—मीठे स्वप्न देखता हुआ—अभी भी अस्त व्यस्त हुई मन्दोदरी उसके पास पड़ी थी।

मगर लोगों की चीख-पुकार, गर्जन-तर्जन, घोड़ों की हिनहिनाहट और हाथियों की चिंघाड़ से वह चौंककर जाग उठा। खुली हुई छत पर पहुँच कर

उसने देखा—लङ्का में चारो ओर भयङ्कर आग लगी है, जिसमें सभी कुछ भस्म हुआ जा रहा है। राम के सैनिक अपने हाथों मे धधकती हुई उल्काओ को ले लंका को भस्मीभूत कर देने के लिये इस कार्य मे प्राणपण से जुटे हैं। और यह देख क्रोध उसमें सहसा ही प्रवेश कर गया—तब, साक्षात् क्रोध के रूप में रावण, कुंभकर्ण के पुत्र कुंभ और निकुंभ को देख उनसे कहने लगा—पुत्रो! अपने साथ में बहुत से सैनिकों को ले तुम दुश-मनों को काट डालो।' और क्षण-भर के उपरान्त ही फिर महाभयंकर युद्ध होने लगा।

और जब अद्भुत बल प्रदर्शित कर कुंभ और निकुंभ राम के सैनिकों को लंका से दूर खदेड़ रहे थे, वह सोच रहा था—पुत्र मेघनाथ के बाणों का प्रभाव ये किस उपाय के द्वारा दूर कर देते हैं? मर कर भी जी उठते हैं—आखिर, किस तरह? राम के तेज के सम्मुख मेरे वीरो का तेज फीका पड़ जाता है—मगर क्यों? मेरे जीवित रहते हुये, अयोध्या के राजा अन-रण्य के वशज का यह साहस कि वह मेरे घर मे आग लगादे और मैं उसका कुछ भी न बिगाड़ सकूँ! उफ! और वह स्वय से घृणा मान उठा। तभी, दूत ने वहाँ पहुंच उससे कहा—'महाराज! वीरो में श्रेष्ठ कुंभ और निकुंभ अब संसार मे जीवित नहीं हैं।' और दूत से इतना सुनते ही जैसे उसमें आग लग गई। सामने खड़े हुये विशाल नेत्रों वाले खर के पुत्र मकराक्ष से वह कहने लगा—'हे पुत्र! तुम मेरी आज्ञा से सेना को साथ मे लेकर इसी समय युद्ध करने के लिये जाओ और सेना-सहित राम, लक्ष्मण को मार डालो।'

और रावण की इस आज्ञा को सुन मकराक्ष आनन्द मे भरकर बोला-

'जो आज्ञा, श्रीमान् !' फिर, उसने माननीय श्रीमान् दशकंधर को प्रणाम किया और उसकी प्रदक्षिणा कर भवन से बाहर निकल आया। और जब सेना सहित रण-स्थल में जा पहुंचा तो सैनिकों को सम्बोधित कर वह कहने लगा—'मुझे राजराजेश्वर महात्मा रावण ने आज्ञा दी है कि मैं आज सेना सहित राम-लक्ष्मण को मार डालूँ। हे वीरो! आज तुम उत्साह में भर कर युद्ध करो। परस्पर होड़ बदकर दुश्मनो को काटो—राम-लक्ष्मण को मार डालो।' और उसके इस कथन के समाप्त होते ही शङ्ख और नगाड़ो के शोर के बीच वीरों का सिंहनाद और अस्त्रो की झंकार सुनाई देने लगी। भयङ्कर युद्ध प्रारम्भ हो गया।

राम के सैनिकों को मारकर जब मकराक्ष के सैनिक निरन्तर आगे बढ़ रहे थे तो राम ने आगे बढ़कर बाणों की बौछार कर सहसा ही उनकी गति को अवरुद्ध कर दिया—यह देख मकराक्ष आगे बढ़, राम के समीप पहुँच उससे कहने लगा—'हे राम! अपने स्थान पर खड़ा होकर तू मेरे साथ आज द्वन्दयुद्ध कर! दुरात्मा राम। जब से तूने मेरे पिता का बध किया है, तब ही से क्रोध के कारण मेरे सारे अंग जल रहे हैं। आज भाग्यवश तू मेरे सम्मुख पड़ गया हैं। तीक्ष्ण बाणो की सहायता से आज निश्चय ही मै तेरा बध कर डालूँगा। ले, अब मेरे कठिन बाणों के प्रहार को तू सहन कर।' और इतना कहकर वह राम के ऊपर फिर बाणों की वर्षा-सी करने लगा।

तब, वह स्वर्ण के बने हुये पलँग पर पड़ा हुआ बड़ी बेचैनी से करवटें बदल रहा था। वह निश्चय नहीं कर पा रहा था—राम को मार डालने के लिये वह और किस उपाय का अवलम्बन करे! और तभी, उसके मन

ने उससे कहा—इतने युद्धों के विजेता रावण, मगर, तू इतना अधीर क्यों हो उठा है ? माना, राम ने तेरे अनेक वीरों को मार डाला, लेकिन, क्या हुआ ? इन्द्रजीत जीवित है और तू स्वयं भी तो। झोपड़ियों में उत्पन्न होकर तूने अपने बल के सहारे सारे संसार को जीता—फिर, आज क्या तुझे स्वयं में भी विश्वास नहीं रह गया है ? पागल मत बन, दशकंधर! अपने उद्देश्य के निमित्त अगर तू मारा भी गया—तो, क्या हुआ ? तेरे पवित्र विचारों की पूजा संसार अपने अन्त समय तक करेगा—तू विश्वास कर। फिर, अमर होने की अभिलाषा क्यों ? बुढ़ापे के कारण जर्जर हुये इस शरीर से इतना मोह क्यों ? बार-बार जन्म ग्रहण कर चिर नूतन बनो—हँसो दशकंधर! और तब वह खिलखिला कर हँस पड़ा।

और दूसरे ही क्षण उसे जब मकराक्ष के मरण का समाचार मिला तो वह बड़े भारी क्रोध में भर अपने दाँतों को कटकटाने लगा। फिर, मेघनाथ को बुलवाकर वह कहने लगा—'हे पुत्र! राम लक्ष्मण को मार डालने में तुम पूर्ण रूप से समर्थ हो। तुम इसी समय जाकर राघवों का वध करो। अब राम और लक्ष्मण का जीवित रहना मुझे बहुत अधिक कष्ट दे रहा है। मगर अबकी बार जब तुम युद्ध-भूमि से लौटो तो इस बात पर विशेष रूप से ध्यान देना कि वे दोनों भाई वास्तव में मर गये हैं या तुमने उन्हें मरा हुआ समझकर छोड़ दिया है और दर असल वे जीवित है।'

और अपने पिता की इस आज्ञा को शिरोधार्य कर मेघनाथ तुरन्त ही भवन से बाहर निकल आया। विधिपूर्वक होम करने के पश्चात् फिर वह अपनी सेना को साथ में ले रण-स्थल में जा-पहुँचा। और जब वह अन्तर्धान होकर राम और लक्ष्मण के ऊपर बाणों की अविरल वर्षा करने लगा—उस

समय रावण सोच रहा था—वीरों की ये आहुतियाँ निष्फल न होंगी। मुझे विश्वास होता है, आज मेघनाथ राम और लक्ष्मण को वास्तव में मार कर ही मेरे पास लौटेगा। वह बहुत-सी मायाएँ जानता है। तभी, उसका मन उससे कहने लगा—तब भी तो तुम चिन्ता करते हो, दशकंधर! फिर, तुम तो जीवनभर जूझे हो। जब तुम्हें दूसरों को मारना अच्छा लगता है—तो, अपनों के मरने में भी आनन्द का अनुभव करो। तब, दुःख कैसा? विषाद क्यों? वीर तो मरकर भी जीते हैं—उनकी मृत्यु कहाँ? वीर को वीर के मरने पर क्रोध होता है—दुःख नहीं! इसलिये तू अपने दुश्मन राम पर क्रोध कर—अपने पुत्र या सेनापति की मृत्यु पर दुःख नहीं।

और दूसरे दिन जब मेघनाथ ने अपनी ओर आते हुये हनुमान को दिखाकर माया की सीता का वध कर डाला—फिर, अपनी इस सफलता के कारण उसने प्रसन्न होकर गर्जना की—तो, उसकी इस आवाज को सिंहासन पर बैठे हुये रावण ने भी सुना और वह प्रसन्नता से उछल पड़ा। तब, कुछ ही क्षणों के उपरान्त एक दूत ने वहाँ पहुँचकर उससे कहा—'हे महाराज! माया की सीता का वध कर महाबली मेघनाथ ने राम को भ्रम में डाल पृथ्वी पर सुला दिया है। और इस प्रकार अचेत होकर भूमि में पड़े हुये राम से लिपट कर लक्ष्मण विलाप कर रहा है। हनुमान उनके पास में खड़ा रो रहा है। आपके पुत्र वीरवर मेघनाथ युद्ध में जीतने की अभिलाषा से होम कर रहे हैं।'

दूत के इन वचनों को सुनकर रावण वास्तव में नाच उठा। तभी, एक दूसरे दूत ने वहाँ पहुँचकर उससे कहा—'हे महाराज! लंका के सिंहासन के लोभी विभीषण ने महाराजकुमार इन्द्रजीत की सफलता को धूल में मिला दिया है। उसने भेद खोलकर राम को स्वस्थ किया है। फिर, यज्ञ करते हुये

महाबली मेघनाथ पर वे सभी चढ़ दौड़े हैं। कुल का नाश करने वाला विभीषण भी उनके साथ है। वह राम के छोटे भाई लक्ष्मण को साथ में लेकर इन्द्रजीत के साथ युद्ध कर बहुत सुख पारहा है।'

और इतना सुनते ही रावण के शरीर में आग-सी लग गई। मगर तभी, उसने सोचा—आज निश्चय ही विभीषण की मृत्यु का समाचार मुझे सुनने को मिलेगा। मेघनाथ के सम्मुख पड़कर वह कभी भी, जीवित नहीं लौट सकता—और इस विचार ने जैसे उसे शीतल जल के छींटे दे दिये हों। तब, वह शान्त और स्थिर हो सोचने लगा—मेघनाथ का बल अतुल है। वह निश्चय ही युद्ध में सबको मारकर मेरे पास लौटेगा। और यही सब सोचता विचारता वह वहाँ से उठ अपने महलों की ओर चला गया। रात्रि के झिलमिले प्रकाश में मन्दोदरी का स्पर्श उसमें एक नई शक्ति, नया जीवन और एक नये संसार की सृष्टि कर देता था।

मगर दूसरे दिन जब वह सोकर उठा तो आज वह ऐसा कुछ भी अनुभव न कर सका। इसके विपरीत आज उसका मन बहुत ही खिन्न और उदास था। जीवन नीरस-सा प्रतीत होता था। मेघनाथ को लड़ते हुये आज दो दिन और तीन रात व्यतीत हो चुकी थीं, परन्तु वह अभी भी अपना कर्म पूर्ण करके वापिस नहीं लौटा था। वह सोच रहा था—आज भी वह अपना काम पूरा कर सकेगा या नहीं? घर का भेदी विभीषण दुश्मनों से जा मिला है, इसीलिये पुत्र का कोई भी उपाय सफल नहीं हो पा रहा है। तभी, वह चीख-सा उठा—विभीषण! और उसकी मुट्ठियाँ कस गई। मगर वह उदास होकर कुछ सोचता-सा रह गया। तभी, उसके मन्त्रियों ने वहाँ पहुँच कर उससे कहा—'हे महाराज! हमने देखा है कि लक्ष्मण ने विभीषण की सहा-

यता से आपके महाकान्तिमान पुत्र मेघनाथ को युद्ध में मार डाला है। लक्ष्मण को अपने बाणों से तृप्त करने के अनन्तर महाबली मेघनाथ अन्त में उत्तम लोकों को चले गये।'

और यह सुनते ही मानो उसका दम निकल गया हो, वह तत्काल मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पडा। अनेक प्रकार के उपचार करने के उपरान्त जब वह होश में आया तो विलाप कर कहने लगा—हे पुत्र! तुम्हारा बल तो असीम था। तुम्हारे क्रुद्ध होने पर तो कोई तुम्हारे सम्मुख खड़ा भी नहीं हो सकता था—फिर लक्ष्मण की क्या बिसात थी? हा पुत्र! आज तुम युवराज-पद, लंका, माता-पिता और अपनी सहधर्मिणी को छोड़कर किस ओर चले गये! राम जीवित है और दुष्ट विभीषण भी—मगर तुम कहाँ हो?

इस प्रकार बहुत देर तक विलाप करते हुये अन्त में उसे क्रोध हो आया। स्वभाव से ही क्रोधी रावण का क्रोध फिर अपनी चरम-सीमा पर जा पहुंचा। तब उसने सोचा, जिस जानकी के कारण यह सब कुछ हुआ है, क्यों न वह उसे ही समाप्त करदे? और तभी, वह क्रोध के कारण जलती हुई आँखों से चारों ओर देखता हुआ अपने मन्त्रियों से कहने लगा—'राम और उसके सैनिकों को मोह में डालने के लिये पुत्र ने माया की सीता का वध करके दिखलाया था, परन्तु मैं वास्तविक सीता को मारकर अपना प्रिय कार्य करूँगा।' और मन्त्रियों से इस प्रकार कहने के उपरान्त उसने शीघ्रता से पास में रक्खी हुई तलवार को उठा लिया। फिर, वह उस गुणवती तलवार को म्यान से बाहर कर। उसे दमकाता-चमकाता अशोक वाटिका की ओर बड़ी तेजी के साथ चला।

और जब अशोक-वाटिका में पहुँच उसने सीता के वध के निमित्त

अपनी तलवार को ऊँचा उठाया—तभी, साहस कर सुपार्श्व नाम वाला उसका मन्त्री हाथ जोड़कर उससे कहने लगा—'हे महाराज ! आप क्रोध के वशीभूत होकर धर्म के विरुद्ध यह कार्य क्यों करना चाह रहे हैं ? आपने वेदों को पढ़ा है, आप अपने धर्म में परायण रहकर सदा धर्म का पालन करते रहते हैं, फिर भी, स्त्री के वध को किस प्रकार उचित समझते हैं ? हे राजन ! डर के कारण थर-थर काँपती इस सीता को आप क्षमा कीजिये और अपना यह क्रोध उस राम पर ही उतारिये, जिसने यह सब कुछ कर दिखया है। आज कृष्ण-पक्ष की चौदस है—आज आप युद्ध का आयोजन करें और कल अमावस्या को युद्ध-यात्रा ! आप जैसे वीर और बुद्धिमान शूर के लिये यही शोभा की बात हो सकती है।'

और अपने मन्त्री के इन वचनों को सुन वह उसी क्षण अपने महलों की ओर लौटा—युद्ध के आयोजन के निमित्त, राम के साथ युद्ध करने के लिये !

: इक्कीसवाँ अध्याय :

: रावण और राम का अन्तिम युद्ध :

अपने विचारों की रक्षा के निमित्त, सेनापतियों, भाई कुंभकर्ण, पुत्र मेघनाथ की मृत्यु का बदला लेने के लिये, दुष्ट और धोखेबाज विभीषण को उचित दंड देने की गरज़ से—राम के साथ अन्तिम युद्ध की तैयारियाँ सारी रात चला कीं—और जब प्रातःकाल महोदर, महापार्श्व और विरुपाक्ष इस विषय मे उसकी अन्तिम आज्ञा प्राप्त करने के लिये उसके सम्मुख पहुंचे तो मृत्यु की समान क्षुब्ध हुआ वह उनसे कहने लगा—'वीरो। संघर्ष ही जीवन है और शान्ति—मृत्यु, इसीलिये हमने जीवन में संघर्ष को प्यार किया है। मनुष्य की रुचि का बिल्कुल भी ख़्याल किये बिना, समाज मे औंधी-सीधी व्यवस्था कायम कर, स्वयं को ईश्वर तक कहलवाने का दावा करने वाले, धर्म के इन ठेकेदारों के साथ हमने अब तक अनेक युद्ध किये हैं और सर्वदा ही इनको परास्त किया है। वर्तमान युद्ध भी ठीक वैसा ही है। यह माना कि इस युद्ध म हमने अपने लगभग सभी वीरों को खो दिया है; परन्तु क्या इसी कारण हम अपने प्राणों का मोह करें? कठिनता से जीते जाने वाले दुश्मन राम के साथ संधि कर अपने पवित्र उद्देश्य को भूल जायें? मैं जानता हूं, संसार की सभी शक्तियाँ इस समय दशरथनन्दन राम का पूर्ण-रूपेण साथ दे रही है। तभी तो वह मरकर भी जीवित हो उठता है—परन्तु हम भी अपने मार्ग पर बराबर आगे बढ़ते रहेंगे। ठिठककर

खड़े हो जाना या मुड़कर पीछे लौटना यह हमारी कायरता होगी—और हम कायर बनकर अपनी वीरता को कलंकित नहीं कर सकते। साथियो! आगे बढ़ो! और पवित्र उद्देश्य की रक्षा के निमित्त अपना सब कुछ उत्सर्ग करदो।'

महोदर, महापार्श्व और विरूपाक्ष का इस प्रकार आह्वान कर तब वह अपनी जयजयकार की ऊँची उठती आवाज के बीच सिंहद्वार की ओर चला और दिव्य अस्त्रों से भरे हुये, अनेक प्रकार के अलंकारों से सुशोभित, सुवर्ण के हजारों कंगूरों से सजे हुये और अग्नि के समान दमकते हुये आठ घोड़ों के द्वारा खींचे जाने वाले, तेज से सम्पन्न रथ में आकर बैठ गया। तब, अनगिनती शूर-वीरों से घिरकर महाबली रावण युद्ध-स्थल की ओर चला। मृदङ्ग और शंख बज उठे। वीरों के कोलाहल से वायु-मंडल कांपने लगा। मिट-गये वीरों के लिये रोती हुई लंका के आँसू सहसा ही रुक गये। सिसकती लंका में मानो जीवन लौट आया हो। तब, उसने अपने आँसुओं को पोंछ आर्द्र-कंठ से उसकी जयजयकार की और फिर वह स्वर और भी तीव्र हो उठा। आज सहसा ही सबको विश्वास हो चला—हमारे पुत्रों, भाइयों और पतियों का बदला राम से चुक जायेगा। आशा की इसी ज्योति को अपने हृदय में जगाये समूची लंका उसके पथ में खड़ी थी और वह एक अनोखी प्रतिभा से प्रदीप्त हुआ, फनफनाते रथ में बैठा तीव्रगति से रण-स्थल की ओर जा रहा था।

और इस प्रकार चलता हुआ जब वह रण-मुहाने पर पहुँचा तो ऊँची आवाज में अपने साथ के उन हजारों लाखों वीरों से वह कहने लगा—'आज मैं निश्चय ही अपने तीक्ष्ण बाणों की सहायता से राम, लक्ष्मण और विभी-

षण का वध कर रोती हुई लंका के आँसुओं को पोंछ डालूँगा। आज तुम स्वयं देखोगे वीरो! पुत्र मेघनाथ का अधूरा रह गया वह कार्य अब उसके पिता के द्वारा पूर्ण होगा। आज तुम गहरे विश्वास के साथ युद्ध कर दुश्मनों को काट डालो—ध्यान रक्खो, एक भी दुश्मन बचकर भागने न पाये। आज मैं भी युद्ध में सभी को विदीर्ण कर उनको मार कर बिछा दूँगा। आगे बढ़ो, धीरो! और तुरन्त ही युद्ध प्रारम्भ कर दो।'

उसके इस कथन के समाप्त होते ही क्रोध में भरे हुये वे वीर फिर आगे बढ़ राम की सेना पर टूट पड़े। कुछ ही क्षणों के उपरान्त सोता हुआ रण-स्थल मानो जाग उठा। अब वहाँ पर चारों ओर शंखों का गंभीर घोष, अस्त्र शस्त्रों की झंकार, वीरों का चीत्कार और पिट-छित् कर गिरने वाले सैनिकों का हा-हा कार ही सुनाई देता था। उस समय दशकंधर क्रोध में भर अपने तीक्ष्ण बाणों से राम की सेना का संहार बड़ी तेजी के साथ कर रहा था। वास्तव में, उसने पलक मारते ही राम के कितने ही सैनिकों के सिर काट डाले; बहुतों के नेत्रों को फोड़ डाला, अनेकों के हृदय फाड़ डाले, कुछों की पसलियाँ तोड़ डालीं—और इस प्रकार अपना मार्ग बनाता हुआ वह राम की ओर बड़ी तेजी के साथ बढ़ने लगा। उस समय वह राम के साथ युद्ध करने के लिये बहुत ही आतुर दीख-पड़ रहा था। उसके साथ के वे सैनिक भी अपने प्राणों का कुछ भी मोह न कर पागल से बन युद्ध कर रहे थे। राम की सेना में चारों ओर हा-हा कर मचा हुआ था। तब डर कर राम के सैनिक इधर-उधर भागने लगे। यह देख सुग्रीव को बहुत कोध आया और वह एक वृक्ष को अपने हाथों में सँभाले रावण के सैनिकों पर टूट पड़ा। फिर, भयंकर सिंहनाद करता हुआ वह दुश्मनों को सहसा ही

मारकर पृथ्वी में सुलाने लगा। अब उसके अपने बहुत से सैनिक भी उसका साथ दे रहे थे। तब, पत्थरों की वर्षा सह न सकने के कारण रावण के बहुत से सैनिक मारे गये अथवा रण-स्थल को छोड़कर भाग गये—तो, विरूपाक्ष अपना नाम घोषित कर आगे आया। उसने अपने रथ को छोड़ दिया और धनुष को हाथ में ले वह एक हाथी पर चढ़ गया। फिर, उसने सुग्रीव पर अनगिनती बाण छोड़े—और इस प्रकार व्यथित हुआ सुग्रीव फिर चीख उठा। मगर दूसरे ही क्षण असीम क्रोध में भर उसने एक वृक्ष उसके हाथी के शीश पर दे मारा और वह हाथी आर्त्तनाद कर बैठ गया। यह देख वीर्यवान् विरूपाक्ष तुरन्त ही हाथी पर से कूद पड़ा और तलवार खींच सुग्रीव पर झपटा। मगर इतने ही कि सुग्रीव पर वह अपनी तलवार का वार करे, सुग्रीव ने एक शिला उसकी ओर फेंक उसका ध्यान भंग कर दिया। लेकिन रणचतुर विरूपाक्ष भी कूद कर उछल गया—सुग्रीव द्वारा फैंकी गई वह शिला उससे दूर जाकर गिरी और उसकी तलवार सुग्रीव के ऊपर! तो, सुग्रीव का कलेजा हिल-सा गया। उसने भीषण क्रोध में भर पास में पड़ी हुई एक शिला को उठा लिया और उसे विरूपाक्ष के माथे पर दे मारा। माथे में उस शिला के लगते ही विरूपाक्ष पृथ्वी मे गिर पड़ा। क्रोध और रक्त से भरे हुये उसके दोनों नेत्र पथरा गये और वह रक्त में भीग दूसरे लोक को चला गया।

विरूपाक्ष को मरा हुआ सुन रावण का क्रोध फिर और आगे बढ़ा। तब, वह पास में रह कर युद्ध कर रहे महोदर से कहने लगा—'हे वीर! शत्रु की सेना में तुम आगे बढ़ो और पराक्रम प्रदर्शित कर दुश्मन को काट डालो। यह वह समय है, जब, हमें अपने विचारों की रक्षा के लिये,

जीवन का मोह छोड़कर लड़ना होगा। अतः भली प्रकार युद्ध करो—आगे बढ़ो।' महोदर से इतना कह फिर वह दूने वेग के साथ युद्ध करने लगा। और तेजस्वी महोदर उसके इस वाक्य से आवेश में भर बल पूर्वक शत्रु की फौज में आगे बढ़ा। वह अपने कठिन-कठोर बाणों की सहायता से दुश्मनों के हाथ पैर और जंघाओं को काटने लगा। बाणों को बरसाता हुआ वह जिधर भी निकल जाता—उधर ही राम के सैनिक भाग छूटते। उन्हें मरने से डर नहीं लगता था, परन्तु उन्हें तड़पना बुरा लगता था। यह देख तेजस्वी सुग्रीव का रक्त खौल उठा। उसने आगे बढ़ एक शिला महोदर के ऊपर फैंकी, परन्तु रण-चतुर महोदर ने अपने बाणों की सहायता से उस शिला को मार्ग ही में काट डाला—और तब वह शिला खंड खंड हो पृथ्वी में गिर पड़ी—तो, सुग्रीव का क्रोध फिर और भड़का और अबकी बार उसने एक वृक्ष उसकी ओर फैंका। परन्तु उसने उस वृक्ष के भी बहुत से टुकड़े कर अपने विरोधी सुग्रीव को अचम्भे में डाल दिया। तभी, सुग्रीव ने चमकते हुये, पृथ्वी में पड़े, किसी मृत सैनिक के परिघ को देख उसे उठा लिया और कठिन क्रोध के वशीभूत हो उग्रवेग वाले उस परिघ को घुमा उसकी ओर फैंका—तभी, महोदर ने देखा, सुग्रीव द्वारा फैंके गये उस परिघ ने उसके घोड़ों को काट डाला है और वह रथ से कूद पड़ा। फिर, बड़ी भारी गदा को ऊपर उठाये वह सुग्रीव पर झपटा और तब, घुमाकर उस गदा को उसकी ओर फैंक दिया; परन्तु सुग्रीव उछलकर एक ओर हट गया और गदा पृथ्वी पर गिरकर शान्त हो गई। तेजस्वी सुग्रीव ने तब स्वर्ण से मढ़ा हुआ एक मूसल उठा उसकी ओर फैंका और महोदर ने उसी क्षण उसकी ओर एक गदा—मगर तभी दोनों ने देखा,

मूसल और गदा मार्ग ही में एक दूसरे से टकराकर दोनों टूक-टूक हो पृथ्वी में गिर पड़े हैं। तब, अग्नि के समान तेज वाले वे दोनों वीर मुष्टि-युद्ध करने लगे; परन्तु इस प्रकार लड़ते-लड़ते जब वे थक गये—तो, दोनों ने ही पृथ्वी में पड़ी हुई एक-एक तलवार उठा फिर खड्ग युद्ध प्रारम्भ कर दिया। और तभी सबने देखा—महोदर ने अपनी तलवार को सुग्रीव के कलेजे में बड़ी बेरहमी के साथ भौंक दिया है, परन्तु उसकी तलवार सुग्रीव के कवच में अटक गई है और वह उसे निकाल नहीं पा रहा है और दूसरे ही क्षण सुग्रीव ने तलवार के एक ही वार में उसके सिर को काटकर पृथ्वी में गिरा दिया। यह देख रावण के सैनिक भागने लगे और राम के सैनिक अट्टहास कर उठे—तब, राम खिल उठा और दशकंधर क्रोध के कारण जलने लगा।

तब महाबली महापार्श्व गंभीर गर्जना कर आगे आया। क्रोध के कारण उसके नेत्रों से आग-सी निकलने लगी। और वह सामने पड़ गई अंगद की सेना पर भूखे सिंह की भाँति टूट पड़ा। अंगद की अधीनता में लड़ने वाले उन सैनिकों पर बाणों की बौछार कर वह उन्हें मार-मार कर पृथ्वी में सुलाने लगा--तब, बहुत-से सैनिक युद्ध से विमुख हो इधर-उधर भागने लगे। यह देख अंगद ने पास में पड़ा हुआ परिघ उठा लिया और बड़े वेग से उसे घुमाकर उसकी ओर फेंका। उस समय महापार्श्व का ध्यान उस ओर बिल्कुल भी न था और वह उस परिघ के लगते ही बेहोश होकर गिर पड़ा। तभी, महाबली जाम्बवान् ने शिला का प्रहार कर उसके सारथि और घोड़ों को मार डाला। फिर, कुछ ही क्षणों के उपरान्त जैसे ही महापार्श्व को होश हुआ, उसने क्रोध में भर अनगिनती

बाणों के द्वारा अंगद को बुरी तरह से बींध डाला—उसी समय उसने तीन बाण जाम्बवान् के वक्ष-स्थल में मारे और गवाक्ष भी उसकी मार से न बच सका। यह देख अंगद क्रोध के कारण जलने लगा और उसने एक दूसरा परिघ पृथ्वी में से उठा उसकी ओर फैंका। उस परिघ की चोट से उसका धनुष हाथों में से छूट जमीन पर गिर पड़ा—यह देख प्रतापवान अंगद फिर उसकी ओर दौड़ा और उसके मुख पर थप्पड़ मार बहुत सुख पाया। तब, महाकान्तिमान् और महावेगवान् महापार्श्व ने क्रोध में भर एक बड़ा भारी फ़रसा अपने हाथों में उठा लिया और उस चमकते-दमकते हुये फ़रसे को अंगद के बाँए कन्धे पर दे मारा, परन्तु अंगद खिसक कर उसके उस दाव को उका गया। फिर, पराक्रमी अंगद ने एक शिला उठा कर उसके वक्षः स्थल में दे मारी और तभी, उसने देखा— महापार्श्व का कलेजा फट गया है और वह मर कर पृथ्वी में गिर पड़ा है। तो, अंगद की समूची सेना सिंहनाद कर रण-स्थल को गुंजाने लगी।

और इस बड़े भारी सिंहनाद को सुन महाबली रावण क्रोध में भर सारथि से कहने लगा—'मैं राम का वध कर लंका के दुख को दूर कर दूंगा। आज युद्ध में सुग्रीव, हनुमान, लक्ष्मण, अंगद आदि सभी योद्धाओं को मार राम से मैं अपने मंत्रियों की मृत्यु का बदला लूंगा। इसलिए, तू मेरे रथ को शीघ्रता से राम के पास ले चल।' और तब उसका वह अलौकिक रथ दिशाओं को गुंजाता राम की ओर दौड़ा। फिर, उसके बूढ़े शरीर में जैसे जवानी लौट आई हो—वह वेग पूर्वक चारों ओर बाणों की वर्षा कर राम के सैनिकों को त्रस्त करता हुआ आगे बढ़ने लगा। झंझा में जिस प्रकार धूल उड़ कर बहुत दूर पहुँच

जाती है—उसी तरह राम के सैनिक भी उसके बाणों का वेग सह न सकने के कारण इस उस ओर न जाने किस ओर चले गये—और जिस प्रकार अटल खड़ी हुई चट्टान पर उस आँधी का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ पाता—उसी तरह फिर उसने राम को अपने सम्मुख खड़ा हुआ देख साथ में लक्ष्मण को भी खड़ा हुआ देखा।

और कुछ ही क्षणों के उपरान्त लक्ष्मण ने रावण को अपने सम्मुख देख उस पर बाणों की अविरल वर्षा प्रारम्भ की; परन्तु तभी उसने यह भी देखा कि उसके सभी बाणों को रावण ने मार्ग ही में रोक कर निष्फल कर दिया है। लक्ष्मण भौचक्का-सा-हो यह देख ही रहा था, कि रण-विजयी दशकंधर उसे लाँघ कर उससे कुछ ही दूर पर खड़े हुए राम के समीप जा पहुंचा। तुरन्त ही फिर वह राम के ऊपर बाणों की बौछार करने लगा। मगर राम ने शीघ्रता से भल्ल नामक बाणों को छोड़ कर उसके सर्प के समान भयंकर बाणों को काट डाला। फिर अरिदमन राम उसके ऊपर और वह राम के ऊपर बाणों की बौछार करने लगा। दोनों ओर से इस प्रकार निरन्तर बाण फेंके जाने के कारण थोड़ी ही देर में आकाश ढक गया—सूरज छिप गया—तब, पृथ्वी गहरे अन्धकार से भर उठी। और उस समय वे दोनों वीर एक-दूसरे का वध करने की प्रबल इच्छा को हृदय में दबाये परस्पर भयंकर युद्ध करने लगे। वे दोनो ही चतुर धनुर्धारी, युद्ध-विशारद और वीरों में श्रेष्ठ थे। उस समय रण स्थल में विचरण करते हुए वे जिस ओर भी निकल जाते थे—उस ओर का सब कोई बहुत दूर, वहाँ से बहुत दूर हट जाता था—फिर, बहुत दूर पर खड़ा हुआ वह देखता था—उस ओर पृथ्वी और आकाश को छूती हुई

तुरन्त ही शर-धारा बह निकलती है। और उस शर-धारा को लांघकर उस समय कोई भी उनके समीप नहीं पहुँच सकता था।

तभी, रावण ने राम को लक्ष्य कर उसकी ओर वाणों की एक माला सी फैंकी और उस माला के वे वाण राम के मस्तक में सहसा ही प्रवेश कर गये; परन्तु राम ने बड़ी तत्परता से उन बाणों को खींच निकाला—फिर, क्रोध मे भर रावण को ओर रौद्रास्त्र को फैंका। और मंत्रों से अकाट्य किया हुआ रौद्रास्त्र रावण के कवच से टकरा कर पृथ्वी में गिर फिर शान्त हो गया। परन्तु रावण को व्यथित बिल्कुल भी न कर सका। यह देख राम ने तब रथ में बैठे हुए रावण के मस्तक को परमास्त्र से बींधना चाहा, मगर रावण ने अपनी चतुराई से उसे भी निष्फल कर फिर महाघोर आसुरास्त्र को प्रकट किया। फिर वह अनेक प्रकार के वाणों की राम पर अविरल वर्षा करने लगा। तभी, राम ने आसुरास्त्र को अपनी ओर आता हुआ देख पावकास्त्र को प्रकट कर उसे मार्ग ही मे काट डाला—फिर, वह भी विविध प्रकार के वाण रावण की ओर फैंकने लगा।

महा भयंकर आसुरास्त्र को निष्फल हुआ देख युद्ध-विजेता रावण के नेत्र धक्-धक् कर जल उठे—तदनन्तर उसने मय का बनाया हुआ भीष्म उज्ज्वल अस्त्र अपने हाथों में उठा लिया—तब, वायु कांपने लगी। पृथ्वी का हृदय धक् से रह गया—और तभी वज्र के समान कठोर और उज्ज्वल वह अस्त्र राम की ओर चला। इस अस्त्र को अपनी ओर आता हुआ देख तब उत्तम अस्त्रों वाले राम ने गांधर्व अस्त्र प्रकट कर मय के बनाये हुए उस भीषण उज्ज्वल अस्त्र को भी काट डाला—तो, रावण ने गहरे क्रोध के वशीभूत हो राम के सभी मर्म स्थानों को सहसा ही बींध

डाला। यह देख कुछ ही दूर पर खड़ा हुआ लक्ष्मण, स्वयं को और अधिक न रोक सका। उसने रावण की ओर कुछ आगे बढ़, सात बाण मार कर उसके ध्वज-दण्ड को काट डाला—फिर उसके सारथि के सिर को--फिर हाथी की सूंड के समान आकार वाले उसके धनुष को भी! तब, विभीषण ने अपनी गदा के प्रहार से उसके घोड़ों को--और रावण वेग पूर्वक रथ में से कूद पड़ा।

फिर, विभीषण पर भयंकर कोप प्रकट करते हुए उसने एक शक्ति उसकी ओर फैंकी; परन्तु लक्ष्मण ने बड़ी चतुराई के साथ बाण मारकर उसे मार्ग ही में बींध डाला—और एक क्षण के उपरान्त ही वह शक्ति टूक टूक हो, चिनगारियां उगलती, पृथ्वी पर गिर पड़ी। तब, रणदुर्जय रावण मानो जल उठा—तत्क्षण उसने फिर ऐसी शक्ति को हाथों में उठा लिया, जिसको कोई भी प्राणी कठिनता से ही सह सकता था। और जब महातेजस्वी रावण वेग पूर्वक उसे घुमाने लगा तो उसका प्रकाश छिटक कर चारों ओर फैलने लगा। यह देख लक्ष्मण ने बड़ी फुर्ती से बाण मार कर तब रावण को ढक सा दिया--और वह उस शक्ति का प्रहार वे विभीषण पर न कर सका। तब, वह लक्ष्मण से कहने लगा--'ओ लक्ष्मण! तू ने विभीषण को बचा दिया--इसलिये, अब इस शक्ति के प्रहार को तू स्वयं वहन कर। मेरे भुजदण्ड रूपी परिघ से छूटी हुई यह शक्ति तेरे हृदय को फाड़, तेरे प्राणों को लेकर ही शान्त होगी।' और इतना कह तब उसने शत्रुघ नेनी वह शक्ति लक्ष्मण के ऊपर फैंक गम्भीर गर्जना की--तो सारा रणस्थल गूंज उठा।

और तभी स्वस्थ होकर फिर युद्ध करने के लिये खड़े होते राम ने

देखा--कुपित हुए रावण द्वारा फैंकी गई वह शक्ति निर्भीक मन वाले लक्ष्मण के विशाल वक्षस्थल पर गिर सहसा ही उसमें प्रवेश कर गई है और उसका आघात सह न सकने के कारण लक्ष्मण पृथ्वी में गिर पड़ा है। और उसकी आंखों में जल भर आया। मगर शीघ्र ही स्वस्थ हो फिर वह लक्ष्मण की ओर दौड़ा; परन्तु लक्ष्मण को खून में लथपथ देख वह फिर रो पड़ा। फिर धीरज धारण कर बलवान् राम ने क्रोध पूर्वक दोनों हाथों की सहायता से उस शक्ति को बाहर खींच लिया--तब, बाणों की बौछार करते हुए रावण पर वह भी क्रोध पूर्वक बाणों की वर्षा करने लगा। मगर रह-रह कर वह लक्ष्मण की दशा का विचार कर बार बार रो उठता था। फिर, युद्ध से विमुख हो वह एक स्थान पर बैठ जोर-जोर से रोने लगा। और उसके ये आंसू फिर उसी समय रुक सके--जब अबकी बार फिर हनुमान द्वारा लाई गई औषधियों को खा सूंघ कर लक्ष्मण एक बार फिर जी उठा।

तब, वह प्रसन्न होता हुआ, रावण के पुराने शत्रु इन्द्र के द्वारा भेजे गये रथ में बैठ, युद्ध करने की अभिलाषा से रावण की ओर फिर बढ़ा और उसके समीप पहुँचते ही उसके ऊपर अनगिनती बाण बरसाने लगा। राम को युद्ध में फिर आशा हुआ देख रावण भी क्रोध में भर गया। तब महाबली राम और तेज के पुंज रावण में रोमहर्षण युद्ध होने लगा। और उसी समय रावण ने गांधर्व अस्त्र, फिर, दैवास्त्र राम की ओर फैंका, परन्तु रणचतुर राम ने पलक मारते उसके दोनों अस्त्रों को काट अपना अतुल बल प्रदर्शन किया। तो रावण मानो जल उठा। तब, उसने अति क्रुद्ध हो राक्षसास्त्र को अपने हाथों में उठा लिया—और जब यह राक्षा-

सास्त्र उसके धनुष से निकल राम की ओर चला—तो, मानो हजारों सर्प मुँह फाड़े हुये राम की ओर दौड़े। और एक बारगी तो राम का कलेजा भी काँप उठा। मगर तुरन्त ही उसने गारुड़ास्त्र को छोड़ रावण के राक्षसास्त्र को निष्प्रभ कर बहुत सुख पाया। तब, अतुल बल वाला रावण अति क्रुद्ध हो राम पर भयंकर बाणों की वर्षा करने लगा। उसने कुछ ही काल में हजार बाणों को छोड़ राम को भयङ्करता में व्यथित कर डाला। फिर, उसने राम के सारथि मातलि को बींधना प्रारम्भ कर दिया—इन्द्र-रथ की स्वर्णमयी ध्वजा को तोड़ डाला—रथ में जुते हुये घोड़ों को बींधना आरम्भ कर दिया—फिर, कुछ काल तक राम अपने धनुष पर बाण भी न चढ़ा पाया। परन्तु जल्दी ही स्वस्थ हो, क्रोध से जलता हुआ, तब वह रावण की ओर देखने लगा—तो, क्रोध के कारण रावण भुनभुना उठा और उसने राम को मार-डालने की इच्छा से एक बड़ा भारी आयुध अपने हाथों में उठा लिया। ठोस लोहे का बना हुआ वह आयुध, वास्तव में, बहुत ही भयंकर, शत्रुनाशक और बड़ा भारी शब्द करने वाला था। और ऐसे उस आयुध को अपने हाथों में थाम, भयंकर गर्जना करने के उपरान्त, तब वह राम से कहने लगा—'हे राम! क्रोध में भर कर यह शूल मैं तेरे ऊपर फेंकता हूं। तू विश्वास कर—किसी के सहायता करने पर भी अब तू जीवित नहीं रह सकता। हे राघव! तूने मेरे बहुत से योद्धाओं को मार डाला है। इस शूल से तुझे मार कर आज मैं उन सभी का बदला तुझसे ले लूँगा।'

और यह कहकर तब उसने वह शूल राम के ऊपर फेंक दिया। भयंकर दिखाव वाला वह शूल महानाद करता हुआ, रावण के हाथों से

छूट, जब राम की ओर चला तो राम फुर्ती के साथ उसके ऊपर बाण बरसाने लगा; परन्तु तब ही उसने देखा—उसके द्वारा छोड़े जाने वाले वे बाण शूल के पास पहुँचते ही जलकर भस्म हो पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं—और यह देख तब, उसने इन्द्र द्वारा समर्पित उस शक्ति को उठा उस शूल की ओर फेंका। और शक्ति से आहत होकर वह शूल टूक-टूक हो पृथ्वी पर गिर पड़ा। फिर, राम आनन्द में भर तीव्र बाण मारकर तब रावण को विकल करने लगा। उस समय रावण को बहुत ही दुख था—आशा और विश्वास का केन्द्र उसका वह शूल, राम के द्वारा फेंकी गई शक्ति से निष्प्रभ हो, भूमि पर पड़ा हुआ तड़प रहा था। मगर कुछ काल पर्यन्त उसका कठिन क्रोध फिर जाग उठा और उसने राम को पीड़ित करने के लिये हजारों बाणों को छोड़ राम को बाणों से ढक सा दिया। तब, अति क्रुद्ध हुआ राम, रावण के बाणों को छिन्न भिन्न कर, अपने कठिन बाणों की सहायता से उसके हृदय को बींधने लगा—राम के दूसरे और साथी उस एकाकी वीर पर तब बड़ी-बड़ी शिलाओं की बौछार करने लगे—और रावण सहसा ही अचेत हो, अपने रथ में गिर पड़ा।

अपने स्वामी की ऐसी दशा देख और रथ के घोड़ों को बहुत ही थका हुआ अनुभव कर स्वामी-भक्त सारथि तब उसके रथ को युद्ध स्थल से कहीं दूर ले गया। मगर कुछ ही क्षणों के उपरान्त जब उसे होश हुआ—तो, स्वयं को युद्ध से विमुख हुआ देख, कुपित हो, सारथि से वह कहने लगा—'अरे दुर्बुद्धि! तूने यह क्या किया? मैं तो स्वभाव से ही युद्ध-प्रेमी हूँ—यह जानते हुये भी तूने शत्रु के सामने से मुझे हटाकर मुझे उसकी नजरों में गिरा दिया। तू कहीं शत्रु से मिल तो नहीं गया है? इस समय

अगर तुझे मेरे गुणों का स्मरण है तो तू शीघ्र ही मेरे रथ को राम के पास ले चल। रावण आज रण में शत्रु का वध किये बिना भवन को नहीं लौटेगा।'

उसके इन वचनों को सुन, क्षमा-याचना करने के उपरान्त, सारथि तब उसके रथ को युद्ध-स्थल की ओर ले चला और अल्प समय के अनन्तर रावण ने देखा—उसका रथ रण-स्थल में पहुँच गया है—तो, उसके हर्ष का पारावार न रहा। फिर, राम के सम्मुख पहुँच कर तो उसका मन आनन्द से भर उठा। महाशत्रु राम को वह निश्चय ही मार डालेगा—उसे विश्वास था। और एक क्षण के उपरान्त तब रावण और राम में अति दारुण द्वैरथ युद्ध होने लगा। उस समय दोनों ओर की सेनाएँ लड़ना भूल, अपलक नेत्रों से इस महाभयंकर युद्ध को देखने लगी। तभी, रावण ने क्रोध म भर, राम के रथ की ध्वजा काटने के निमित्त तीक्ष्ण बाण छोड़े, मगर उसके वे बाण रथ की शक्ति से टकरा कर भूमि पर गिर पड़े। मगर राम ने तभी, बाण मारकर उसके रथ की ध्वजा को काट पृथ्वी पर गिरा दिया। यह देख, रावण के क्रोध की फिर, सीमा न रही। जीवन का मोह त्याग अन्धा-सा बन, तब, वह महाभयंकर युद्ध करने लगा। तदन्तर उसने राम के ऊपर बाणों की झड़ी लगा दी—फिर, वह गदा, परिघ, चक्र और मूसलों की बौछार करने लगा। उसी समय उसने अनेक प्रकार के दिव्य-अस्त्रों की वर्षा भी की—तब, आकाश ढक गया, वायु ठहर गई। और कुछ क्षणों तक राम भी एकटक उसकी फुर्ती को देखता हुआ ठगा-सा रह गया। मगर फिर, असीम क्रोध

मे भर, वह भी रावण के ऊपर असंख्य बाणों की वर्षा करने लगा—तो, आकाश के नीचे एक नया आकाश प्रतीत होने लगा।

इस प्रकार असंख्य बाणों के कारण बन-गये आकाश के नीचे एक दूसरे पर झपटते वे वीर बहुत ही भयानक दीख पड़ रहे थे। दोनों ओर के सारथि आज अपनी चतुराई को भली प्रकार दिखला देना चाहते थे। वे रथों को चक्राकार घुमाते, आगे ले जाते—फिर, पीछे की ओर हटा देते थे। और फिर, आगे बढ़ाते। मगर रथों के इस-उस ओर डोल जाने से उन दोनों वीरों के क्रम में कोई अन्तर नहीं हो पाता था। दोनों ही चतुर धनुर्धारी, युद्ध विशारद और कुशल लड़ाके अपनी तरह के वे स्वयं ही थे। अब तक वीर्यवान् रावण ने महाबली राम को बहुत अधिक घायल कर दिया था। मगर अभी भी राम का साहस अक्षुण्ण बना था। तभी, रावण ने वज्र सरीखे तीक्ष्ण बाण मारकर राम के सारथि मातलि को घायल किया—तो, राम अपने सारथि मातलि का यह तिरस्कार सहन न कर सका। उसने फिर, दूने वेग से रावण के ऊपर बाणों की झड़ी लगा दी। उस समय अपने दिव्य रथ मे बैठा हुआ रावण मानो फुफ-कारने लगा—उसने तुरन्त ही एक बार फिर गदा, मूसल, परिघ और बाणों की वर्षा कर राम के मुंह को फेर दिया। मगर साहसी राम फिर आगे आया और उसने क्रोध मे भर ब्रह्मास्त्र को अपने हाथों में उठा लिया। अपरिमित शक्ति से भर पूर, जीवन का हरण करने वाला, असाध्य, भयंकर सर्प के समान महाभयंकर वह ब्रह्मास्त्र अपने तेज से दमक उठा। और जब उस अनोखे वीर राम ने वेदोक्त विधि से उस बाण को अपने धनुष पर धारण किया—तो, पृथ्वी काँप उठी। तब,

सावधानी के साथ धनुष को खींच, रावण के वक्षस्थल को लक्ष्य कर, उस मर्मघाती वाण को उसने सहसा ही छोड़ दिया—और तभी, दोनों ओर के सैनिकों ने देखा—प्राणघाती और अपनी तरह का केवल एक, ब्रह्मास्त्र नाम से प्रसिद्ध वह वाण, अन्त तक अपनी आन पर दृढ़ रहने वाले महाबली रावण के हृदय में घुस, दूसरी ओर निकलक पृथ्वी में समा गया है। भयंकर वेग वाला, महाकान्तिमान् और महात्मा रावण प्राण और जीवन से शून्य हो, अपने रथ में से लुढ़क भूमि मे गिर पड़ा है।

तो, इस अनुपम युद्ध को अपलक नेत्रो से देखने वाले उसके सैनिक रोते हुये चारो ओर भागे। फिर, वे लंका मे घुस गये—तो, समूची लंका कराह उठी। रो उठी। तब, राम के सैनिक हर्ष में भर गर्जना करते हुये राम की जयजयकार करने लगे। सुग्रीव, विभीषण, लक्ष्मण, अंगद आदि सभी वीर विजयी राम के समीप पहुँच, विजय की इस खुशी मे, उसे बधाई देने लगे। उस समय खून मे लथपथ महातेजस्वी राम मित्रों, बाँधवों और सैनिको से घिरकर बड़ा ही शोभायमान् प्रतीत हो रहा था।

तभी, पृथ्वी में पड़े हुये अपने पिता-तुल्य भाई रावण के मृत-शरीर की ऐसी अवस्था देख विभीषण के नेत्रों मे जल भर आया। तब, जोर-जोर से रोता हुआ वह कहने लगा—'हे वीर! हे समर्थ! हे न्याय चतुर! आज आप स्वर्ण के पलंग को त्याग पृथ्वी मे सो रहे हैं। हे भाई! आपका यह रूप मुझसे देखा नहीं जा रहा है। हे शस्त्रधारियों मे श्रेष्ठ! आपके न रहने से वीरो का आश्रय समाप्त हो गया। सन्मार्ग पर चलने वालो का सेतु नष्ट हो गया। मूर्तिमान् धर्म नष्ट हो गया। बल का खजाना खाली हो गया। हाय! अन्त मे...... ।'

तभी, विभीषण को धैर्य बँधाते हुये राम कहने लगा—'हे सौम्य। महापराक्रमी, उत्साह-सम्पन्न, और मृत्यु की परवाह न कर युद्ध करने वाले तुम्हारे यह बड़े भाई रावण यद्यपि अब पृथ्वी मे पड़े हुये हैं; परन्तु यह सग्राम में अशक्त होकर नष्ट नहीं हुये हैं। जिसने समूचे संसार को वश में कर लिया था, ऐसा बुद्धिमान् यह वीर शोक करने योग्य नहीं है। सर्वदा यही जीतते रहते—ऐसा भला कैसे हो सकता था। यह मरे नहीं—वीरगति को प्राप्त हुये हैं। अतः इनका शोक करना व्यर्थ है।' और विभीषण के आँसू सूख गये। उसका शोक जाता रहा। तभी, उसने सुना—वायु के एक झोंके ने उसके कानो मे उससे कहा—'मूर्ख! दशकंधर मरा नहीं—वह जीवित है। और वह अपने विचारों के लिये संसार में चिरकाल तक जीवित रहेगा। आज नहीं तो कल, समूचा संसार उसकी पूजा करेगा।

समाप्त

———